Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946
94251-01132

Supported by:
Kisaan Helpline
+91-7415538151

READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com

गौरवपूर्ण प्रकाशन-द्वितीय दशक की ओर अग्रसर

मध्य भारत कृषक भारती

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

ISSN-2582-5976

वर्ष-18 अंक-12 ग्वालियर, मार्च-2024 मूल्य 30 रुपए

रेशमी धागों ने महिलाओं के जीवन में लाई खुशियां

कृमिपालन और कोसा उत्पादन से समूह की महिलाएं बनी स्वावलंबी

स्व-सहायता समूह की महिलाएं स्वावलंबन की डगर पर आगे बढ़ रही है। रेशम विभाग के कोसा कृमिपालन से जुड़कर आत्मनिर्भर भी बन गई है। छत्तीसगढ़ के जांजगीर चांपा जिले के विकास खंड पामगढ़ के ग्राम खोरसी की महिलाएं अमरीका साहू, संतोषी साहू, निशा साहू, छटबाई साहू, दुलेशवरी साहू, चंद्रीका साहू ने अर्जुन के पेड़ों पर रेशम से कृमिपालन से कोसाफल उत्पादन का काम शुरू किया है। महिलाओं ने बताया कि पहले अपने खेतों में खरीफ की फसल लेने के बाद सालभर मजदूरी की तलाश में रहते थे। आज महिलाओं की आंखों में सफलता की खुशी साफ नजर आ रही है।

मध्यप्रदेश — छिंदवाड़ा में श्रीअन्न (मिलेट) प्रोत्साहन मेले का शुभारंभ

मध्य प्रदेश शासन द्वारा श्रीअन्न फसलों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से रानी दुर्गावती श्रीअन्न प्रोत्साहन योजना आरंभ की गई है, जिसमें श्रीअन्न उत्पादक किसानों को 1000 रूपये प्रति क्विंटल प्रोत्साहन राशि प्रदान की जायेगी। इसी क्रम में मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव द्वारा दशहरा मैदान छिंदवाड़ा में श्रीअन्न (मिलेट) प्रोत्साहन मेला 2024 का शुभारंभ किया गया।

छत्तीसगढ़ — किसानों के आय दोगुना करने तकनीकि पहलुओं पर हुई चर्चा

छत्तीसगढ़ के कृषि विकास और आदिम जाति कल्याण मंत्री राम विचार नेताम ने अपने दिल्ली प्रवास के दौरान केन्द्रीय कृषि एवं जनजाति कार्य मंत्रीअर्जुन मुण्डा से सौजन्य मुलाकात की। कृषि मंत्री श्री नेताम ने छत्तीसगढ़ के किसानों की भविष्य की चिन्ता करते हुए उनकी आय दोगुनी करने के लिए केन्द्रीय मंत्री अर्जुन मुण्डा से तकनीकि पहलुओं पर विस्तारपूर्वक चर्चा की।

श्री गणेशाय नमः
श्री सॉंवलिया सेठ

किसान कृषि सेवा केन्द्र

Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com
7692967419 9109726855

हमारी सेवाऐं:-

सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौप, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर, कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।

कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।

उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।

स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company

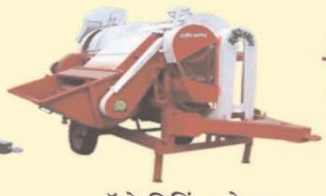

कृषि दर्शन®
खेत-खलिहान का राजा

1988

सुदर्शन इण्डस्ट्रीज
विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882
वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

करोड़ों खर्च के बाद न नहर है न ही सिंचाई....

प्यास-पलायन-पानी के कारण कुख्यात बुंदेलखंड में हजार साल पहले बने चन्देलकालीन तालाबों को छोटी सदानीर नदियों से जोड़ कर मामूली खर्च में कलंक मिटाने की योजना आखिर हताश होकर ठप्प हो गई।

ध्यान दें बीते ढाई दशकों से यहां केन और बेतवा नदियों को जोड़कर इलाके को पानीदार बनाने के सपने बेचे जा रहे हैं। हालांकि पर्यावरण के जानकार बताते रहे हैं कि इन नदियों के जोड़ से बुंदेलखंड तो घाटे में रहेगा लेकिन कभी चार हजार करोड़ की बनी योजना अब 44 हजार 650 करोड़ की हो गई है। सन् 2010 में पहली बार जामनी नदी को महज सत्तर करोड़ के खर्च से टीकमगढ़ जिले के पुश्तैनी विशाल तालाबों तक पहुंचाने और इससे 1980 हेक्टेयर खेतों की सिंचाई की योजना तैयार की गई। इस योजना में न तो कोई विस्थापन होना था और न ही कोई पेड़ काटना था। सन? 2012 में काम भी शुरू हुआ लेकिन आज करोड़ों खर्च के बाद न नहर है न ही सिंचाई।

विडंबना, देश की सभी बड़ी परियोजनाएं कभी भी समय पर पूरी होती नहीं हैं। उनकी लागत बढ़ती जाती है और जब तक वे पूरी होती हैं, उनका लाभ, व्यय की तुलना में गौण हो जाता है। यह भी तथ्य है कि तालाबों को बचाना, उनको पुनर्जीवित करना अब अनिवार्य हो गया है और यह कार्य बेहद कम लागत का है और इसके लाभ अपार हैं। केन-बेतवा नदी को जोड़ने की परियोजना को फौरी तौर पर देखें तो स्पष्ट हो जाता है कि इसकी लागत, समय और नुकसान की तुलना में इसके फायदे नगण्य ही हैं। केन और बेतवा दोनों का ही उद्गम स्थल मध्यप्रदेश है। दोनों नदियां लगभग समानांतर एक ही इलाके से गुजरती हुई उत्तर प्रदेश में जाकर यमुना में मिल जाती हैं। जाहिर है कि जब केन के जल ग्रहण क्षेत्र में अल्प-वर्षा या सूखे का प्रकोप होगा तो बेतवा की हालत भी ऐसी ही होगी। वैसे भी केन का इलाका पानी के भयंकर संकट से जूझ रहा है। सन् 1990 में केंद्र की एनडीए सरकार ने नदियों के जोड़ के लिए एक अध्ययन शुरू करवाया था और इसके लिए केन बेतवा को चुना गया था। सन् 2007 में केंद्रीय पर्यावरण मंत्रालय ने इस परियोजना में पन्ना नेशनल पार्क के हिस्से को शामिल करने पर आपत्ति जताई।

सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)
रामप्रकाश रघुवंशी
98272-78063
***
नरसिंहपुर (म.प्र.)
नवीन शुक्ला: 89894-36330

मुंगावली (म.प्र.)
भगवानदास चौबे
96854-88453
बलिया (उ.प्र.)
आर.एन. चौबे-94535-77732
पश्चिम बंगाल
राजेश नायक-98831-57482

उड़ीसा
समीर रंजन नायक
70422-31678
***
हापुड़ (उ.प्र.)
मयंक गौड़: 83848-66823

नारी तू नारायणी...

नारी तू नारायणी, तू ही भवतारिणी ।
उमा-रमा-ब्रह्माणी, तू ही पालनहारिणी।
नया अर्थ रिश्तों को देती, तू ही देती भक्ति।
नौ दुर्गा के सब रूपों में, तेरी ही हैं शक्ति।
तुझमें मीरा, तुझमें राधा,
तुझमें जीजामाता ।
तेरी कोख का आश्रय
पाकर जग में आए विधाता।
माँ, बहन, बेटी, पत्नी बन, सदा निभाती नाता।
तुझसे ही तो देह पोषित हो, रक्त शिरा में आता।
मानवता की मूर्तिवती तू भाव-भव्य-भूषण भंडार।
सहनशीलता, त्याग, दया, क्षमा, प्रेम की तू आधार ।
जननी बन तू सदा-सदा से, नर का काज संवारे।
गौ-गीता-गंगा-गायत्री में भी, सब तेरा रूप निहारे ।
कह न सके इस जग में कोई तुझसे नहीं है नाता ।
भरतवंश के अनुयायी कहते धरती को भी भारतमाता।
ये सकल शास्त्र कहते हैं, नर से नारी का शब्द बड़ा।
ओढ़रदानी साम्ब सदाशिव, भिक्षा लेने स्वयं खड़ा ।
हैं चरित्र बलवान तपोबल इसका सच्चा है।
इसकी गोद में त्रिदेव खेलते बनकर छोटा बच्चा है।
कोई तुझको कमजोर समझे ये उसकी लाचारी।
हमने देखी हैं जगदम्बे तेरी सिंह सवारी।
रणचंडी बनकर तूने दुष्टों का संहार किया।
महाकाल भी चरणों में आए, जब तूने हुंकार किया।
संकल्प-शक्ति के आगे, मौत भी तुझसे हारी।
कान्हा के छप्पन भोगो पे हैं आज भी तुलसी भारी ।।

डॉ. खुशबू राठी
रतलाम (म.प्र.)

Online मंगाएं साहित्य

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 22 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 23 से 28 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है। -संपादक

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मध्य भारत कृषक भारती

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें
94251-01132 0751-4070802

वार्षिक ₹ 400 द्विवार्षिक ₹ 750
पंचवार्षिक ₹ 1500

वर्ष 18 अंक 12 ग्वालियर, मार्च 2024 मूल्य ₹ 30/-

: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक
राजू गुर्जर (MJC)
94251-01132
94245-22090

❖

प्रसार/मार्केटिंग टीम
डी.के. बरार
91791-85002, 70247-93010
महेश अहिरवार: 94251-48365
हरिओम शर्मा: 94259-46038

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय
***
डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव
(Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
***
डॉ. आर.के.एस. तोमर
केविके दतिया, राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि. ग्वालियर (म.प्र.)
***
डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण), डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)
***
डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय (नालन्दा), बिहार कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर
***
डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
***
डॉ. योगेन्द्र कौशिक (प्रगतिशील कृषक)
ग्राम अजडावदा जिला उज्जैन (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)
***
तपस्या तिवारी
पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
***
बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)
***
श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- आधुनिक खेती में ड्रोन तकनीक का महत्व 07
- ...सरसों में सफेद तना सड़न का प्रमुख रोग एवं प्रबंध 08
- प्रधानमंत्री किसान ऊर्जा सुरक्षा एवं उत्थान महाभियान... 09
- ग्रीष्मकालीन सोयाबीन की खेती, कम लागत में अधिक लाभ 10
- चने की उन्नत खेती 11
- फसल सुरक्षा हेतु जैविक विधियां 12
- पशु अवयवों के संरक्षण का एक नया तरीका: प्लास्टिनेशन 13
- ग्रीष्म ऋतु में दुधारू पशुओं का प्रबंधन 14
- मधुमक्खी के रोग, कीट और उनका प्रबंधन 15
- बकरियों की महामारी अथवा पीपीआर रोग: लक्षण एवं रोकथाम 16
- गेहूँ की फसल में खरपतवार नियंत्रण 17
- रागी (फिंगर मिलेट) का इतिहास एवं उसकी विभिन्न क्षेत्रों में महत्व 18
- अंतरिम बजट और किसान/कृषि जगत में डिजिटल क्रांति 19
- पशुओं में सांप के काटने का प्रबंधन और उपचार 20
- आलू की फसल में लगने वाले प्रमुख रोग एवं उनका नियंत्रण 21

उत्तर प्रदेश

- जैव उर्वरक प्रसिद्ध क्यों नहीं है? 22
- किण्वित डेयरी उत्पादों में मौजूद सूक्ष्मजीवों का मानव... 23
- गन्ने में जैव उर्वरकों का प्रयोग 24
- श्री अन्न: परिचय एवं उपयोगिता 25
- बागवानी फसलों में पार्थेनोकार्पी का महत्व 26
- उत्तर भारत में गाजर की उन्नत खेती 27
- केंचुआ: खाद के निर्माण की विधि एवं उसका कृषि में उपयोग 28
- बाजरा: आधुनिक स्वास्थ्य हेतु प्राचीन अनाज की पुन: खोज 29
- गृह विज्ञान विस्तार के माध्यम से महिलाओं को सशक्त बनाना... 30
- वर्तमान परिवेश में टिकाऊ कृषि है एक आशा की किरण 31
- कृषि-प्रौद्योगिकियां: भारतीय कृषि में परिवर्तन 32
- रजनीगंधा फूल की व्यावसायिक खेती 33
- समुदाय विज्ञान विस्तार के प्रयासों के माध्यम ... 34
- सब्जी वर्गीय फसलों में संरक्षित खेती की भूमिका 35
- किसान भाई उत्तम एवं लाभप्रद फसलों का कैसे करें चयन 36
- बदलते परिवेश में जलवायु स्मार्ट कृषि (सीएसए)... 37
- रंगीन कपास: कपड़ा उद्योग का भविष्य 38
- प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास:... 39
- फसल चक्रण रणनीतियां: पोषक तत्व चक्रण... 40
- स्वास्थ्य हेतु पोषण संबंधी शिक्षा और पाक कौशल 41
- बुंदेलखंड में उन्नत सरसों उत्पादन कैसे करें किसान 42
- एकीकृत कृषि प्रणाली: किसानों की आय बढ़ाने का एक विकल्प 44
- कृषि पर जलवायु परिवर्तन प्रभाव और उनका समाधान 45
- श्री अन्न बीज उत्पादन तकनीक 46
- पीएम विश्वकर्मा योजना की पात्रता और लाभ 47
- ड्रोन की कृषि में बढ़ती उपयोगिता 48
- आम फसल में लगने वाले कीट एवं रोग का प्रबंधन 49
- एलोवेरा की खेती से किसानों की आय में हो सकती है वृद्धि 50
- गन्ने की उत्पादन और इथेनॉल: स्वच्छ ऊर्जा का एक नया पहलू 51
- मानव जीवन पर विटामिन का महत्व एवं होने वाले लाभ 52
- जायफल एवं इसके औषधीय गुण 53
- आलू का ब्लैक हार्ट विकार रोग के प्रमुख कारण, प्रभाव तथा उसका प्रबंधन 54
- कृषि में क्रांतिकारी परिवर्तन लाएगी कृत्रिम बुद्धिमत्ता... 55
- बनाएं मशरूम के अनेकों व्यंजन एवं विधि 56
- चुकंदर की उत्पादन तकनीक 58
- मनमोहक गुडकारी शहतूत 59
- गुग्गुल की खेती 60
- हाइब्रिड पौधपति तकनीकों में प्रगति विकसित और सुधारित पौधशास्त्र 61
- ग्रामीण विकास में कृषि विज्ञान केन्द्र की भूमिका 62

राजस्थान

- जानिए..क्या है नई शिक्षा नीति 63
- एक राष्ट्र, एक उर्वरक योजना 64
- रागी की खेती 65
- वृक्षायुर्वेद क्या है और वृक्षायुर्वेद से ग्लोबल वार्मिंग का समाधान 66
- मटर में लगने वाले प्रमुख रोग, लक्षण एवं प्रबंधन 67

मणिपुर

- ज्वार औषधीय गुणों से भरपूर सुपरफूड 68

हरियाणा

- मछली संरक्षण: शेल्फ-जीवन विस्तार तकनीकें 69
- साइट्रस कैंकर: नींबू की सबसे विनाशकारी बीमारी 70
- भारत की लकड़ी की विरासत: महत्वपूर्ण पेड़ों... 71

बिहार

- धृतकुमारी या ऐलोवेरा के औषधीय गुण एवं उत्पादन तकनीक 72

केरल

- विक इरीगेशन (बाती सिंचाई)-... 73

उत्तराखण्ड

- पर्वतीय क्षेत्रों में राई की उन्नत खेती 74
- बीज संरक्षण के लिए जैविक तरीके 75

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

केविके डिण्डौरी द्वारा औषधीय फसलों पर प्रशिक्षण

डिण्डौरी। जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय के पादप एवं कार्यिकी विभाग एवं कृषि विज्ञान केन्द्र डिंडोरी के सम्मिलित प्रयास द्वारा विकासखंड डिंडोरी के ग्राम खिरसारी में एक दिवसीय प्रशिक्षण का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का आयोजन वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख डॉ हरीश दीक्षित एवं डॉ पीएल अंबुलकर के मार्गदर्शन एवं डॉ गीता सिंह के नेतृत्व में हुआ। कृषि

विश्वविद्यालय में अखिल भारतीय समन्वित औषधिय, सुगंधी एवं पान परियोजना के अंतर्गत इस प्रशिक्षण को देने के लिए वरिष्ठ प्राध्यापक डा विभा पांडे एवं वैज्ञानिक उद्यानकी डॉ चंद्रशेखर पांडे का आगमन हुआ।

डॉ. विभा पांडे ने बताया कि इस क्षेत्र की जलवायु व भूमि औषधिय फसलो के लिए अनुकूल है। यहां अश्वगंधा, शतावरी एवं ग्वारपाठा की खेती सफलता पूर्वक की जा सकती है साथ ही सभी के उपयोग पर विस्तार से चर्चा की। डॉ चंद्रशेखर पांडे ने किसानों को बताया कि इन फसलों के बीज व इनमें लगने वाली आदान सामग्री कृषि विश्वविद्यालय के माध्यम से किसानों को निःशुल्क उपलब्ध कराई जावेगी जो किसान इच्छुक है वह अपना पंजीयन करालें। कृषि विज्ञान केंद्र की वैज्ञानिक डॉ गीता सिंह ने कृषकों को इस खेती के फायदे एवं दूरगामी लाभों से अवगत कराया एवं व्हाट्सएप पर एक समूह बनाकर सभी कृषकों को उसमे जुड़े रहकर संवाद बनाए रखने का आग्रह किया। अवधेश पटेल ने ट्यूबर एवं कंदो की जानकारी दी एवं उनका औषधीय महत्व बताया। प्रशिक्षण में सेवा निवृत्त सहायक संचालक महिला एवं बाल विकास विभाग श्रीमती उदयवती टेकाम ने इस प्रशिक्षण की महत्ता पर जोर देते हुए किसानों को इन योजनाओं का लाभ लेने के लिए प्रेरित किया। कार्यक्रम को सफल बनाने में प्रगतिशील कृषक श्री गिरीश वास्पे का अमूल्य सहयोग प्राप्त हुआ। इस अवसर पर कृषि विश्वविद्यालय की ओर से कृषकों को उन्नत कृषि यंत्र एवं खेती में काम आने वाली सामग्री का वितरण किया गया। सभी को तकनीकी पत्रक जवाहर कृषि संदेश का वितरण किया गया। प्रशिक्षण में वृहद संख्या में कृषक शामिल हुए एवं लाभान्वित हुए।

फसल विविधीकरण परियोजना अंतर्गत प्रशिक्षण कार्यक्रम सम्पन्न

शहडोल। समन्वित कृषि प्रणाली परियोजना जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय जबलपुर के तत्वावधान में दो दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन विस्तार कार्यकर्ताओं एवं आदान विक्रताओं हेतु आयोजित किया गया। प्रशिक्षण का मुख्य उद्देश्य परंपरागत फसलों के साथ फसल विविधीकरण को बढ़ावा देना है । कार्यक्रम का शुभारंभ फसल विविधीकरण परियोजना प्रभारी डॉ नम्रता जैन एवं क्षेत्रीय कृषि अनुसंधान संस्थान प्रमुख डॉ डी एन श्रीवास ने किया । डॉ नम्रता जैन ने कहा कि फसल विविधीकरण विषम परिस्थितियों में बेहतर उत्पादन एवं आर्थिक लाभ प्राप्त करने का उचित विकल्प है। डॉ अभिजीत दुबे ने बताया कि एक फसल किस्म को लगाातार लंबे समय तक लेने से कीट व्याधि की समस्या के साथ साथ मृदा की उर्वरता पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है ।

'फसल संगोष्ठी से किसानों को मिलता है तत्काल समाधान'

जबलपुर। जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय,जबलपुर के कुलपति डॉ. प्रमोद कुमार मिश्रा के मुख्यआतिथ्य एवं खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर के निदेशक डॉ. जे.एस.मिश्रा के विशिष्ट आतिथ्य में कृषि विज्ञान केन्द्र, जबलपुर एवं दूरदर्शन मध्यप्रदेश के संयुक्त तत्वाधान में फसल संगोष्ठी का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में मुख्यअतिथि की आंसदी से कुलपति डॉ. प्रमोद कुमार मिश्रा ने अपने उद्बोधन में विश्वविद्यालय के अनुसंधान और विस्तार कार्यक्रम के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान की। इस दौरान कुलपति डॉ. पी.के. मिश्रा ने कहा कि ऐसे कार्यक्रम कृषकों के लिये मील का पत्थर साबित होंगे। इसमें विभिन्न विषयों के कृषि वैज्ञानिक एक मंच पर बैठकर किसानों के साथ चर्चा कर खेती किसानी की समस्यओं एवं उनके प्रश्नों का तत्कालिक समाधान देते हैं। जिससे किसान भाईयों को खेती किसानी संबंधी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती। साथ ही दूरदर्शन के माध्यम से देशभर के किसान भाई सहित अन्य लोग खेती किसानी से जुड़ी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त करते हैं। कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर के निदेशक डॉ. जे.एस.मिश्रा ने फसलों के खरपतवार प्रबंधन के महत्व पर प्रकाश डाला।

सरसों प्रक्षेत्र दिवस का आयोजन

दतिया। कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया द्वारा निकरा परियोजनांतर्गत अंगीकृत ग्राम बरौदी में सरसों प्रक्षेत्र दिवस का आयोजन किया गया। केन्द्र द्वारा निकरा परियोजनांतर्गत सरसों की उन्नत प्रजाति डीआरएमआर 1165-40 के प्रदर्शन कृषकों के खेतों पर लगाये गये थे। कार्यक्रम में निकरा परियोजना प्रभारी डॉ. ए.के. सिंह ने किसानों को सरसों में लगने वाले कीट-रोग के बारे में विस्तार से बताया साथ ही उन्होंने कहा सरसों की यह किस्म जिले की जलवायु के अनुकूल है इसलिए किसान भाई इसका बीज अगले वर्ष के लिये रखें एवं अपने आसपास के ग्रामों के किसान भाईयों को भी बीज उपलब्ध करावें। केन्द्र के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. अवधेश सिंह ने सरसों की फसल की आर्थिक विश्लेषण के बारे में किसानो को विस्तार से बताया साथ ही उन्होंने सरसों की उन्नत प्रजाति डीआरएमआर 1165-40 की विशेषताएं बताते हुए उत्पादन तकनीकी की परिचर्चा की। कार्यक्रम के वैज्ञानिक डॉ. रूपेश जैन ने किसानों को वर्तमान मौसम को देखते हुये पशुपालन संबंधी जानकारी दी। कार्यक्रम में शोध सहायक पवन दांगी सहित 60 कृषकों ने भाग लिया।

क्लस्टर प्रदर्शन के अंतर्गत कृषक प्रशिक्षण एवं भ्रमण

रीवा। कृषि महाविद्यालय, रीवा के अधिष्ठाता प्रो. एसके त्रिपाठी के मार्गदर्शन एवं कृषि विज्ञान केंद्र रीवा मप्र के प्रमुख डॉ. एके पांडेय के निर्देशन में केंद्र के मृदा वैज्ञानिक एके पटेल, वैज्ञानिक डॉ. बी.के. तिवारी एवं पौध संरक्षण वैज्ञानिक डॉ. अखिलेश कुमार, ग्राम ब्यौहरा, रीठी और लक्ष्मणपुर रीवा में आयोजित कृषक प्रशिक्षण एवं भ्रमण कार्यक्रम में भाग लिया। कार्यक्रम में वैज्ञानिकों ने चना, सरसों, मसूर, आलसी, अरहर, प्याज एवं गेहूँ में खाद, सिंचाई, मृदा स्वास्थ्य, कीट एवं रोग प्रबंधन पर जानकारी दी। इस अवसर पर गांव के प्रगतशील किसान उपस्थित थे।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

बिहार कृषि विश्वविद्यालय सबौर की फिल्म परिवर्तन को राष्ट्रीय पुरस्कार

भागलपुर। बिहार कृषि विश्वविद्यालय सबौर के मीडिया सेंटर की ओर से बनाई गई फिल्म परिवर्तन को राष्ट्रीय कृषि विस्तार प्रबंध संस्थान (मैनेज) ने राष्ट्रीय पुरस्कार दिया है। फिल्म को गुरुवार को भारत सरकार के अतिरिक्त कृषि सचिव मो. फैयाज किदवई और मैनेज के डायरेक्टर जनरल चंद्रशेखर ने पुरस्कृत किया। इस फिल्म में विश्वविद्यालय ने आईसीटी के माध्यम से बिहार में कृषि क्षेत्र में किए गए परिवर्तन को दिखाया है। कुलपति डॉ. डीआर सिंह ने कहा कि फिल्म में दिखाया गया है कि कैसे विश्वविद्यालय ने अपनी हाईटेक प्रसार प्रणाली से बिहार के है। इस राष्ट्रीय पुरस्कार ने एक बार फिर बीएयू कि उत्कृष्टता सिद्ध की है। इससे पूर्व भी विश्वविद्यालय को आईसीटी के लिए राष्ट्रीय ई-गवर्ननेंस अवार्ड, यहां से संचालित सामुदायिक रेडियो को राष्ट्रीय अवार्ड और उम्मीद को राष्ट्रीय पुरस्कार मिल चुका है। यूजीसी के सीईसी ने भी पराली प्रबंधन पर बनी फिल्म को सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार देने की घोषणा की है।

ग्राम पंचायत सचिवों ने सीखी प्राकृतिक खेती

गोविंदनगर/नर्मदापुरम्। कृषि विज्ञान गोविंदनगर द्वारा बनखेड़ी ब्लॉक में प्राकृतिक खेती पर प्रशिक्षण आयोजित किया गया। कार्यक्रम की शुरुआत मां सरस्वती के समक्ष दीप प्रज्वलन से कि गई इस अवसर पर उन्नतशील कृषक एवं न्यास कार्यकर्ता पारथ जी, केंद्र के प्रभारी डॉ. संजीव कुमार गर्ग, प्राकृतिक खेती प्रभारी डॉ. देवीदास पटेल, कीट वैज्ञानिक ब्रजेश कुमार नामदेव, एग्रोनॉमिस्ट डॉ. राजेंद्र पटेल, फार्म मैनेजर पंकज शर्मा एवं मृदा विशेषज्ञ डॉ. प्रवीण कुमार सोलंकी उपस्थित रहे।

केविके गोविंदनगर द्वारा बनखेड़ी ब्लॉक में प्रशिक्षण

कार्यक्रम को आगे बढ़ते हुए डॉ. गर्ग ने कार्यक्रम के अध्यक्ष पारथ पटेल को श्रीफल से सम्मानित किया, इसके बाद केंद्र के प्रभारी डॉ. गर्ग ने कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा प्राकृतिक खेती में किया जा रहे हैं सभी कार्यो का विस्तृत जानकारी प्रदान करते हुए कहा कि कृषि विज्ञान केंद्र गोविंदनगर को जैविक खेती आधारित कृषि विज्ञान केंद्र है कृषि विज्ञान केंद्र के प्रक्षेत्र पर पूर्णतया प्राकृतिक विधि से फसल का उत्पादन किया जाता है एवं किसानों को प्राकृतिक खेती के प्रति जागरूक किया जाता। प्रशिक्षण के समन्वयक डॉ. आकांक्षा पांडे ने कहा कि ग्राम पंचायत के सचिव ग्रामीण किसानों से सतत संपर्क में रहते हैं साथ ही वे स्वयं किसान हैं इस कारण से उन्हें प्राकृतिक खेती के बारे में जानकारी होना अत्यंत आवश्यक है इसी को ध्यान मे रखते हुए कृषि विज्ञान केंद्र गोविन्दनगर में सचिवों का प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया गया। प्रशिक्षण को आगे बढ़ाते हुए डॉ प्रवीण ने बताया की मृदा परिक्षण क्यों जरुरी है। मृदा मे पोषक तत्व प्रबंधन कैसी करें इस विषय पर बृजेश नामदेव ने मित्र कीटों के बारे में विस्तार से जानकारी देते हुए कहा की हमने अत्याधिक रासायनिक उर्वरक एवं कीटनाशक का उपयोग कर धरती के मित्रो कीट जैसे केचुए को खत्म कर दिया है इसे बचाने के लिए प्राकृतिक खेती अति आवश्यक है साथ में बायो एजेंट निर्माण की भी चर्चा की गई। अंतिम सत्र मे प्रक्षेत्र प्रबंधक पंकज शर्मा ने किसान बंधुओ को प्राकृतिक खेती की महत्व बताते हुए कहाँ की प्राकृतिक खेती को देसी गाय से 30 एकड़ (12 हे.) तक की खेती संभव हो सकती है। कृषि की इस पद्धति में फसल में किसी भी रासायनिक खाद, जैविक खाद या दवाइयों की आवश्यकता नहीं होती है, बल्कि इस पद्धति के तहत खेत में जीवाणुओं का कल्चर डाला जाता है तथा फसल में प्रयोग होने वाला कोई भी इनपुट बाजार से नहीं खरीदना पड़ता है। इस पद्धति में देसी गाय के गोबर और गोमूत्र से घर पर ही बहुत कम समय में ऐसे इनपुट तैयार किए जाते हैं जिनके प्रयोग से खेत में जीवाणु और केंचुओं की अप्रत्याशित वृद्धि होती है। यह जीवाणु वायुमंडल में विद्यमान 78% नाइट्रोजन को पौधे की जड़ों और भूमि में स्थिर करते हैं तथा फसल के लिए दूसरे पोषक तत्वों की उपलब्धि भी बढ़ाते हैं। प्राकृतिक खेती के इनपुट्स को सही क्रियाओं और समन्वय के साथ प्रयोग किया जाता है तो आरंभ से ही फसल की पूरी पैदावार मिलने लगती है।

01/2023-24

प्राकृतिक खेती पर दो दिवसीय कृषक प्रशिक्षण कार्यक्रम

टीकमगढ़। कृषि विज्ञान केंद्र, टीकमगढ़ द्वारा प्राकृतिक खेती पर दो दिवसीय कृषक प्रशिक्षण ग्राम लुहर्रा एवं लडवारी में आयोजन किया गया। यह कृषक प्रशिक्षण प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रमुख डॉ. बी.एस. किरार, वैज्ञानिक डॉ. आर. के. प्रजापति, डॉ. एस.के. सिंह, डॉ. यू.एस. धाकड़, डॉ.सुनील कुमार जाटव, डॉ. आई.डी. सिंह एवं जयपाल छिगारहा द्वारा दिया गया। डॉ. बी.एस. किरार ने प्रशिक्षण के दौरान प्राकृतिक खेती एवं रासायनिक युक्त खेती में अन्तर को समझाया और वर्तमान में प्राकृतिक खेती की आवश्यकता क्यों पड़ रही है और रासायनिक युक्त खेती का मानव स्वास्थ्य, मिट्टी, जल एवं वायु की गुणवत्ता पर पड़ने वाले दुष्परिणामों से अवगत कराया गया और बताया कि मनुष्य को लंबी आयु एवं स्वस्थ जीवन के लिए प्राकृतिक / जैविक खेती करना नितांत आवश्यक है

आधुनिक खेती में ड्रोन तकनीक का महत्व

दीपाली सिंह शोध छात्र (सस्य विज्ञान)
उमेश पटले (अतिथि व्याख्याता) सस्य विज्ञान, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट सतना (म.प्र.)

कृषि क्षेत्र में श्रम की कमी के युग में ड्रोन तकनीकी के साथ-साथ सटीक कृषि के महत्व को सकारात्मक रूप से स्वीकार किया हैं। कुछ साल पहले तक ड्रोन तकनीकी गरीब कृषक समुदाय के लिए बहुत ही दुर्गम सुविधा प्रतीत हो रही थी, लेकिन धीरे-धीरे स्थिति बदल गई है और अब यह मध्यम वित्तीय इनपुट के साथ आसानी से प्राप्त होने वाली तकनीकी हैं। कृषि क्षेत्र में ड्रोन तकनीक तेजी से लोकप्रिय हो गई है। इसके द्वारा नवीनतम उन्नतियों ने अनेक क्षेत्रों में बदलाव का संकेत दिया है। ड्रोन किसानों को कई प्रकार से लाभ प्रदान करते हैं, जैसे - बढ़ती हुई दक्षता, बेहतर पैदावार और कम लागत आदि शामिल हैं।

ड्रोन एक रोबोटिक वाहन है जो विभिन्न उद्देश्यों के लिए दूर से संचालित हो सकता है। शुरुआत में इसे मुख्य रूप से सैन्य उपयोग के लिये विकसित किया गया था लेकिन धीरे - धीरे यह जीवन में विभिन्न पहलुओं में फैल गया है। कई देशों में किसी न किसी कारण से ड्रोन तकनीक का उपयोग कर रहा है। ड्रोन एक मानव रहित है, यह सॉफ्टवेयर नियंत्रित तकनीक से उड़ान भर सकता है । ड्रोन खेती राहत और बचाव कार्य, मौसम की निगरानी और भविष्यवाणी, यातायात की निगरानी और फोटोग्राफी में भी उपयोग होते हैं। ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम और ऑनबोर्ड सेंसर ड्रोन तकनीकी का हिस्सा है। आधुनिक ड्रोन दो ग्लोबल नेविगेशन सेटेलाइट सिस्टम के साथ जुड़े हुए हैं। आधुनिक ड्रोन जीएनएसएस और नॉन सैटेलाइट मोड में भी उड़ान भर सकते हैं।

कृषि क्षेत्र में ड्रोन के लाभ

ड्रोन का उपयोग कृषि क्षेत्र में उर्वरक और पानी का सही नियोजन, खेत और पौधों की निगरानी और मॉनीटरिंग कार्य प्रबंधन कई कार्यों के लिए किया जा सकता है।

बेहतर दक्षता - ड्रोन भूमि के बड़े क्षेत्रों को जल्दी और कुशलता से कवर कर सकते हैं जिससे किसानों को डेटा एकत्रित करने और फसलों की अधिक प्रभावी ढंग से निगरानी करने में सहायता मिलती है। इससे समस्याओं को शीघ्र पहचान करने में मदद मिलती है जिससे तेजी और अधिक प्रभावी ढंग से उपयोग किया जा सकता है।

फसल की पैदावार में वृद्धि-फसल के स्वास्थ्य संबंधित डेटा को एकत्रित करने हेतु ड्रोन का उपयोग किया जा सकता है। जिससे किसानों को उन क्षेत्रों की भी पहचान करने में मदद मिलती है, जिन पर ध्यान देने की आवश्यकता है। इन मुद्दों का समाधान करके, किसान अपनी फसल की पैदावार में सुधार कर सकते हैं और अपना मुनाफा बढ़ा सकते हैं।

कम लागत - ड्रोन खेत के उन क्षेत्रों की पहचान करके लागत कम करने में मदद कर सकते हैं, जैसे- शारीरिक श्रम की आवश्यकता को कम करना साथ ही साथ खरपतवार नाशको कीटनाशकों, और अन्य रसायनों के उपयोग को कम करने में सहायक होते हैं और कम लागत से अधिक उत्पादन भी प्राप्त कर सकते हैं।

बेहतर सटीकता-ड्रोन तकनीक का उपयोग करके किसान सीधे और सटीक खेती कर सकते है, ड्रोन कैमरे के माध्यम से खेतों की ऊँचाई और स्थिति को माप कर किसानो को बेहतर से समझने का सुझाव दिया जा सकता है। इससे वे अपनी खेती की सभी देखभाल कर सकते हैं और समय पर आवश्यक क्रियाएं कर सकते हैं। ड्रोन के उपयोग से सटीक

खेती करने से किसान को अपने खेत की उपज अधिक बनाने में मदद होती है और इससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होता है।

पशुधन ट्रैकिंग - ड्रोन के माध्यम से किसान केवल न अपनी फसलों पर नजर रखते हैं, बल्कि पशुओं की भी देख सकते हैं। थर्मल सेंसर तकनीकी से खोए हुए जानवर खोजें भी जा सकते हैं।

कृषि क्षेत्र में ड्रोन तकनीक अपनाने की चुनौतियां

ज्ञान और प्रशिक्षण का अभाव - किसानों के पास ड्रोन को प्रभावी ढंग से संचालित करने हेतु आवश्यक ज्ञान या प्रशिक्षण का अभाव होता है। इससे उनके लिए इस तकनीक को अपनाना मुश्किल हो सकता है, क्योंकि उन्हें इसका उपयोग करने की क्षमता पर भरोसा नहीं होता।

लागत - ड्रोन महंगे होने से कई किसान के पास इस तकनीक में निवेश करने के लिए वित्तीय संसाधन नहीं होते हैं।

नियामक बाधाएं-कृषि में ड्रोन के उपयोग में नियामक बाधाएं हो सकती है। आवश्यक परमिट प्राप्त करना और हवाई नियमों का पालन करना, समय लेने वाले हो सकता है और इससे कुछ क्षेत्रों में ड्रोन तकनीक का प्रभाव सीमित हो सकता है।

सुरक्षा संबंधित समस्याएं-जो भी डेटा एकत्रित किए जाते हैं, ड्रोन हैकिंग के लिए संवेदनशील हो सकते हैं। इससे कृषि सूचना की गोपनीयता और सुरक्षा पर प्रभाव पड़ सकता है।

नौकरी छूटने का डर-कृषि में ड्रोन तकनीकी का व्यापक अभ्यास करने से कुछ कामकाजी लोगों को नौकरी खोने का संभावना है, विशेषकर उन कार्यों में जो परंपरागत रूप से मैन्युअल रूप से किए जाते थे। कार्यकाल कम होने के कारण कृषि रोजगार में कमी होती है।

पर्यावरणीय प्रभाव-ड्रोन हार्डवेयर का उत्पादन और निर्माणाधीन करना पर्यावरणीय प्रभाव डाल सकता है। इसके अलावा, ड्रोन का उपयोग यदि सही ढंग से नहीं किया जाता है तो इससे इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट हो सकते हैं एवं मशीनरी का प्रयोग प्रदूषण को बढ़ावा देता है। ग्रामीण भारत में कृषि क्षेत्र में ड्रोन तकनीक को अपनाना अभी शुरुआती चरण में है । जहाँ इस तकनीकी में रुचि है वही नौकरी छूटने और ज्ञान एवं प्रशिक्षण की कमी को लेकर चिंताएं भी हैं। हालांकि, इन चुनौतियों का समाधान करने और ड्रोन प्रौद्योगिकी को अपनाने का प्रोत्साहित करने के प्रयास चल रहे हैं।

निष्कर्ष

ड्रोन तकनीक ने कृषि क्षेत्र में एक नवीन दौर का संकेत दिया है। यह कृषि क्षेत्र में किसानों को कई प्रकार के लाभ प्रदान करते हैं, जिसमें बढ़ी हुई दक्षता, बेहतर पैदावार और कम लागत शामिल हैं। हालांकि, इस नौकरी छूटने और ज्ञान और प्रशिक्षण की कमी के बारे में भी चिंताएं हैं जो किसानों को इस तकनीक को अपनाने से रोक रही है। जबकि ग्रामीण भारत में ड्रोन तकनीकी को अपनाना अभी भी शुरुआती चरण में है, इन चुनौतियों का समाधान करने और कृषि में ड्रोन के उपयोग को बढ़ावा देने का प्रयास चल रहे हैं। किसानों के लिए इस तकनीक के संभावित लाभों को समझने और इस प्रभावी ढंग से उपयोग करने के लिए आवश्यक प्रशिक्षण और सहायता प्रदान करना महत्वपूर्ण है। इस नए तकनीकी उपकरण का सही तरीके से उपयोग करने से, हम सुनहरे भविष्य की ओर बढ़ सकते हैं और एक एकीकृत और सुनिश्चित कृषि प्रणाली की दिशा में कदम बढ़ा सकते हैं।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

मध्यप्रदेश का चंबल और ग्वालियर संभाग में सरसों में सफेद तना सड़न का प्रमुख रोग एवं प्रबंध

डॉ. सोनू शर्मा सहायक प्रोफेसर, पादप रोग विज्ञान विभाग, आईटीएम, विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

सरसों की फसलें भारत की प्रमुख रबी तिलहनी फसलें हैं। भारत में, सरसों की खेती 6.69 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में की जाती है, जिसका उत्पादन 10.11 मिलियन टन और उत्पादकता 1511 किलोग्राम/हेक्टेयर है। राजस्थान, मध्य प्रदेश, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, गुजरात, झारखंड और असम आदि देश के प्रमुख सरसों उत्पादक राज्य हैं। मध्य प्रदेश में लगभग 0.77 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में सरसों की खेती की जाती है, जिनका उत्पादन 1.31 मिलियन टन और उत्पादकता 1713 किलोग्राम/हेक्टेयर है। मध्य प्रदेश का चंबल और ग्वालियर संभाग राज्य के प्रमुख सरसों उत्पादक क्षेत्र हैं क्योंकि ये दोनों संभाग संयुक्त रूप से राज्य में इन फसलों के क्षेत्र और उत्पादन में क्रमशः 70 और 80 प्रतिशत से अधिक का योगदान देते हैं। हाल के वर्षों में, मध्य प्रदेश का चंबल और ग्वालियर संभाग में सरसों की फसल में सफेद तना सड़न रोग की समस्या अधिक देखने को मिल रही है। वास्तव में इस बीमारी का कोई प्रभावी इलाज नहीं है। लेकिन फिर भी आप बीज एवं मिट्टी उपचार द्वारा इस रोग की रोकथाम आसानी से कर सकते हैं। यह एक खतरनाक बीमारी है. जो आपकी सरसों की फसल को पूरी तरह से नष्ट कर सकता है।

सरसों में सफेद तना गलन रोग

लक्षण: रोग के लक्षण तना, पत्तियों व फलियों पर देखे जा सकते हैं। लक्षण के आधार पर इसे तना गलन, श्वेत अंगमारी, तना कैंकर इत्यादि नाम दिये गये हैं। रोग के आरंभिक लक्षण पौधे के तना पर ठीक जमीन की सतह से थोड़ा ऊपर जलसिक्त धब्बों के रूप में प्रकट होते हैं। बाद में यह धब्बे श्वेत हो जाते हैं। वे रुई जैसी कवक से ढ़ँके होते हैं। रोग की अधिकता में रुई जैसी कवक वृद्धि तनों की लंबाई के साथ-साथ फैल जाती है व अंततः पूरे तने को ग्रसित कर लेती है। ऐसी अवस्था में पौधे मुरझाकर सूख जाते हैं। खेत में रोगग्रस्त पौधे अलग से ही दिखाई पड़ते हैं, क्योंकि वह समय से पहले ही पक जाते हैं। रोगग्रस्त तने भुर-भुरे से होते हैं वे प्रायः बिखरकर टूट जाते हैं। पत्तियों, टहनियों व फलियों पर भी सफेद अंगमारी के लक्षण दिखाई पड़ते हैं। यदि रोगग्रस्त मृत तने को फोड़कर देखा जाए तो उसमें बहुत सारे काले रंग के गोल या अनियमित आकार वाले स्क्लेरोशिया दिखाई देते हैं, जिनका व्यास 2 से 12 मि.मी. तक हो सकता है। जब फसल को काटा जाता है तो रोगग्रस्त ऊतकों से बहुत सारे स्क्लेरोशिया जमीन पर गिर जाते हैं या बीज के साथ मिल जाते हैं।

रोगजनक: यह रोग स्क्लेरोटिनिया स्क्लेरोशियम नामक कवक द्वारा पनपता है। यह रोगजनक मृदोढ़ है व इसके स्क्लेरोशिया प्राथमिक निवेशद्रव्य का कार्य करते हैं। स्क्लेरोशिया दो विधियों द्वारा अंकुरित हो सकते हैं। पहली विधि में उनसे सीधा सफेद कवक जाल निकलता है व पौधों को संक्रमित करता है। साधारणतया: सरसों की फसल पर इस प्रकार का संक्रमण कम पाया जाता है। अधिकतर स्क्लेरोशिया अंकुरित होकर एक प्याले के समान एपोथिशियम बनाते हैं। एक स्क्लेरोशिया से कई एपोथिशियम बनते हैं व प्रत्येक एपोथिशियम से बहुत सारे एस्को बीजाणु वायु द्वारा विस्तरित होते है। इन एस्को बीजाणुओं के पौधों के तने या अन्य भागों के गिरने से रोग संक्रमण होता है। एस्को बीजाणुओं के अंकुरण के बाद कवक जाल पौधों की कोशिका भित्ति के एन्जाइम प्रक्रिया द्वारा नष्ट करके पौधों के ऊतकों को कवक के पहुँचने से पहले ही मृत कर देता है। जमीन की ऊपर सतह से अधिक नमी वातावरण में ठंडक इस रोग को पनपने व फैलाने में सहायक होते हैं। जिन खेतों में लगातार सरसों की फसल उगाई जाती है। वहाँ स्क्लेरोशिया का उत्पादन व अंकुरण अधिक होता है। सरसों के फूलों से गिरी पंखुडियाँ एस्कोबीजाणुओं को अंकुरित करने में मदद करती है। अधिक नाइट्रोजन उर्वरक मिलने पर भी रोग के लिये पौधों की ग्रहणशीलता में बढ़ोत्तरी होती है।

रोग फैलने का उपयुक्त समय: सरसों में यह रोग दिसंबर और जनवरी माह में सबसे अधिक फैलता है। क्योंकि इस समय मौसम अधिक आर्द्र होता है। दिसंबर और जनवरी के महीने में अगर बारिश होती है और कोहरा रहता है। इससे सरसों के नीचे की पत्तियां नम रहती हैं। और फंगस पौधे के तनों पर लग जाता है। यह बीमारी इन दिनों अधिक तेजी से फैलती है।

नियंत्रण

- सभी प्रभावित पौधों के अवशेषों को एकत्रित करके जला दें ताकि स्क्लेरोशिया नष्ट हो जाएं।
- फसल चक्र अपनाने से भी रोग को रोकने में मदद मिल सकती है।
- खेत में गर्मियों में गहरी जुताई करने से स्क्लेरोशिया जमीन में दब जाते हैं व अधिक प्रकाश न मिलने के कारण उनका अंकुरण नहीं हो पाता है।
- ज्यादा घनी फसल न रखें। पौधों की कतारों में पर्याप्त दूरी रखने से भी रोग में कमी लाई जा सकती है।
- सरसों की बीजाई देरी से करने पर (अक्टूबर के अंत या नवम्बर) रोग का संक्रमण कम पाया गया है।
- इस रोग से बचाव के लिए बुआई से पहले मिट्टी में 0.5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से नीम की खली का प्रयोग कर सकते हैं।
- फसल पर रोग के प्रारंभिक लक्षण दिखने पर कार्बेन्डाजिम (0.05%) 2 ग्रा./ली. पानी में कवकनाशक दवाई के घोल का छिड़काव पौधों पर करें। ध्यान रखें कि छिड़काव रोग पनपने से पहले ही किया जाये व पौधों के सभी भागों पर हो जाए। ज्यादातर रोग फसल पर फल आने के बाद ही पनपता है। इसलिये जब फसल में 25 से 30 प्रतिशत फूल आ जायें, उस समय एक छिड़काव कर दें।
- रोग दिखाई देने पर आप प्रोपिकोनाज़ोल 1 मिली प्रति लीटर और ट्राइफ्लोक्सीस्ट्रोबिन + टेबुकोनाज़ोल 1 मिली प्रति लीटर का छिड़काव कर सकते हैं।
- हाल ही में परीक्षणों के माध्यम से गोमूत्र 20 प्रतिशत से मृदा उपचार द्वारा बीमारी पर काबू पाने में सफलता हासिल हुई है।

घोषणा-पत्र

मध्य भारत कृषक भारती हिन्दी मासिक पत्र का विवरण

समाचार पत्र का नाम	:	**मध्य भारत कृषक भारती**
समाचार पत्र की भाषा	:	हिन्दी
समाचार पत्र की अवधि	:	मासिक
समाचार पत्र का प्रकाशन का स्थान	:	ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास, दीनदयाल नगर, ग्वालियर (म.प्र.)
स्वामित्व का विवरण व पद एवं पूरा पता	:	राजू गुर्जर सी-5, बलराम नगर, भिण्ड रोड, गोला का मंदिर, ग्वालियर (म.प्र.)
प्रकाशक का नाम	:	राजू गुर्जर
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	सी-5, बलराम नगर, भिण्ड रोड, गोला का मंदिर, ग्वालियर (म.प्र.)
संपादक का नाम	:	राजू गुर्जर
पता	:	सी-5, बलराम नगर, भिण्ड रोड, गोला का मंदिर, ग्वालियर (म.प्र.)
जिस स्थान पर मुद्रण का काम होता है उसका सही तथा ठीक विवरण	:	सर्वोदय प्रिंटिंग प्रेस महाणिक की गोठ, जनक हॉस्पीटल के पीछे, कम्पू रोड, लश्कर ग्वालियर (म.प्र.)
प्रकाशन का स्थान	:	ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास, दीनदयाल नगर, ग्वालियर (म.प्र.)

मैं **राजू गुर्जर** घोषणा करता हूँ कि **मध्य भारत कृषक भारती** मासिक पत्र के संबंध में दिए गए उपरोक्त सभी विवरण सही और सत्य हैं।

हस्ताक्षर

राजू गुर्जर

दिनांक: 01 मार्च 2024 (प्रकाशक के हस्ताक्षर)

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

प्रधानमंत्री किसान ऊर्जा सुरक्षा एवं उत्थान महाभियान (PM-कुसुम योजना)

लखन पाटीदार वरिष्ठ परियोजना सहायक-कृषि नर्मदा भू-दृश्य जीर्णोद्धार परियोजना **USAID & NTPC** द्वारा वित्तपोषित तथा **GGGI & IIFM** द्वारा कार्यान्वित (म.प्र.)

नितेश कुमार मुख्य परियोजना अधिकारी, नर्मदा भू-दृश्य जीर्णोद्धार परियोजना **USAID & NTPC** द्वारा वित्तपोषित तथा **GGGI & IIFM** द्वारा कार्यान्वित

किसान भाइयों, आपको यह जानकर आश्चर्य होगा की भारत में उत्पन्न होने वाली कुल बिजली का 37% केवल कृषि क्षेत्र में उपयोग की जाती है, उसमे भी मुख्यतः सिंचाई पम्पों को चलने हेतु उपयोग होती है। वर्तमान में भारत हर क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनने की ओर तेजी से अग्रसर है, कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है और उसे भी उसी रफ़्तार से आत्मनिर्भर बनना होगा। वर्ष 2015 में पेरिस में हुए जलवायु समझौते में भी भारत ने वर्ष 2030 तक अपने बिजली उत्पादन का 40% गैर-जीवाश्म ईंधन से स्थापित करने का लक्ष्य रखा है और यह कृषि क्षेत्र को ऊर्जा स्वालंभी बनाये बिना करना बहुत मुश्किल होगा। इसके लिए सरकार ने समय समय पर कई नीतिगत बदलाव किये है, और इसी कड़ी में दिनांक 19-2-2019 को भारत सरकार ने PM-कुसुम योजना की शुरुआत की।

PM-कुसुम योजना: योजना का पूरा नाम प्रधानमंत्री किसान ऊर्जा सुरक्षा एवं उत्थान महाभियान है, इसकी शुरुआत भारत सरकार के नवीन और नवीनीकरण ऊर्जा मंत्रालय द्वारा मार्च 2019 माह से की गई। शुरुआत में यह योजना 2 वर्ष के लिए लागु की गई थी जिसे अगस्त 2022 में बढ़ाकर मार्च 2026 तक कर दिया गया है। सरकार का लक्ष्य मार्च 2026 तक सोर ऊर्जा से 34800 MW बिजली उत्पादन करना है जिसके लिए केंद्रीय बजट में 34422 करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया है।

पीएम कुसुम योजना के उद्देश्य: • किसानों को जल एवं ऊर्जा सुरक्षा प्रदान करना • खेती में जीवाश्म ईंधन जैसे डीजल के उपयोग को कम करना • खेती में लागत को कम कर किसानो की आमदनी बढ़ाना • राज्यों पर कृषि बिजली सब्सिडी के भार को कम करना साथ ही बिजली कंपनियों की वित्तीय हालत में सुधार करना • खेती से होने वाले कार्बन उत्सर्जन में कमी कर जलवायु परिवर्तन को रोकना • पर्यावरण संरक्षण को बढ़ाना

PM-कुसुम योजना के घटक

योजना को अधिक विस्तृत रूप से लागु करने के लिए इसे तीन मुख्य घटको में बांटा गया है -

घटक – A: इसके अंतर्गत 500 किलोवाट से 2 मेगावाट क्षमता तक के लघु सौर ऊर्जा संयंत्रों की स्थापना करके 10,000 मेगावाट सौर ऊर्जा उत्पादन करना है • इन बिजली संयंत्रों को बंजर भूमि या खेती योग्य भूमि पर भी स्थापित किया जा सकता है जहां सौर पैनलों के नीचे फसलें भी उगाई जा सकती हैं। • उत्पादित ऊर्जा को किसान स्वयं उपयोग कर सकते है या अतिरिक्त ऊर्जा को बिजली कंपनी को विद्युत खरीद समझौता (पीपीए) के तहत बेच कर अतिरिक्त आमदनी कमा सकते है • किसान द्वारा संयंत्र स्वयं लगाया जा सकता है या वह अपनी भूमि को किसी संस्था/कंपनी/समूह को लीज पर दे सकते हैं • विद्युत लाइनों की उच्च लागत से बचने के लिए नवीकरणीय ऊर्जा बिजली परियोजना, विधुत उप-स्टेशनों के पांच किमी के दायरे में स्थापित की जाएगी। • उत्पादित बिजली स्थानीय बिजली कंपनी द्वारा पूर्व-निर्धारित टैरिफ पर खरीदी जाएगी • इस घटक के अंतर्गत, विधुत खरीदी के प्रोत्साहन के लिए केंद्र सरकार द्वारा बिजली कंपनी (डिस्कॉम) को सौर ऊर्जा संयंत्र शुरू होने से 5 वर्ष की अवधि तक 40 पैसे प्रति यूनिट या 6.6 लाख रुपए प्रति मेगावाट प्रति वर्ष, जो भी कम हो का भुगतान किया जायेगा।

घटक – B: इस घटक के अंतर्गत 20 लाख व्यक्तिगत (स्टैण्ड-अलोन) सोर विधुत कृषि पंपों की स्थापना किया जाना प्रस्तावित है। • व्यक्तिगत किसान/समूह/संघ/समिति अपने मौजूदा डीजल पंप के स्थान पर 7.5 HP तक के सौर ऊर्जा पंप लगा सकते हैं • माइक्रो सिंचाई पद्धतियों जैसे ड्रिप, स्प्रिंकलर उपयोग करने वाले किसानो को सौर पंप स्थापना के लिए वरीयता दी जाएगी • सौर पंप की बेंचमार्क लागत की 60% सब्सिडी प्रदान की जाएगी, जिसमे 30% सब्सिडी केंद्र सरकार द्वारा तथा 30% राज्य सरकार द्वारा वहन की जाएगी। किसान को शेष 40% राशि का ही भुगतान करना होगा, उसमे भी यदि वह चाहे तो 30% राशि का बैंक से ऋण ले सकता है, इस तरह सिर्फ 10% राशि का ही किसान को भुगतान करना होगा। • सौर पंप चालू होने की तिथि से 5 वर्ष तक विक्रेता द्वारा अनिवार्य रूप से मरम्मत और रखरखाव की सेवाएं प्रदान की जाएगी • सभी सौर ऊर्जा संयंत्रों पर यूनिवर्सल सोलर पंप कंट्रोलर (यू.एस.पी.सी.) लगाना अनिवार्य होगा जिससे किसान अतिरिक्त सौर ऊर्जा का उपयोग अन्य कृषि उद्यम/मचीनों के संचालन में कर सकते है।

घटक – C: इस घटक के अंतर्गत 35 लाख ग्रिड से जुड़े कृषि पंपों या कृषि फीडरों को सौर ऊर्जा से जोड़ा जाना है-• इस घटक के तहत, ग्रिड से जुड़े कृषि पंप वाले व्यक्तिगत किसानों को सौर ऊर्जा पंप लगाने के लिए सब्सिडी दी जाएगी । • इसमें किसान अपने सोलर पंप की दुगनी क्षमता का सौर ऊर्जा संयंत्र लगा सकते है जिससे वह अपनी सिचाई जरुरत को पूरा करने के बाद बची अतिरिक्त ऊर्जा को बिजली कंपनी (डिस्कॉम) को पूर्व निर्धारित दर पर बेच सकते हैं • कृषि फीडर के लिए बिजली कंपनी स्वयं के खर्च पर पर भी सौर ऊर्जा संयंत्र लगा सकती है • इस घटक के अंतर्गत लागत की 30% सब्सिडी केंद्र सरकार द्वारा प्रदान की जाएगी, शेष राशि बैंक से ऋण के माध्यम से ली जा सकती है। • मंत्रालय द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि जल उपयोगकर्ता समूह (WUA)/किसान उत्पादक संगठनों (FPO)/प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (PACS) या क्लस्टर आधारित सिंचाई प्रणाली द्वारा उपयोग किए जाने वाले ग्रिड से जुड़े पंपों के लिए भी सौर ऊर्जा संयंत्र (प्रतिव्यक्ति अधिकतम 5 HP पंप) लगाया जा सकता है।

आवेदन प्रक्रिया: प्रधानमंत्री कुसुम योजना में आवेदन करने के लिए किसान इसकी केंद्र या राज्य सरकार द्वारा अधिकृत आधिकारिक वेबसाइट पर पंजीयन कर सकते हैं। पंजीयन हेतु केंद्र सरकार अंतर्गत नवीन और नवीनीकरण ऊर्जा मंत्रालय (MNRE) की वेबसाइट https://pmkusum.mnre.gov.in है जबकि विभिन्न राज्यों में राज्य सरकार की अलग-अलग आधिकारिक वेबसाइट है। मध्य प्रदेश राज्य के लिए राज्य सरकार की आधिकारिक वेबसाइट https://cmsolarpump.mp.gov.in है। इसके अलावा किसान टोल फ्री नंबर 1800-180-3333 के माध्यम से भी योजना से जुड़ी जानकारी ले सकते है तथा पंजीयन कर सकते हैं।

योजना में आवेदन करने के लिए किसानो को निम्न दस्तावेजों की आवश्यकता होगी- * आधार कार्ड * जमीन संबंधी दस्तावेज जैसे खसरा/खतौनी * बैंक पासबुक * शपथ पत्र * फोटो

सारांश: प्रधानमंत्री-कुसुम योजना भारतीय कृषि क्षेत्र को ऊर्जा स्वालंभी बनाने के लिए बहुत महत्वपूर्ण प्रयास है, इसके माध्यम से न सिर्फ देश के किसानो को उनकी ऊर्जा जरूरतों के लिए आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है बल्कि खेती के साथ सौर ऊर्जा के विकास से देश को अपनी ऊर्जा जरूरतों के लिए जैविक ईंधन पर निर्भरता को भी कुछ हद तक कम किया जा सकता है। इससे कार्बन उत्सर्जन के कमी होगी, पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा मिलेगा, किसानो को अतिरिक्त आय होगी, दीर्घ काल में सरकार को कृषि बिजली में दी जाने वाली सब्सिडी में कमी आएगी और साथ ही देश पेरिस जलवायु समझौते के तहत निर्धारित किये गए अपने लक्ष्यो की और तेजी से अग्रसर होगा। यह योजना एक साथ अनेक लाभों को समेकित करती है और भारतीय कृषि तथा ऊर्जा क्षेत्र को अग्रणी बनाने में महत्वपूर्ण है ।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

ग्रीष्मकालीन सोयाबीन की खेती, कम लागत में अधिक लाभ

डॉ. प्रशांत सिंह कौरव
डॉ. सुमित काकड़े, श्री रवि कुमार
(सहायक प्राध्यापक) कृषि विभाग, आर.के.डी.एफ.
विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.)

वर्तमान समय में कृषि क्षेत्र देश के विकास में अग्रणी है, जिसका मुख्य कारण किसान बदलते समय के साथ खेती से अधिक लाभ कमाने के लिए परंपरागत खेती के अलावा आधुनिक वैज्ञानिक खेती पर भी ध्यान दे रहे हैं। जैसे कि हम जानते हैं रबी सीजन की फसलें गेहूं, सरसों, आलू, प्याज और मटर आदि की फसल की कटाई कर खेत से निकाल लिया है और इस समय किसानों के खेत खाली हैं। ऐसे में अब किसान अपने खेत को खाली छोड़ने की बजाए उसमें सोयाबीन की बोआई करना शुरू कर सकते हैं। सोयाबीन स्वास्थ्य के लिए एक बहुउपयोगी खाद्य पदार्थ है साथ ही ग्रीष्मकालीन सोयाबीन की खेती सिंचित अवस्था में कम लागत में सफलता पूर्वक की जा सकती है। भारत मे सबसे अधिक सोयाबीन का उत्पादन मध्यप्रदेश करता है।

ग्रीष्मकालीन सोयाबीन की खेती से लाभ: ग्रीष्म कालीन सोयाबीन में रोग एवं कीटों का प्रकोप कम होता है तथा बारिश शुरू होने से पहले ही फसल तैयार हो जाती है। सोयाबीन फसल दलहनी होने के कारण इसकी जड़ों में ग्रंथियाँ पाई जाती हैं, जिनमे वायुमंडलीय नत्रजन संस्थापित करने की क्षमता होती है, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है। ऐसे में किसानों को खरीफ फसल जैसे धान, ज्वार, बाजरा, मूंगफली, गन्ना आदि की खेती करने में नत्रजन की कुछ प्रतिशत तक आपूर्ति हो जाती है। इससे किसानों की लागत कम होती है। गेहूं और मटर की फसल के बाद अधिकांश किसानों ने अपने खेत में सोयाबीन की खेती करना शुरू कर दिया है। कई जगहों पर तो सोयाबीन का अंकुरण भी प्रारम्भ हो गया है। इस समय इस खेती में लागत भी कम लगती है और बाजार में भी इसके अच्छे दाम मिलते हैं।

ग्रीष्मकालीन सोयाबीन की उन्नत किस्में : ग्रीष्मकालीन बुआई के लिए अल्पकालिक अवधि वाली किस्मों की सिफारिश की जाती है। मध्यप्रदेश के लिए मुख्यतः जे.एस.- 93-05, जे.एस.- 95-60, जे.एस.- 335, जे.एस.- 97-05, एन.आर.सी.- 7, एन.आर.सी.- 37, जे.एस.- 80-21, समृद्धि और एम.ए.यू.एस.- 81 आदि है।

सोयाबीन के बीजों की मात्रा एवं बीजोपचार: सोयाबीन के छोटे दाने वाली प्रजातियों के लिये बीज की मात्रा 65 से 70 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तथा बड़े दाने वाली प्रजातियों के लिये बीज की मात्रा 75 से 80 कि.ग्रा./हेक्टयर की दर से उपयोग करें। बीज रोपाई से पूर्व उन्हें राइजोबियम, केप्टान, थीरम, कार्बेन्डाजिम या थायोफेनेट मिथीईल की उचित मात्रा का मिश्रण बनाकर उपचारित कर लिया जाता है। इससे बीज अंकुरण के समय उन्हें रोग लगने का खतरा कम हो जाता है।

जलवायु, मिट्टी और उपयुक्त तापमान: सोयाबीन की खेती रेतीली व हल्की भूमि को छोडकर सभी प्रकार की भूमि में सफलतापूर्वक की जा सकती है परन्तु दोमट भूमि सोयाबीन हेतु अधिक उपयुक्त होती है। जहां भी खेत में पानी रूकता हो वहां सोयाबीन की फसल ना लें। भूमि का पीएच मान 7 से 7.5 के मध्य होना चाहिए। उष्ण जलवायु को सोयाबीन की खेती के लिए उपयुक्त माना जाता है। सोयाबीन के पौधे गर्म और नम जलवायु में अधिक पैदावार देते हैं। सोयाबीन के पौधे सामान्य तापमान में अधिक उत्पादन देते हैं। इसके बीजो को अंकुरित होने के लिए 20-24 डिग्री तापमान की आवश्यकता होती है।

खेत की तैयारी एवं उर्वरक: सोयाबीन की खेती करने से पहले खेत की मिट्टी संतुलित उर्वरक प्रबंधन एवं मृदा स्वास्थ्य हेतु मिट्टी का मुख्य तत्व जैसे नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश, द्वितियक पोषक तत्व जैसे सल्फर, केल्शियम, मेग्नेशियम एवं सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे जस्ता, तांबा, लोहा, मेगनीज, मोलिब्डिनम, बोरॉन साथ ही पी.एच., ई.सी. एवं कार्बनिक द्रव्य का परीक्षण करायें। सोयाबीन की खेती के लिए खेत को तैयार करने के लिए सबसे पहले

खाली खेतों की ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से 8 से 10 इंच गहराई तक जुताई करें। इससे हानि पहँचाने वाले कीटों की सभी अवस्थाएं नष्ट होगीं। खेत की पहली जुताई के बाद खेत में गोबर की खाद दें। खेत में पानी भरने से सोयाबीन की फसल पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है अतः अधिक उत्पादन के लिए खेत में जल निकास की व्यवस्था करना आवश्यक होता है। जहां तक संभव हो आखरी बखरनी एवं पाटा समय से करें, जिससे अंकुरित खरपतवार नष्ट हो सके। सोयाबीन की खेती में यदि आप रासायनिक खाद का इस्तेमाल करना चाहते है, तो उसके लिए प्रति हेक्टेयर के हिसाब से 20 किलोग्राम नाइट्रोजन, 60 किलोग्राम फास्फोरस, 40 किलोग्राम पोटाश और 20 किलोग्राम गंधक की मात्रा का छिड़काव कर सकते है।

खरपतवार नियंत्रण: सोयाबीन की खेती में खरपतवार नियंत्रण हेतु रासायनिक और प्राकृतिक दोनों ही विधियों का इस्तेमाल किया जाता है। प्राकृतिक तरीके से खरपतवार नियंत्रण हेतु निराई- गुड़ाई की जाती है। इसके पौधों की प्रारंभिक गुड़ाई पौधा रोपाई के 25 से 35 दिन बाद की जाती है, इसके अलावा यदि रासायनिक विधि द्वारा खरपतवार पर नियंत्रण करते है, तो उसके लिए मेटोलाक्लोर, इमेजेथापायर और क्यूजेलेफोप इथाइल की उचित मात्रा का छिड़काव फसल रोपाई के पश्चात करना होता है। इसके अतिरिक्त फ्लुक्लोरोलिन या ट्राइफ्लोरालिन का छिड़काव खेत में बीज रोपाई से पहले करे।

प्रमुख कीट, रोग और प्रबंधन

कीट-सफेद मक्खी

क्षति का प्रकार:1. यह कीट पत्तियों का रस चूसते है जिससे पत्तिया मुड़ कर पीली पड़ जाती है। यह कीट ही पीला मोजेक रोग फैलाता है।

प्रबंधन-1.संक्रमण की शुरूआती अवस्था में पीले पड़े पत्तों को तोड़ दें। 2.थायोमिथाक्सम 25 डब्ल्यू जी. का संक्रमण के स्तर अनुसार 80 से 100 ग्राम/हेक्टेयर की दर से स्प्रे करे। 3.थायो मिथाक्जाम, लैम्बडासाय हैलोथरीन का 125 एम.एल./हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

कीट-चक्रभृंग/ गर्डल बीटल

क्षति का प्रकार:इल्ली और लार्वा दोनो अवस्थाओं में क्षति पहुँचाते है।व्यस्क मादा इल्ली तने पर रिंग बनाती है, रिंग में छेद बनाकर अंडे देती है अण्डे से निकलने वाली इल्ली तने को अंदर से खाती है और तना सूख जाता है।

प्रबंधन-1.संक्रमण स्तर कम होने की दषा में पौधे को उखाड़कर मिट्टी में दबा दें। 2.लाइट ट्रैप का इस्तेमाल करें। 3.प्रोपेनाफास 40: ई.सी. का 25 ली./हे. की दर से छिड़काव करें।

कीट-तम्बाखू की इल्ली

क्षति का प्रकार: इल्लिया पत्तियों के क्लोरोफिल (हरे भाग) को खा जाती है फलस्वरूप पत्तिया सफेद पीली पड़ जाती है और एक प्रकार का जाल बन जाता है।

प्रबंधन-1.पौधों के संक्रमित भागों को अथवा संपूर्ण क्षतिग्रस्त पौधे को नष्ट कर दें। 2.फैरोमोन ट्रैप को 10 ट्रैप/हेक्टेयर की दर से लगाये। 3.प्रोपेनोफास 50: ई.सी. का 1 ली./हे. की दर से छिड़काव करें।

रोग-पीला मोजेक

लक्षण: पत्तियों पर असामान्य पीले धब्बे पड़ जाते है।सक्रंमित पौधे की बढ़वार रूक जाती है और फली भराव कम होता है व दाना छोटा होता है।

प्रबंधन-1.सक्रंमण कम होने की दषा में पौधे को उखाड़कर फेंक दें। 2.थायामिथोक्सम 25 डब्ल्यू. जी. का संक्रमण के स्तर के अनुसार 80 से 100 ग्राम/हेक्टेयर की दर से स्प्रे करें। 3.थायो मिथाक्जाम लैम्बडासायहैलोथरीन का 125 एम.एल./हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

रोग-बैक्टीरियल ब्लाईट

लक्षण: असामान्य पीले बिंदु पत्तियों पर पड़ जाते हैं और फिर मृत दिखाई पड़ते है और फिर बड़े काले धब्बे तना और पत्तियों पर दिखाई देते है।

प्रबंधन-1.कॉपर फफूँदनाशक का 2 ग्राम/लीटर या स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का 0.25 ग्राम/लीटर की दर से छिड़काव करें।

* रासायनिक नियंत्रण की शुरुआत तभी करनी है जब की कीट व रोग आर्थिक स्तर को पार कर ले, साथ ही हमें समेकित कीट व रोग प्रबंधन पर ध्यान देना है, जिसकी शरूआत बुवाई से पहले हो जाती है जैसे ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई करना, रोग प्रतिरोधक किस्मों का चयन करना, अनुमोदित बीज दर से ज्यादा रखना और नत्रजन उर्वरकों का उपयोग कम करना और पोटाश की कमी रहने पर पोटाश खादों का उपयोग मिट्टी में सुनिश्चित करना आदि, तभी कीट और रोगों पर नियंत्रण कर सकते है।

सोयाबीन की बुवाई का सही समय और तरीका: खेती हेतु सोयाबीन की बीजों की बुवाई सीडड्रिल 18 इंच की दूरी पर करना अधिक लाभकारी होता है। सीडड्रिल से बोआई करने पर बीज कम लगता है और पौधे भी समान दूरी पर स्थापित होते है। फसल बोने के एक सप्ताह बाद यदि कूँड में किसी स्थान पर अंकुरण न हुआ हो तथा मृदा में नमी हो तो खुरपी की सहायता से रिक्त स्थानो में बीज की बुवाई कर देने से अच्छी उपज हेतु खेत में बांछित पौध संख्या स्थापित हो जाती है। सोयाबीन की रोपाई के लिए मार्च के महीने में जब तापमान 22-24 डिग्री सेल्सियस होता है उपयुक्त माना जाता है।

खेती के लिए सिंचाई विधि: सोयाबीन की अच्छी फसल को 40 से 50 सेमी. पानी की आवश्यकता होती है। सोयाबीन में फूलने, फलने, दाना बनने तथा दानों के विकास के समय सोयाबीन की सिंचाई बहुत ही जरूरी होता है। सोयाबीन की एक सिंचाई फल्लियों में दाना भरते समय अवश्य करनी चाहिए। बलुई मृदा में भारी मिट्टियो की अपेक्षा सिंचाई अधिक बार करनी पड़ती है। इसके बाद जब पौधों पर फलिया आना आरम्भ कर दे, उस समय मृदा में नमी बनाये रखने के लिए स्प्रिंकलर के माध्यम से हल्की सिंचाई जरूरत के हिसाब से करते रहना होता है।

फसल की कटाई, लाभ और पैदावार: सोयाबीन की फसल बीज रोपाई के 85 से 95 दिन पश्चात फसल कटाई के लिए तैयार हो जाती है। जब इसके पौधों पर लगने वाली पत्तियां पीली पड़कर गिरने लगती है, और फलियों का रंग भी भूरा दिखाई देने लगे कटाई कर खेत में अच्छी तरह से सूखा लिया जाता है। इसके बाद थ्रेसर के माध्यम से अलग कर लिया जाता है। ग्रीष्मकालीन सोयाबीन के एक हेक्टेयर के खेत से 20 से 25 क्विंटल का उत्पादन प्राप्त हो जाता है। इसका बाजारी भाव 3,500 से 4,500 रूपए प्रति क्विंटल होता है। जिस हिसाब से किसान इसकी एक बार की फसल से 1 से 1.5 लाख रूपये तक की आय प्राप्त कर सकते है।

महत्वपूर्ण बिंदु: बुआई हेतु अल्पकालीन अवधि की किस्मों का चयन करना चाहिए जिससे कि वर्षा ऋतु से पूर्व ही फसल कटाई हो सके। तापमान अधिक होने की स्थिति में मृदा नमी को बांये रखने हेतु सिंचाई करते रहना। ग्रीष्मकालीन सोयाबीन की खेती सिंचित जल की पर्याप्त उपलब्धता होने पर ही की जानी चाहिए। फसल की कटाई मानसून प्रारम्भ होने से पहले आवश्यक रूप से कर लेना उचित होगा। फसल कटाई के पश्चात दानो को अच्छी तरह से सुखा कर ही भण्डारण करना चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

चने की उन्नत खेती

डॉ. पंकज कुमार बागरी गेस्ट फैकेल्टी,
जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय पन्ना (म.प्र.)

डॉ. सुधीर सिंह भदौरिया वैज्ञानिक, राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय ग्वालियर

चना रबी ऋतु ने उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण दलहन फसल है। विश्व के कुल चना उत्पादन का 70% भारत में होता है। चने में 21% प्रोटीन, 61.5% कार्बोहाइड्रेट तथा 4.5% वसा होती है। इसमें कैल्शियम आयरन व नियासीन की अच्छी मात्रा होती है। चने का उपयोग इसके दाने व दाने से बनायी गयी दाल के रुप में खाने के लिये किया जाता है। इसके दानों को पीसकर बेसन बनाया जाता है, जिससे अनेक प्रकार के व्यंजन व मिठाईयां बनायी जाती हैं। हरी अवस्था में चने के दानों व पौधों का उपयोग सब्जी के रुप में किया जाता है। चने का भूसा चारे व दाना पशुओं के लिए पोषक आहार के रूप मे प्रयोग किया जाता है।

राज्यवार उत्पादन - देश में कुल उगायी जाने वाली दलहन फसलों का उत्पादन लगभग 17.00 मिलियन टन प्रति वर्ष होता है। चने का उत्पादन कुल दलहन फसलों के उत्पादन का लगभग 45% होता है। देश में चने का सबसे अधिक उत्पादन मध्य प्रदेश में होता है। जो कुल चने उत्पादन का 25.3% पैदा करता है। इसके पश्चात् आन्ध्र प्रदेश (15.4%), राजस्थान (9.7%), कर्नाटक (9.6%) तथा उत्तर प्रदेश (6.4%) का स्थान आता है। राज्य में चने की औसत उपज (700 कि.ग्रा.प्रति हैक्टेयर) अन्य राज्यों जैसे आन्ध्र प्रदेश (1440 कि.ग्रा.), गुजरात (970 कि.ग्रा.), कनार्टक (930 कि.ग्रा.) व महाराष्ट्र (870कि.ग्रा.) की अपेक्षा काफी कम है।

उन्नत किस्मों का प्रयोग:चने की फसल से अधिक उपज प्राप्त करने हेतु उपयुक्त किस्मों का चुनाव बहुत ही आवश्यक है। चने की अनेक उन्नत किस्में विकसित की गई हैं।

भूमि एवं उसकी तैयारी: चने की खेती के लिए हल्की दोमट या दोमट मिट्टी अच्छी होती है। भूमि में जल निकास की उपयुक्त व्यवस्था होनी चाहिये। भूमि में अधिक क्षारीयता नहीं होनी चाहिये। प्रथम जुताई मिट्टी पलटने वाले हल या डिस्क हैरो से करनी चाहिये। इसके पश्चात् एक क्रास जुताई हैरों से करके पाटा लगाकर भूमि समतल कर देनी चाहिये। फसल को दीमक एवं कटवर्म के प्रकोप से बचाने के लिए अन्तिम जुताई के समय हैप्टाक्लोर (4%) या क्यूंनालफॉस (1.5%) या मिथाइल पैराथियोन (2%) या एन्डोसल्फॉन की (1.5%) चूर्ण की 25 कि.ग्रा. मात्रा को प्रति हैक्टेयर की दर से मिट्टी में अच्छी प्रकार मिला देनी चाहिये।

बीज उपचार: चने में अनेक प्रकार के कीट एवं बीमारियां हानि पहुँचाते हैं। इनके प्रकोप से फसल को बचाने के लिए बीज को उपचारित करके ही बुवाई करनी चाहिये। बीज को उपचारित करते समय ध्यान रखना चाहिये कि सर्वप्रथम उसे फफूंदनाशी फिर कीटनाशी तथा अन्त में राजोबियम कल्चर सें उपचारित करें। जड़ गलन व उखटा रोग की रोकथाम के लिए बीज को कार्बेन्डाजिम या मैन्कोजेब या थाइरम की 1.5 से 2 ग्राम मात्रा द्वारा प्रति कि.ग्रा.बीज दर से उपचारित करें। दीमक एवं अन्य भूमिगत कीटों की रोकथाम हेतु क्लोरोपाइरीफोस 20 ईसी या एन्डोसल्फॉन 35 ईसी की 8 मिलीलीटर मात्रा प्रति किलो बीज दर से उपचारित करके बुवाई करनी चाहिये। अन्त में बीज को राइजोबियम कल्चर के तीन एवं फास्फोरस घुलनशील जीवाणु के तीन पैकेटों द्वारा एक है. क्षेत्र हेतु आवश्यक बीज की मात्रा को उपचारित करके बुवाई करनी चाहिये।

बोने का समय एवं बुवाई: असिचिंत क्षेत्रों में चने की बुवाई अक्टूबर के प्रथम पखवाड़े में कर देनी चाहिये। जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा हो वहाँ पर बुवाई 30 अक्टूबर तक अवश्य कर देनी चाहिये। फसल से अधिक पैदावार प्राप्त करने के लिए खेत में प्रति इकाई पौधों की उचित संख्या होना बहुत आवश्यक है। पौधों की उचित संख्या के लिए आवश्यक बीज दर व पंक्ति से पंक्ति एवं पौधे से पौधे की उचित दूरी की महत्वपूर्ण भूमिका होती है बारानी खेती के लिए 80 कि.ग्रा. तथा सिंचित क्षेत्र के लिए 60 कि.ग्रा. बीज की मात्रा प्रति हैक्टेयर पर्याप्त होती है। बारानी फसल के लिए बीज की गहराई 7 से 10 से.मी. तथा सिंचित क्षेत्र के लिए बीज की बुवाई 5 से 7 से.मी. गहराई पर करनी चाहिये। फसल की बुवाई पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 से 50 से.मी. पर करनी चाहिये।

खाद एवं उर्वरक: चने की फसल दलहनी होने के कारण इसकी नाइट्रोजन की कम आवश्यकता होती है क्योंकि चने के पौधों की जड़ों में ग्रन्थियां पाई जाती है। ग्रन्थियों में उपस्थित जीवाणु वातावरण की नाइट्रोजन का जड़ों में स्थिरीकरण करके पौधे की नाइट्रोजन की काफी मात्रा की आवश्यकता की पूर्ति कर देती है। लेकिन प्रारम्भिक अवस्था में पौधे की जड़ों में ग्रंन्थियों का पूर्ण विकास न होने के कारण पौधे को भूमि से नाइट्रोजन लेनी होती है। अतः नाइट्रोजन की आपूर्ति हेतु 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर की आवश्यकता होती है। इसके साथ 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हैक्टेयर की दर से देना चाहिये। नाइट्रोजन की मात्रा यूरिया या डाई अमोनियम फास्फेट (डीएपी) तथा गोबर खाद व कम्पोस्ट खाद द्वारा दी जा सकती है। जबकि फास्फोरस की आपूर्ति सिंगल सुपर फास्फेट या डीएपी या गोबर व कम्पोस्ट खाद द्वारा की जा सकती है।

सिंचाई: चने की अधिकतर खेती बारानी क्षेत्रों में संचित नमी में की जाती है। यदि सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो तो नमी की कमी होने की स्थिति में एक या दो सिंचाई की जा सकती है। पहली सिंचाई 40 से 50 दिनों बाद तथा दूसरी सिंचाई फलियां आने पर की जानी चाहिये। सिचिंत क्षेत्रों में चने की खेती के लिए 3 से 4 सिंचाई पर्याप्त होती है। बुवाई से पहले पलेवा करके फसल की बुवाई करनी चाहिये। इसके पश्चात् फसल की गुड़ाई करने के पश्चात् बुवाई के 35-40 दिन बाद प्रथम 70-80 दिन बाद दूसरी एवं 105-110 दिनों बाद अन्तिम सिंचाई करनी चाहिये। यदि बुवाई के बाद दो ही सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो तो प्रथम बुवाई के 40-50 दिनों बाद तथा द्वितीय 80-85 दिनों बाद करनी चाहिये। यदि बुवाई के बाद एक ही सिंचाई करने योग्य पानी उपलब्ध हो तो बुवाई के 60-65 दिनों बाद सिंचाई करने को प्राथमिकता देनी चाहिये। ध्यान रहे खेत में अधिक समय तक पानी भरा नहीं रहना चाहिये इससे फसल के पौधों को नुकसान हो सकता है।

निराई-गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण: चने की फसल में अनेक प्रकार के खरपतवार जैसे बथुआ, खरतुआ, मोरवा, प्याजी, मोथा, दूब इत्यादि उगते हैं। ये खरपतवार फसल के पौधों के साथ पोषक तत्वों, नमी, स्थान एवं प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा करके उपज को प्रभावित करते हैं। इसके अतिरिक्त खरपतवारों के द्वारा फसल में अनेक प्रकार की बीमारियों एवं कीटों का भी प्रकोप होता है जो बीज की गुणवत्ता को भी प्रभावित करते हैं। खरपतवारों द्वारा होने वाली हानि को रोकने हेतु समय पर नियंत्रण करना बहुत आवश्यक है। चने की फसल में दो बार गुड़ाई करना पर्याप्त होता है। प्रथम गुड़ाई फसल बुवाई के 30-35 दिन पश्चात् व दूसरी 50-55 दिनों बाद करनी चाहिये। यदि मजदूरों की उपलब्धता न हो तो फसल बुवाई के तुरन्त पश्चात् पैन्डीमैथालीन की 2.50 लीटर मात्रा को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर खेत में समान रूप से मशीन द्वारा छिड़काव करना चाहिये। फिर बुवाई के 30-35 दिनों बाद एक गुड़ाई कर देनी चाहिये। इस प्रकार चने की फसल में खरपतवारों द्वारा होने वाली हानि की रोकथाम की जा सकती है।

कीट एवं बीमारी नियंत्रण: चने की फसल में अनेक प्रकार के कीटों एवं बीमारियों का प्रकोप होता है जिनका उचित समय पर नियंत्रण करना बहुत आवश्यक है।

दीमक, कटवर्म एवं वायर वर्म: यदि बुवाई से पहले एन्डोसल्फॉनए क्यूनालफोस या क्लोरोपाइरीफोस से भूमि को उपचारित किया गया है तथा बीज को क्लोरोपाइरीफोस कीटनाशी द्वारा उपचारित किया गया है तो भूमिगत कीटों द्वारा होने वाली हानि की रोकथाम की जा सकती है। यदि खड़ी फसल में दीमक का प्रकोप हो तो क्लोरोपाइरीफोस 20 ईसी या एन्डोसल्फान 35 ईसी की 2 से 3 लीटर मात्रा को प्रति हैक्टेयर की दर से सिंचाई के साथ देनी चाहिये। ध्यान रहे दीमक के नियन्त्रण हेतु कीटनाशी का जड़ों तक पहुँचना बहुत आवश्यक है।

02/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

फसल सुरक्षा हेतु जैविक विधियां

जितेन्द्र पटेल एम.एससी (एंटोमोलॉजी) जेएनकेवीवी
मनीष पटेल, श्रद्धा, मनीषा, श्रुति
एम.एससी जेएनकेवीवी जबलपुर (म.प्र.)
अंगद पटेल (सृजन) बल्देवगढ़

खेतों की जैविक पद्धति कोई नई पद्धति नहीं है बल्कि यह भारतीय संस्कृति की पारम्परिक पद्धति है जिसे आधुनिक विज्ञान के समन्वय से पुर्नप्रतिपादित किया गया है। वस्तुतः खेती की यह पद्धति फसल चक्र, फसल अवशेष, हरी खाद, कार्बनिक खाद, गोबर खाद, यांत्रिक खेती, जैविक कीटनाशकों तथा खनिजधारी चट्टानों के प्रयोग पर निर्भर करती है जिससे भूमि की उत्पादकता तथा उर्वरता लम्बे समय तक बनी रहती है। इससे खाद्य पदार्थ भी रसायनिक यौगिकों से रहित रहकर अधिक सुपाच्य, स्वादिष्ट तथा गुणकारी होते हैं। जैविक पद्धति के प्रमुख सिद्धांत हैं- खेती के लिए प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग, भूमि का आवश्यक एवं जीवंत उपयोग, प्राकृतिक समझ-बूझ पर आधारित कृषि क्रियाएं जैविक प्रणाली पर आधारित फसल सुरक्षा एवं पोषण, भूमि में टिकाऊ उर्वरता, उचित पोषित खाद्य उत्पादन तथा पर्यावरणीय मित्रवत प्रौद्योगिकियों द्वारा अधिकतम खाद्य उत्पादन करना प्रकृति में फसलों को हानि पहुंचाने वाले कीड़ों के साथ-साथ हानिकारक कीड़ों को मारने वाले कीड़े भी मौजूद रहते हैं जिन्हें किसानों का मित्र कीड़ा कहा जाता है रसायनों के अंधाधुंध प्रयोग से ये मित्र कीड़े हानिकारक कीड़ों की अपेक्षा शीघ्र मर जाते हैं क्योंकि ये प्रायः फसल की ऊपरी सतह पर हानिकारक कीड़ों की खोज में रहते हैं और रसायनों के सीधे संपर्क में आ जाते हैं इस तरह से जो प्राकृतिक संतुलन दोनों तरह के कीड़ों में पाया जाता है वह बिगड़ जाता है और हानिकारक कीड़ों की संख्या बढ़ जाती है इस तरह जो कीड़े अब तक हानि पहुंचाने की क्षमता नहीं रखते थे वे भी नुकसान पहुंचाना शुरू कर देते हैं इसे द्वितीय पेस्ट आउटब्रेक कहते हैं रसायनों के प्रयोग से उत्पन्न बुरे प्रभावों में से कुछ मुख्य जो मनुष्य जाति पर पड़े हैं इस प्रकार हैं

पौध सुरक्षा हेतु जैविक विधियां

जैविक खेती में कीटों/ रोगों का शस्य क्रिया द्वारा नियंत्रण

■ फसल चक्रण। ■ फसल अवशेषों को नष्ट करना ताकि पिछले फसल के कीटों तथा रोगों के कारक नष्ट हो जायें। ■ गर्मी में गहरी जुताई करके कीटों एवं रोगों के कारक को गर्मी से नष्ट करना। ■ सही प्रजाति एवं स्वस्थ बीजों का चयन करना। ■ सही समय पर निराई-गुड़ाई, रोगग्रस्त पौधों/ टहनियों की कटाई-छटाई तथा खेत के आस-पास की सफाई जिससे रोग/ कीटों के वैकल्पिक पौधे नष्ट हो जायें। ■ कीटभक्षी पक्षियों के बैठने के लिए डंडा लगाना। ■ कीटों/ रोगों के सर्वाधिक प्रकोप के समय एवं बोआई के समय के बीच तालमेल बनाना।

उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए जैविक खेती करने से फसल उत्पादन में आने वाली लागत को कम किया जा सकता है। इसके अलावा निम्नलिखित प्राकृतिक उत्पादों को भी सफलतापूर्वक जैविक खेती में फसल सुरक्षा हेतु उपयोग में लाया जा सकता है।

गौमूत्र - गाय के गौमूत्र में 33 प्रकार के तत्व पाए जाते हैं जिनके फलस्वरूप वनस्पति पर आने वाले कीट, फफूंद तथा विषाणु रोगों पर नियंत्रण होता है। गौमूत्र में उपस्थित गंधक कीटनाशक का कार्य करती है। जबकि इसमें उपस्थित नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम, लोहा, चूना, सोडियम आदि तत्व वनस्पति को निरोगी तथा सशक्त बनाते हैं।

गौमूत्र का प्रयोग - गौमूत्र की 10 लीटर मात्रा को तांबे के बर्तन में 1 किलो नीम के पत्ते के साथ 15 दिन गलाने के बाद उबाल कर आधी मात्रा बना दें। इस उबाल को छान कर इसका 1 भाग पानी की 99 भाग के साथ मिलाकर फसल पर छिड़काव करें और अधिक प्रभावी बनाने के लिए इसमें 50 ग्राम लहसुन भी उबालने के समय मिलाया जा सकता है। इससे फसल पर आने वाली सुंडियों से सुरक्षा होती है।

नीम का प्रयोग - अनेक प्रकार के नाशी जीव कीटों व सूत्रकृमियों के विरुद्ध नीम उत्पाद या तो प्रतिकर्षी का कार्य करते हैं या उनकी भोजन प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न कर उनका नियंत्रण करने में सहायक है। वास्तव में नीम उत्पाद इतने प्रभावी हैं कि इसके नाम मात्र की उपस्थिति से ही अनेक हानिकारक कीट पौधों पर आक्रमण नहीं कर पाते हैं।

नीम उत्पाद की उपयोग विधियां

■ नीम की 10-12 किग्रा पत्तियां 200 लीटर पानी में 4 दिन तक भिगो कर रखें। जब पानी हरा-पीला होने लगे तो इसे निचोड़ कर छान लें। इस तरह तैयार किया गया यह मिश्रण एक एकड़ के क्षेत्र में इल्ली की रोकथाम के लिए पर्याप्त होता है। ■ नीम की खली एक आदर्श दीमक नियंत्रक का कार्य करती है। बुआई से पूर्व अंतिम बखरनी करते समय खेत में 2 से 3 क्विंटल पिसी हुई नीम की खली मिलाई जाना लाभकारी रहता है। नीम की खली मिलाने से दीमक एवं अन्य कीटों की रोकथाम के अलावा इसमें मौजूद नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश के अलावा अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व पौधों के लिए काफी लाभदायक होता है।

विभिन्न ट्रैप फसलों का उपयोग - विभिन्न फसलों की कीटों एवं सुंडियों से सुरक्षा हेतु कई प्रकार की ट्रैप फसल का उपयोग भी किया जा सकता है। कपास की फसल की सुंडियों से सुरक्षा हेतु ट्रैप फसल के रुप में मेस्ता अथवा अम्बाड़ी (हिबरकस सब्दारिफा) का उपयोग। भूमिजनित रोगों (नीमाटोड्स) के नियंत्रण हेतु खेतों के किनारों पर गेंदा के फूल भी लगाए जा सकते हैं। सोयाबीन फसल में गर्डल बीटल से बचाव के लिए सोयाबीन फसल के चारों तरफ ढैंचा लगाकर गर्डल बीटल के प्रकोप से बचाया जा सकता है।

फैरोमेन ट्रैप- फैरोमेन ट्रैप प्लास्टिक से बना हुआ एक सस्ता यंत्र होता है जिसमें मादा की कृत्रिम गंध वाला एक द्रव्य (जो कैप्सूल के रुप में होता तथा विभिन्न प्रजातियों के कीटों के लिए अलग-अलग होता है) लगाया जाता है। इस द्रव्य (ल्यूर) की गंध से नर कीट इसकी ओर आकर्षित होकर इस ट्रैप में फंस कर मर जाते हैं तथा कीट पतंगों की आने वाली पीढ़ी बाधित हो जाती है। यह बाजार में ल्यूर के नाम से मिलता है। इसके प्रयोग से फेरोमेन ल्यूर का पदार्थ धीरे-धीरे वातावरण में फैल जाता है। जिसकी गंध से नर कीट उत्तेजित होकर ट्रैप के पास जाता है और उसमें बंद हो जाता है।

सावधानियां

■ फेरोमेन ट्रैप 10-15 दिनों में एक बार अवश्य बदल दें क्योंकि 10-15 दिनों बाद ल्यूर का प्रभाव समाप्त हो जाता है। परिणामस्वरुप नर कीट फेरोमोन ट्रैप में आकर्षित नहीं होते हैं। ■ यह ध्यान दें कीट एकत्र करने की थैली का मुंह बराबर खुला रहे और खाली स्थान बना रहे, जिससे कीटों के प्रवेश/ फंसने का स्थान बना रहे। ■ ल्यूर पैकेट में मिलता है, जिसे ठंडे स्थान या फ्रिज में रखना चाहिए।

विभिन्न प्रकार के अर्कों का उपयोग निम्नलिखित कीटों पर प्रभावी पाया गया है-■ नीमपत्ती, निंबोली एवं नीम खली का अर्क सभी प्रकार की इल्लियों, सफेद मक्खी, हरा मच्छर तथा माहो का नियंत्रित करता है। ■ अकाव तथा धतूरे के पत्तों का अर्क यह सभी प्रकार की इल्लियों के भक्षण को नियंत्रित करता है। ■ सीताफल तथा अरंडी के पत्तों का अर्क यह हरा मच्छर, माहो, सफेद मक्खी एवं इल्लियों को नियंत्रित करता है। ■ बेशरम तथा तम्बाकू की पत्ती का अर्क यह हरा मच्छर, माहू, सफेद मक्खी एवं इल्लियों को नियंत्रित करता है। ■ हरी मिर्च, लहसुन तथा प्याज का अर्क यह हरा मच्छर, माहो, सफेद मक्खी एवं इल्लियों को नियंत्रित करता है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

पशु अवयवों के संरक्षण का एक नया तरीका: प्लास्टिनेशन

डॉ. अलका सुमन, डॉ. आदेश कुमार
डॉ. एस. के. करमोरे, डॉ. एस. के. गुप्ता
डॉ. योगिता पांडेय, डॉ. राखी वर्मा
डिपार्टमेंट ऑफ वेटरनरी एनाटोमी एंड हिस्टोलोजी, महू (म.प्र.)

प्लास्टिनेशन पशुओं और मानव मृत शरीर के संरक्षण के लिए एक ऐसी उत्कृष्ट तकनीक है जिसके द्वारा शरीर के द्रव और वसा को सिंथेटिक पदार्थ जैसे सिलिकॉन, रेजिन या एपॉक्सी पॉलिमर के साथ बदल दिया जाता है। ऊतक और शरीर रचना शिक्षण के दीर्घकालिक संरक्षण में शरीर के अंगों का प्लास्टिनेशन अधिक से अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

यह तकनीक शुष्क, गंधहीन, टिकाऊ, नॉनटॉक्सिक नमूने प्रदान करती है जिन्हें संभालना आसान है और इसे कमरे के तापमान पर अनिश्चित काल तक संग्रहित किया जा सकता है। प्लास्टिनेशन गुनथर वॉन हेगेंस का एक अग्रणी आविष्कार है जो मृत्यु के बाद शरीर को संरक्षित कर शिक्षाप्रद उपकरण के रूप में उपयोग करने के लिए है।

प्लास्टीनेशन कि प्रक्रिया के मुख्य पांच चरण इस प्रकार है:

1.स्थिरीकरण (फिक्सेशन) करना
2.निर्जलीकरण (डिहाइड्रेशन) करना
3.समाशोधन (क्लीयरिंग) करना
4.निर्वात (इम्प्रेग्नेशन) में रखना
5.सख्त (हार्डनिंग) करना

प्लास्टीनेशन के सबसे पहले चरण स्थिरीकरण में फॉर्मलडेहाईड कि आवश्यकता होती है। यह रसायन ऊतकों कों अपघटित होने से रोकता है। प्लास्टीनेशन के दूसरे चरण निर्जलीकरण में सैंपल को एसीटोन के बाथ में रखा जाता है। एसीटोन सब पानी को बाहर की और खींचता है और कोशिकाओं के अंदर पानी कि जगह खुद कों प्रस्थापित कर लेता है। तीसरे चरण समाशोधन में सैंपल कों क्लीयरिंग एजेंट (क्लोरोफॉर्म, बेंजीन, सीडर वुड आयल, टाल्यूईन एवं जाइलिन) में रखा जाता है। समाशोधन का उद्देश्य सैंपल से एसीटोन को हटाना और एम्बेडिंग एजेंट के साथ इम्प्रेग्नेशन के लिए तैयार करना है। चौथे चरण में सैंपल कों द्रवीय पॉलीमर (सिलिकॉन रबर, पॉलिएस्टर-कॉपोलीमर, एपॉक्सी रेजिन एवं पैराफिन वैक्स) के बाथ में रखा जाता है। फिर वहन निर्वात की स्तिथि बनाई जाती है। पांचवे चरण में सैंपल को हार्डनर की एक लेयर का लेप लगाकर सख्त कर दिया जाता है और प्लास्टिनेटेड सैंपल इस तरह तैयार किया जाता है प्राकृतिक लुक पाने के लिए सिलिकॉन का उपयोग पूरे नमूनों, मोटे शरीर और अंग के स्लाइस के लिए किया जाता है। एपॉक्सी रेजिन का उपयोग पतले, पारदर्शी शरीर और अंग के स्लाइस के लिए किया जाता है। पॉलिएस्टर-कॉपोलीमर का उपयोग विशेष रूप से मस्तिष्क के स्लाइस के लिए किया जाता है। प्लास्टिनेटेड नमूने अपने मूल रंग और स्थिरता को बनाए रखते है और फोर्मलिन धुएं से मुक्त रहते हैं। एक पूरे बड़े इंसानी शरीर से लेकर छोटे किसी भी जानवर के शरीर के अंग कों प्लास्टीनेट किया जा सकता है।

08/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

ग्रीष्म ऋतु में दुधारू पशुओं का प्रबंधन

डॉ. मानसी शुक्ला (सहायक प्राध्यापक) पशु शरीर संरचना विभाग, रीवा (म.प्र.)

भारत एक पशु प्रधान देश है। यहां अर्थव्यवस्था में कृषि एवं पशुपालन का विशेष महत्व है। यह एक उष्णकटिबंधीय देश है जहां पर पशु को 1 वर्ष में कई तरह के ऋतुओं का सामना करना पड़ता है। विशेषत: भारत में चार प्रकार के मौसम होते हैं – ग्रीष्म ऋतु, वर्षा ऋतु, शीत ऋतु एवं बसंत ऋतु, पशु ग्रीष्म ऋतु में गर्म हवाओं का सामना करते हैं।

हमारे देश के कई हिस्सों में काफी तेज गर्मी देखी जाती है। गर्मी का दौर इतना ज्यादा होता है कि देश के कई क्षेत्रों में पशुओं की मृत्यु होने लगती है। ग्रीष्म ऋतु में दुधारू पशुओं में होने वाले दोष प्रभावों को कम करने के लिए हम कुछ उपाय कर सकते हैं **जिनसे उनके उत्पादन और प्रजनन क्षमता बनी रहे-**

- पशु के आवास को साफ सुथरा और हवादार होना चाहिए
- उसके आवास का फर्श पक्का वह फिसलन रहित होना चाहिए जिसमें मूत्र व पानी की निकासी हेतु ढलान हो
- पशुशाला की छत की ऊंचाई कम से कम 10 फीट ऊंची होनी चाहिए ताकि हवा का समुचित संचार पशु ग्रह में हो सके और छत की तपन से भी पशु बच सके
- पशु ग्रह की छत पर एस्बेस्टस शीट लग देने चाहिए या 4 से 6 इंच मोटी घास छप्पर पर डाल देना चाहिए और इससे पशुशाला के अंदर का तापमान उचित बना रहता है
- पशुशाला में जहां खिड़कियां दरवाजे व अन्य खुली जगह हो वहां बोरी या टाट आदि टाँग कर पानी का छिड़काव कर देना चाहिए
- किसी भी पशुशाला में पशुओं की संख्या अत्यधिक नहीं होनी चाहिए
- पशुशाला में अधिक भीड़-भाड़ भी नहीं होनी चाहिए
- पशुशाला में जल का पर्याप्त प्रबंध होना चाहिए
- भूसा के सनी बनाते समय थोड़ा ज्यादा पानी मिले
- गर्मी के दिनों में पशु को दाने के रूप में प्रोटीन की मात्रा 18% तक दुग्ध उत्पादन करने वाले पशु को खिलाना चाहिए
- गर्मियों में पशु चारा चरना कम कर देते हैं इसलिए उनको चार प्रातः या संध्या कालीन में ही उपलब्ध कराना चाहिए
- इन उपरोक्त बिंदुओं को ध्यान में रखकर हम पशुपालन में प्रतिकूलप्रभाव एवं उन्नति प्राप्त कर सकते हैं

लघु वनोपजों के निर्यात के लिए आदिवासी बहुल जिलों को जल्दी मिलेगा जैविक प्रमाण-पत्र

इन्दौर। लघु वनोपजों के निर्यात को बढ़ावा देने के लिये आदिवासी बहुल जिलों को जल्द ही जैविक प्रमाण-पत्र मिलेगा। वन मंत्री श्री नागरसिंह चौहान ने इसके लिये सभी औपचारिक प्रक्रियाएं पूरी करने के निर्देश दिये हैं। उन्होंने कहा कि तेन्दूपत्ता संग्राहकों को सामाजिक सुरक्षा देने के लिये उन्हें संबल योजना में शामिल किया गया है। तेंदूपत्ता संग्रहण से जुड़े जनजातीय परिवारों की आर्थिक सुरक्षा के लिये तेंदूपत्ता संग्रहण दर 3 हजार रूपये प्रति मानक बोरा से बढ़ा कर 4 हजार रूपये प्रति मानक बोरा कर दी गई है। वर्ष 2003 में संग्रहण दर 400 रूपये प्रति मानक बोरा थी। इस निर्णय के परिणामस्वरूप संग्राहकों को लगभग 560 करोड़ रूपये का संग्रहण पारिश्रमिक के रूप में वितरित किया गया है। संग्रहण पारिश्रमिक के साथ-साथ तेन्दूपत्ता के व्यापार से प्राप्त शुद्ध लाभ भी संग्राहकों के साथ बांटा जाता है। यह लाभांश भी बढ़ाया जा रहा है। वर्ष 2003 में जहाँ शुद्ध लाभ का 50 प्रतिशत अंश संग्राहकों को बोनस के रूप में वितरित किया जाता था, अब 75 प्रतिशत भाग बोनस के रूप में संग्राहकों को वितरित किया जा रहा है। वर्ष 2002-03 में वितरित बोनस की राशि 5.51 करोड़ रूपये थी जबकि वर्ष 2022-23 में वितरित बोनस की राशि 234 करोड़ रूपये है। वर्तमान में लगभग 15 लाख परिवारों के 38 लाख सदस्य लघु वनोपज संग्रहण कार्य से जुड़े हैं। इनमें 50 प्रतिशत से ज्यादा जनजातीय समुदाय के हैं। उनहें बिचौलियों के शोषण से बचाने और उनकी संग्रहित लघु वनोपज का लाभ दिलाने के लिए सहकारिता का त्रिस्तरीय ढांचा बनाया गया है। इसमें प्राथमिक स्तर पर 15.2 लाख संग्रहणकर्ताओं की सदस्यता से बनायी गयी 10 प्राथमिक वनोपज सहकारी समितियां है। द्वितीय स्तर पर 51 जिलों में जिला स्तरीय यूनियन तथा शीर्ष स्तर पर म.प्र. राज्य लघु वनोपज संघ कार्यरत है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

मधुमक्खी के रोग, कीट और उनका प्रबंधन

डॉ. द्वारका कीटशास्त्र विभाग, जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

डॉ. बबली पौध रोग विज्ञान विभाग, राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

मधुमक्खी के महत्वपूर्ण कीट

1. डेड हॉक मॉथ

वैज्ञानिक नाम- अकेरोंटिया स्टाइक्स।

क्षति की प्रकृति- रात में मधुमक्खी के छत्ते में प्रवेश करती है और शहद पी जाती है

प्रबंधन- मजबूत कॉलोनी द्वारा पतंगों को बाहर निकाल दिया जाता है

2. ग्रेटर मोम कीट

वैज्ञानिक नाम- गैलेरिया मेलोनेल्ला।

क्षति की प्रकृति- कैटरपिलर तनाव के दौरान कॉम्ब की मध्य शिरा के पास से सुरंग बनाते हैं।

प्रबंध-

■ यह मधुमक्खियों पर सीधे हमला नहीं करेगा बल्कि मोम खाता है। ■ पैरा डाइक्लोरोबेंजीन का उपयोग करना। ■ सबसे आसान तरीका है मोम कीट को अंतराल और स्थान के माध्यम से छत्ते में प्रवेश करने से रोकना। ■ छत्ता के क्षेत्र से पतंगों को दूर खींचने के लिए जाल का उपयोग करना। ■ मोम कीट के लार्वा और अंडे 24 घंटे तक जमने से मर जाते हैं। ■ संग्रहित छत्ते में बीटी बीजाणुओं की आइजावाई किस्म का छिड़काव करके मोम पतंगों को नियंत्रित किया जा सकता है।

3. छोटा मोम कीट

वैज्ञानिक नाम- एक्रोइया ग्राइसेला।

क्षति की प्रकृति- कैटरपिलर कंघी की मध्य शिरा के पास से सुरंग बनाते हैं।

प्रबंध-

■ कम मोम वाले पतंगों को पनपने के लिए गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है, इसलिए मोम के छत्ते को फ्रीज करने से पतंगे का संक्रमण कम हो जाता है। ■ जब कॉम्ब शहद से भरे न हों तो पैराडाइक्लोरोबेंजीन से धूमन करना। ■ शहद से भरी हुई कॉम्बों के लिए कार्बन-डाई-आक्साइड से धूमन करना।

4. शिकारी ततैया

वैज्ञानिक नाम- वेस्पा ओरिएंटलिस, वेस्पा मैग्नीफेरा।

क्षति की प्रकृति- मधुमक्खियों का शिकार करना व ततैया मधुमक्खियों को कुचलकर उनके लार्वा को खिलाती हैं।

प्रबंधन

■ ततैया के घोंसलों को जलाकर या कीटनाशकों के छिड़काव से नष्ट करना।

5. चींटियाँ

वैज्ञानिक नाम- डोरिलस लेबियेटस।

क्षति की प्रकृति- शहद और ब्रूड को हटा दें। मधुमक्खी कॉलोनी को कमजोर करें और नष्ट करें।

प्रबंधन- ■ धूम्र या कीटनाशकों द्वारा चींटियों के घोंसलों को नष्ट करना। मधुमक्खियों के पैरों का विकर्षक से उपचार करना।

6. अफ्रीकी छोटा छत्ता भृंग/बीटल

वैज्ञानिक नाम- ऐथिना ट्यूमिडा।

क्षति की प्रकृति- यह मधुमक्खी के छत्ते में रहता है। छत्ते के बीटल लार्वा से छत्ते को कॉम्ब करें और मधुमक्खी कालोनियों को बाहर निकालें

प्रबंधन- ■ पैरा डाइक्लोरोबेंजीन का उपयोग करना। ■ कार्डबोर्ड के एक टुकड़े के गलियारों के अंदर बेंजीन का उपयोग करना। ■ खाना पकाने के तेल-आधारित बॉटम बोर्ड ट्रैप का उपयोग करना।

मधुमक्खी के महत्वपूर्ण रोग

1. अकेरीन रोग को आइस्ले ऑफ वाइट के नाम से भी जाना जाता है, यह बीमारी सबसे पहले 1904 में ''आईस्ले ऑफ वाइट'' पर देखी गई थी।

कारक जीव- अकेरेपिस वूडी।

संक्रमण का स्थान- श्वासनली और शरीर का तरल पदार्थ।

क्षति की प्रकृति- कण श्वासनली में रहते हैं और प्रजनन करते हैं। श्वासनली नलिका की दीवारों को छेदते हैं और मधुमक्खियों के हीमोलिम्फ पर भोजन करते हैं।

संक्रमित अवस्था - वयस्क।

प्रबंध- ■ छत्ते की शीर्ष पट्टियों पर रखी गई ग्रीस पैटीज का उपयोग मेन्थॉल को क्रिस्टल रूप से वाष्पित करने या ग्रीस पैटीज में मिश्रित करना। ■ बकफास्ट एबे में ब्रदर एडम द्वारा विकसित बकफास्ट मधुमक्खी के रूप में जानी जाने वाली प्रतिरोधी संकर मधुमक्खी का उपयोग करना। ■ कपास को मिथाइल सैलिसिलेट में भिगोकर फ्लैट छिद्रित ढक्कन में छत्ते के नीचे रखा जाता है। ■ प्रभावित कॉलोनी का विनाश करना।

2. अमीबिक रोग

कारक जीव- मेल्फिजियन गेमोइबा मेलिफेरा

संक्रमण का स्थान- मेल्फीजियन नलिकाएं

क्षति की प्रकृति- यह पेचिश का कारण बनता है। सिस्टेड अमीबा आंतों से मल के साथ बाहर निकल जाते हैं और स्वस्थ मधुमक्खियों को दूषित कर देते हैं।

संक्रमित अवस्था- वयस्क

प्रबंधन- ■ग्लेशियल एसिटिक एसिड या 40% फॉर्मेलिन के साथ ब्रूड बॉक्स और फ्रेम का बंध्याकरण करना।

3. नोसीमा रोग

कारक जीव- नोसीमा एपिस।

संक्रमण का स्थान- उदर/पेट।

क्षति की प्रकृति- यह वयस्क मधुमक्खियों के आंत्र पथ पर आक्रमण करती है और नोसीमोसिस और पेचिश का कारण बनती है।

संक्रमित अवस्था- वयस्क।

प्रबंध-

■ छत्ते के माध्यम से वेंटिलेशन बढ़ाएं और एंटीबायोटिक दवाओं के साथ छत्ते का इलाज करें। ■ मधुमक्खी के छत्ते से बहुत सारा शहद निकालना और फिर मधुमक्खियों को चीनी का पानी खिलाना। ■ ग्लेशियल एसिटिक एसिड या 40 प्रतिशत फॉर्मेलिन के साथ ब्रूड बॉक्स और फ्रेम का बंध्याकरण।

4. अमेरिकन फाउल ब्रूड

कारक जीव- पेनिबैसिलस लार्वा।

संक्रमण का स्थान- आंत।

क्षति की प्रकृति- संक्रमित लार्वा आम तौर पर अपनी कोशिका को सील करने के बाद मर जाते हैं। गहरे भूरे रंग का हो जाता है और बाद में चिपचिपे द्रव्यमान में बदल जाता है जिससे दुर्गंध आती है।

संक्रमित अवस्था- लार्वा।

प्रबंध- ■ छत्ता पूरी तरह जलाना। ■ ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन हाइड्रोक्लोराइड और टाइलोसिन टार्टरेट जैसे- एंटीबायोटिक दवाओं का उपयोग करना। ■ कॉम्ब पर सल्फाथायोजॉल पाउडर का छिड़काव करना। ■ छत्ते के हिस्सों को गर्म पैराफिन मोम या 3 प्रतिशत सोडियम हाइपोक्लोराइड घोल (ब्लीच) में डुबोना।

5. यूरोपीय फाउल ब्रूड

कारक जीव-मेलिसोकोक्कस प्लूटोनस, बैसिलस प्लूटान।

संक्रमण का स्थान- मध्य आंत।

क्षति की प्रकृति- रोगग्रस्त लार्वा पीला और फिर भूरा हो जाता है और श्वासन प्रणाली दिखाई देने लगती है। लार्वा कुंडलित अवस्था में ही मर जाता है जिससे दुर्गंध आती है। कोशिकाएं खराब तरीके से ढकी होती हैं और सामान्य कोशिकाओं के साथ मिश्रित होती हैं।

संक्रमित अवस्था- लार्वा

प्रबंधन- ■ ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन हाइड्रोक्लोराइड का उपयोग करना। ■ बीमारी को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने के लिए मधुमक्खी पालन की ''शुक स्वार्म तकनीक'' का भी उपयोग किया जा सकता है

6. चाक ब्रूड

कारक जीव- एस्कोस्फीरा एपिस।

संक्रमण का स्थान- आंत क्षति की प्रकृतिरू कवक लार्वा के शरीर के बाकी हिस्सों को खा जाएगा, जिससे यह सफेद और ''चाकी/खस्ताहाल'' दिखाई देगा।

संक्रमित अवस्था- लार्वा।

प्रबंधन- ■ गीले झरनों के दौरान स्वस्थ मधुमक्खियों को दूसरे मधुमक्खी के छत्ते में स्थानांतरित करना, छत्ते के माध्यम से वेंटिलेशन बढ़ाना।

7. स्टोन ब्रूड

कारण जीव-

■ एस्परजिलस फ्यूमिगेटस ■ एस्परजिलस फ्लेवस ■ एस्परजिलस नाइजर।

संक्रमण का स्थान- आहार नाल।

क्षति की प्रकृति- मृत लार्वा काले पड़ जाते हैं और उन्हें कुचलना मुश्किल हो जाता है, इसलिए इसे स्टोन ब्रूड नाम दिया गया है। कवक लार्वा के आवरण से फूटता है और एक झूठी त्वचा बनाता है और लार्वा पाउडरयुक्त कवक बीजाणुओं से ढका होता है।

संक्रमित अवस्था- लार्वा और वयस्क।

प्रबंधन- ■ फॉर्मल्डिहाइड धुएं के साथ छत्ते का बंध्याकरण।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

बकरियों की महामारी अथवा पीपीआर रोग : लक्षण एवं रोकथाम

डॉ. पंकज कुमार उमर, डॉ.ज्योति डागर
डॉ. आर के शर्मा, डॉ. विधि गौतम
डॉ. सचिन जैन, डॉ. शशांक विश्वकर्मा
डॉ. पुष्पेन्द्र मरावी
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय,जबलपुर (म.प्र.)

पीपीआर रोग विषाणु जनित एक महत्वपूर्ण रोग है जिससे बकरियों में अत्यधिक मृत्यु होती है, इसलिए पीपीआर रोग को 'बकरियों में महामारी' या 'बकरी प्लेग' के नाम से भी जाना जाता है। एक अध्ययन के अनुसार पीपीआर रोग से भारत में बकरी पालन के क्षेत्र में सालाना साढ़े दश हजार करोड़ रुपये का नुकसान होता है। इसमें मृत्यु दर प्रायः 50 से 80 प्रतिशत तक होती है जोकि अत्यधिक गंभीर स्थिति में बढ़कर 100 प्रतिशत हो सकती है। झारखंड मे स्थिति और भी गंभीर है , टीका का सही समय पर न मिलना और कोल्ड चेन मे कमी ईसका मुख्य कारण है । यह रोग विशेषकर कम उम्र के मेमनों और कुपोषण व परजीवियों से ग्रसित बकरियों में अति गंभीर एवं प्राणघातक सिद्ध होता है। रोग से निर्मुक्त होकर बकरियाँ जीवन पर्यन्त प्रतिरक्षित हो जाती हैं।

पीपीआर रोग का कारक

'मोरबिल्ली' नामक विषाणु का संबंध पैरामिक्सोविरिडी परिवार से है। इसी परिवार में मानव जाती में खसरा रोग पैदा करने वाला विषाणु भी पाया जाता है। पीपीआर विषाणु 60 डिग्री सेल्सियस पर एक घंटे रखने पर भी जीवित रहता है परंतु अल्कोहॉल, ईथर एवं साधारण डिटर्जेंट्स के प्रयोग से इस विषाणु को आसानी से नष्ट किया जा सकता है।

पीपीआर रोग का प्रसार

- मूलतः यह बकरियों और भेड़ों का रोग है।
- बकरियों में रोग अधिक गंभीर होता है।
- मेमने, जिनकी आयु 4 महीनों से अधिक और 1 वर्ष से काम हो, पीपीआर रोग के लिये अतिसंवेदनशील होते हैं।
- मनुष्यों में यह रोग होना असंभव है।
- नजदीकी स्पर्श या संपर्क और निवास से बकरियों में पीपीआर की महामारी फैलती है।
- बीमार बकरी की आँख, नाक, व मुँह के स्राव तथा मल में पीपीआर विषाणु पाया जाता है।
- बीमार बकरी के खाँसने और छींकने से भी तेजी से रोग प्रसार संभव है।
- तनाव, जैसे ढुलाई, गर्भावस्था, परजीविता, पूर्ववर्ती रोग (चेचक) इत्यादि, के कारण बकरियाँ पीपीआर रोग के लिए संवेदनशील हो जाती हैं।

नैदानिक पीपीआर को निम्न परिस्थितियों के होने से जोड़कर भी देखा जाता है-

(1) हाल में विभिन्न आयु की बकरियों और भेड़ों का स्थानांतरण अथवा जमाव

(2) बकरियों के बाड़े अथवा चारे में अकस्मात बदलाव
(3) समूह में नए खरीदे गए पशुओं को सम्मिलित करना
(4) मौसम में बदलाव
(5) पशुपालन एवं आयात-निर्यात की नीतियों में बदलाव

पीपीआर रोग के लक्षण

- रोग के घातक रूप में प्रारम्भ में उच्च ज्वर (40 से 42 डिग्री सेल्सियस) बहुत ही आम है।
- बीमार बकरियों में नीरसता, छींक तथा आँख व नासिका से तरल स्राव देखा जाता है। इस अवस्था के दौरान पशुपालक अक्सर सोचता है कि बकरियों को ठण्ड लग गई है और वह उन्हें सिर्फ ठण्ड से बचाने का प्रयत्न करता है।
- दो से तीन दिन के पश्चात मुख और मुखीय श्लेष्मा झिल्ली में छाले और प्लाक उत्पन्न होने लगते हैं।
- इसी समय बकरियों के मुँह से अत्यधिक बदबू आने लगती है और पीड़ाकर मुँह व सूजे हुए ओंठों के कारण चारा ग्रहण करना असंभव हो जाता है।
- तत्पश्चात आँखों का चिपचिपा या पीपदार स्राव सूखने पर आँखों और नाक को एक परत से ढक लेता है जिससे बकरियों को आँख खोलने और साँस लेने में तकलीफ होती है।
- ज्वर आने के तीन से चार दिन के पश्चात बकरियों में अतितीव्र श्लेष्मा युक्त अथवा खूनी दस्त होने लगते हैं।
- द्वितीयक जीवाणुयीय निमोनिया के कारण बकरियों में साँस फूलना व खाँसना आम बात है। गर्भिंत बकरियों में पीपीआर रोग से गर्भपात भी हो सकता है।
- संक्रमण के एक सप्ताह के भीतर ही बीमार बकरी की मृत्यु हो जाती है।

पीपीआर का उपचार एवं रोकथाम

- सर्वप्रथम पशुपालक को झुण्ड की स्वस्थ बकरियों की पहचान कर शीघ्र ही उन्हें बीमार बकरियों से अलग बाड़े में रखना महत्वपूर्ण है। इसके बाद ही रोगी बकरियों का उपचार प्रारम्भ किया जाना चाहिए।
- विषाणु जनित रोग होने के कारण पीपीआर का कोई विशिष्ट उपचार नहीं है। हालाँकि जीवाणु और परजीवियों को नियंत्रित करने वाली दवाओं के प्रयोग से मृत्यु दर कम की जा सकती है।
- फेफड़ों के द्वितीयक जीवाणुयीय संक्रमण को रोकने के लिए ऑक्सिटेट्रासायक्लीन और क्लोरटेट्रासायक्लीन औषधियां विशिष्ट रूप से अनुशंसित है।
- आँख, नाक और मुख के आस पास के जख्मों की रोगाणुहीन रुई के फाहे से दिन में दो बार सफाई की जानी चाहिए. वर्तमान में माना जाता है कि द्रव चिकित्सा और प्रतिजैविक दवाओं जैसे एनरोफ्लोक्सासिन एवं सेफ्टीऑफर के साथ पांच प्रतिशत बोरोग्लिसरीन से मुख के छालों की धुलाई से बकरियों को अत्यधिक लाभ मिलता है।
- बीमार बकरियों को पोषक, स्वच्छ, मुलायम, नम और स्वादिष्ट चारा खिलाना चाहिए। पीपीआर से महामारी फैलने पर तुरंत ही नजदीकी सरकारी पशु-चिकित्सालय में सूचना देनी चाहिए।
- मृत बकरियों को सम्पूर्ण रूप से जला कर नष्ट करना चाहिए। साथ ही साथ बाड़े और बर्तनों का शुद्धीकरण भी जरुरी है।

पीपीआर से बचाव का एकमात्र कारगर उपाय

रक्षा पीपीआर:पीपीआर के खिलाफ असरदार उपाए

- बकरियों का टीकाकरण ही पीपीआर से बचाव का एकमात्र कारगर उपाय है।
- पीपीआर का टीका चार महीने की उम्र में एक मि.ली. मात्रा में त्वचा के नीचे दिया जाता है। इससे बकरियों में तीन साल के लिए प्रतिरक्षा आ जाती है।
- सभी नरों और तीन साल तक पाली हुयी बकरियों का दोबारा से टीकाकरण करना चाहिए।
- पशुपालक को टीकाकरण के तीन हफ्तों तक बकरियों को तनाव मुक्त रखना जरुरी है।

पीपीआर हो जाने पर मेरे द्वारा ईक घरेलू नुस्खा बनाया गया तथा हजारो बकरियो पर एस्को फील्ड अस्तर पर उपयोग करने के बाद पाया गया की ये नुस्खा ईस बीमारी का रामबाण है ।

पशुपालक भाई इसको आज़मा सकते हैं-(1 दिन का डोज़)

लाल पोटाश	10 ग्राम
हल्दी	50 gm
लहसुन	20 ग्राम
अदरक	20 ग्राम
प्याज़	20 ग्राम
नीम का तेल	10 एमएल
मधु	20 ग्राम
सरसो तेल	20 एमएल

इसको सुबह शाम खिलाये 7 दिन तक

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

गेहूँ की फसल में खरपतवार नियंत्रण

डॉ. उमा शंकर बागरी (एस.आर.एफ.)
डॉ. ब्रजराज कंसाना (वैज्ञानिक सस्य विज्ञान)
डॉ. विकास सिंह (एस.आर.एफ.)
जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.)
खरपतबार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

गेहूँ की फसल में सामान्यतः दो प्रकार के खरपतवार पाएं जातें है। जो संकीर्ण तथा चौड़ी पत्ती वर्ग से सम्बन्ध रखतें हैं। यदि इन खरपतवारों का नियंत्रण फसल के प्रारंभिक अवस्था में न किया जाए तो फसल के उत्पादकता में 10 से 40 प्रतिशत की कमी आ सकती है जो खरपतवारों के तीव्रता एवं प्रकार पर निर्भर करता है। **खरपतवारों का वर्गीकरण एवं गेहूं के फसल में पाएं जाने वाले मुख्य खरपतवार निम्न हैं-**

एकबीजपत्री वर्ग के खरपतवार (संकीर्ण पत्तों वालें खरपतवार)

- फाइलेरिस माइनर और गुल्ली-डंडा- धान गेहूं फसल चक्र में खरपतवार बड़ी समस्या है.
- जंगली जई - यह खरपतवार हल्के से मध्यम बनावट वाले मृदा में (गैर धान के खेत में) प्रमुखता से पाया जाता है.
- पालिपोगान मानस्पेलियएनसिस (लुम्बर घास)
- साइनाडॉन डैकटाइलन (दुब)
- लोफोक्लोआ प्यूमिला
- लोलियम टेम्यूलेटम (राई घास)

द्विबीजपत्री वर्ग के खरपतवार (चौड़ें पत्तों वालें खरपतवार)

- चेनेापोडियम एलबम (बथुआ)
- मेंलिलोटस एलबा/ मेंलिलोटस इंडिका (जंगली सेंजी)
- मेडिकैगो डेंटिक्यूलेटा (मैना)
- ट्राइगोनेला पालीसीरेटा (मैनी)
- फ्यूमेंरिया परविफ्लोरा (गजरी)
- सिरसियम आरवेंस (कटैली)
- एनागैल्लिस आरवेंसिस (कृष्ण नील)
- विसिया सटाइवा (अकरी)
- लेथाइरस स्पीसीज (चटरी मटरी)
- कनवाल्युलस आरवेंसिस (हिरण खुरी)

गेहूँ की फसल में तीन प्रकार से किसान खरपतवारों का नियंत्रण करते हैं

1. कर्षण क्रियाओं द्वारा
2. यांत्रिक विधि द्वारा

3. खरपतवारनाशक रसायन द्वारा

गेहूं में खरपतवारनाशी का प्रयोग दो तरह से किया जा सकता है-

- फसल और खरपतवार जमने से पहले (प्री-एमरजेंस)
- खरपतवार जब दो से चार पत्ती में हों (पोस्ट-इमरजेंस)
- फसल और खरपतवार जमने से पहले (प्री-इमरजेंस)

गेहूं बिजाई के तुरंत बाद पेंडीमिथालिन 3.3 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से 500 लीटर पानी में घोल कर छिडक़ाव करने से उगती हुए खरपतवारों का नाश किया जा सकता है।

पेंडीमिथालिन के प्रयोग से शुरूआती पहले फसल की मंडूसी/गेहूं का मामा एवं बथुआ का नियंत्रण किया जा सकता है।

खरपतवार जब दो से चार पत्ती में हो (पोस्ट-इमरजेंस)

गेहूं में पोस्ट-इमरजेंस खरपतवारनाशी का प्रयोग पहली सिंचाई (बुवाई के 21 दिन बाद) के 7 से 10 दिन बाद जब खेतो में पैर टिकने लगे और खरपतवार 2 से 4 पत्ती अवस्था में हो तभी किया जाना चाहिये।

बुवाई के उपरांत खरपतवार नियंत्रण निम्न खरपतवारनाशी का छिड़काव बुवाई के 30-35 दिन बाद 600 - 800 लीटर पानी में प्रति एकड़ फ्लैट - फैन नोजिल के द्वारा करना चाहिए।

- मिश्रित खरपतवार के लिएः टोटल (सल्फोसल्फ्यूरान + मेंट्सल्फ्यूरान) 16 ग्राम उत्पाद प्रति एकड़ या वेस्टा (क्लोडिनोफाप + मेंट्सल्फ्यूरान) 160 ग्राम उत्पाद प्रति एकड़ या बाडवे (सल्फोसल्फ्यूरान + कार्फेन्ट्राजान) 25 + 20 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर।
- संकरी पत्ती वाले खरपतवार के लिएः लीडर/सफल/फतेह (सल्फोसल्फ्यूरान) 13.5 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति एकड़ या टापिक (क्लोडिनोफाप) 60 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति एकड़. या फिनोक्साप्रॉप 10 ईसी 400 मिलीलीटर प्रति एकड़ की दर प्रयोग कर सकते हैं।
- चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार के लिएः 2, 4-डी. सोडियम साल्ट 400 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति एकड़ या एल्ग्रिप (मेंट्सल्फ्यूरान) 4 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर या एफिनिटि (कार्फेन्ट्राजान) 08 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति एकड़.।
- यदि खेत में मिश्रित खरपतवार के साथ मकोय भी हों तो बाडवे (सल्फोसल्फ्यूरान + कार्फेन्ट्राजान) का प्रयोग करना चाहिए।
- जमाव के बाद खरपतवारनाशी का प्रयोग 2-3 पत्ती की अवस्था पर करना चाहिए।

खरपतवार नाशक के प्रयोग में सावधानियां

- रसायनिक खरपतवारनाशी (उगने से पहले या उगने के बाद) का प्रयोग तब करें जब मिट्टी में नमी हो।
- खरपतवार उगने के बाद (पोस्ट-इमरजेंस) के खरपतवारनाशी का प्रयोग तभी करें जब खरपतवार-नाशी 2 से 4 पत्ती अवस्था में हों।
- किसी भी खरपतवारनाशक का छिडक़ाव मृदा नमी की अवस्था में ही किया जाय।
- मंडूसी की 2-3 पत्ती की अवस्था पर ही छिडक़ाव करें अन्यथा अनुकूल परिणाम प्राप्त नहीं होंगे।
- साफ़ मौसम में फ्लैट फेन/ फ्लड जेट नोजल से छिडक़ाव करें।
- खरपतवारनाशी रसायनों का समान रूप से छिडक़ाव करें।
- सल्फोसल्फ्यूरॉन का छिडक़ाव उस खेत में कदापि न करें जिसमें कोई अन्य फसल ली जा रही हो।
- फसलों में उपस्थित खरपतवारों के प्रकार एवं अवस्था के अनुसार खरपतवारनाशकों का चुनाव करना चाहिए।
- खरपतवार नाशकों का प्रयोग अनुशंसित मात्रा से कम या ज्यादा नहीं करना चाहिए।
- खरपतवार नाशकों के छिड़काव के पूर्व पम्प को आवश्यकतानुसार समायोजित कर लेना चाहिए।
- खाली पेट खरपतवार नाशकों का छिड़काव नहीं करना चाहिए।
- खरपतवार नाशकों का छिड़काव की दिशा हवा के दिशा के विपरित नहीं होना चाहिए।
- शरीर का कोई अंग या भाग खरपतवार नाशकों के सम्पर्क में कम से कम आना चाहिए, इसके लिए आवश्यक है कि छिड़काव करते समय दस्ताना, फुल पैंट, फुल कमीज एवं जूता पहनें।
- प्रत्येक बार स्प्रे टैंक में खरपतवार नाशक के घोल को तैयार करते समय ठीक से हिला एवं मिला लेना चाहिए।
- खरपतवार नाशकों के छिड़काव के समय धुम्रपान एवं खान-पान से बचना चाहिए।
- छिड़काव कार्य सम्पन्न हो जाने पर कपड़ा बदल कर स्नान अवश्य कर लेना चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्यप्रदेश

रागी (फिंगर मिलेट) का इतिहास एवं उसकी विभिन्न क्षेत्रों में महत्व

देवांशु दीक्षित शोध छात्र, कृषि प्रसार विभाग, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट, सतना (म.प्र.)

निकिता सिंह चौहान शोध छात्रा, कृषि प्रसार विभाग, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना

एक पीढ़ी पहले, बहुत सारे भारतीय, खास तौर पर दक्षिण भारत में, रागी या फिंगर मिलेट (फ्लेयुसीन कोराकेना एल) से परिचित थे। पर एक समय का जाना माना अनाज आज अधिकतर लोगों के आहार में से गायब हो चुका है। ये बहुत ही अचरज भरा और दुर्भाग्यपूर्ण है- क्योंकि मनुष्य के शरीर के लिये इसके पोषक और मेडिकल फायदे बहुत हैं। इसके अलावा ये बहुत ही अनुकूल फसल है जो भारत की जलवायु के हिसाब से एकदम सही है। इस तरह, इसका दुगुना महत्व है।

फिंगर मिलेट की शुरुआत अफ्रीका से हुई और इसकी फसल उगांडा और इथोपिया में हजारों सालों से उगायी जा रही है। भारत में ये लगभग 4000 साल पहले आयी, और हड़प्पन सभ्यता की पुरातत्व खुदाईयों में इसके होने के संकेत मिले हैं। अनेक आयुर्वेदिक ग्रंथों में मंडुआ के बारे में जानकारी मिलती है। मंडुआ या रागी (ragi) का पौधा लगभग 1 मीटर तक ऊचाँ होता है। इसके फल गोलाकार अथवा चपटे तथा झुर्रीदार होते हैं। मंडुआ की बीज गोलाकार, गहरे-भूरे रंग के, चिकने होते हैं। इसकी बीज (ragi seeds) झुर्रीदार और एक ओर से चपटे होते हैं। इन्हें ही मड़वा या मंडुआ कहा जाता है। इससे बने आहार मोटापे तथा डायबिटीज से ग्रस्त रोगियों के लिए विशेष रूप से फायदेमंद होता है।

मंडुआ के बारे में विशेष जानकारी

कई स्थानों पर मंडुआ का प्रयोग कोदो के नाम पर किया जाता है; लेकिन मुख्य कोदो इससे भिन्न प्रजाति है। कोदो का नाम कोद्रव (Paspalum scrobiculutum Linn.) है।

अलग-अलग भाषाओं में रागी या मंडुआ के नाम

Hindi – मंडुआ, रागी, मकरा, मंडल, रोत्का

English – कोराकैन मिलेट (Coracan millet), इण्डियन मिलेट (Indian millet), अफ्राप्कन मिलेट (African millet), पोको ग्रास (Poko grass), Finger millet (फिंगर मिलेट)

Sanskrit – मधूलिका, नर्तक, नृत्यकुण्डल, बहुपत्रक, भूचरा, कठिन, कणिश

Oriya–मांडिया (Mandia);उर्दू-मंडवा (Mandwa)

Assamese – मरूबा धान (Maruba dhan)

Konkani–गोन्डो (Gonddo), नाचणे (Nachne)

Kannada – रागी (Ragi)

Gujarati – पागली (Pagali), बावतोनागली (Bavtonagli), नावतोनागली (Navtonagli)

Bengali – मरुआ (Marua)

Tamil – केलवारागू (Kelvaragu), कयुर (Kayur)

Telugu – रागुलु (Ragulu)

Nepali – कोदो (Kodo)

Punjabi – चालोडरा (Chalodra), कोदा (Koda), कोदों (Kodon), मंधल (Mandhal)

Marathi (raagi in marathi) – नचीरी (Nachiri), नगली (Nagli), नाचणी (Nachini)

Malayalam – मुत्तरि (Muttari)

Rajasthani – रागी (Ragi)

Arabic – तैलाबौन (Tailabon)

Persian – मन्डवाह (Mandwah)

रागी में प्रोटीन की मात्रा

रागी में मिलने वाले प्रोटीन की मात्रा चावल में मिलने वाले प्रोटीन के लगभग बराबर ही है पर रागी की कुछ किस्मों में ये दुगुनी भी होती है। ज्यादा महत्वपूर्ण बात ये है कि ये प्रोटीन एक अलग ही तरह का है जो दूसरे अनाजों में नहीं होता। मुख्य प्रोटीन भाग ऐलेयूसिनीन है, जिसका जैविक गुण काफी ज्यादा होता है, जिससे ये आसानी से शरीर में घुल मिल जाता है। इसमें ट्रिप्टोफैन, सिस्टाइन, मैथियोमाइन और ऐरोमैटिक एमिनो एसिड्स की मात्रा भी काफी होती है। अगर आपको ये बहुत कठिन लग रहा है तो यूँ समझिये कि ये, मनुष्य के स्वास्थ्य के लिये बहुत ज़रूरी माने गये हैं, और दूसरे ज्यादातर अनाजों में नहीं मिलते। ज्यादा प्रोटीन कि ये मात्रा फिंगर मिलेट को कुपोषण दूर करने के लिये बहुत महत्वपूर्ण बनाती है। शाकाहारी लोगों के लिये खास तौर से ये अनाज प्रोटीन का एक अच्छा स्रोत है क्योंकि इसमें मेथियोनाइन होता है, जो प्रोटीन का 5% भाग देता है।

रागी में खनिज पदार्थों की उपलब्धता

रागी खनिजों का भी एक अच्छा स्रोत है। दूसरे अनाजों की तुलना में इसमें कैल्शियम की मात्रा 5 से 30 गुना ज्यादा होती है। इसमें फॉस्फोरस, पोटैशियम और लोहा भी अच्छी मात्रा में होता है। हड्डियों की घनता और उनके स्वास्थ्य के लिये कैल्शियम तो बहुत महत्वपूर्ण है ही। तो भोजन के अलावा फूड्स सप्लीमेंट्स लेने वाले लोगों के लिए फिंगर मिलेट एक ज्यादा स्वास्थ्यप्रद विकल्प है, खास तौर से उन लोगों के लिये जिन्हें ऑस्टियोपोटोसिस है, या हीमोग्लोबिन की कमी की समस्या है। यूनाइटेड स्टेट नेशनल एकेडेमीज़ द्वारा प्रकाशित अध्ययन "द लास्ट क्रॉस ऑफ अफ्रीका" में बताया गया है कि फिंगर मिलेट एक सुपर अनाज बन सकता है और ये भी कहा गया है, ÷इस फसल के बारे में दुनिया का दृष्टिकोण बदलने की ज़रूरत है। सभी मुख्य फसलों में ये अनाज सबसे ज्यादा पोषण देने वाला है÷। और आगे, ये बताया गया कि उगांडा और दक्षिणी सूडान में लोग दिन में एक ही बार खाना खाते हैं, पर उनका शरीर स्वस्थ्य और गठीला रहता है जो फिंगर मिलेट की वजह से है।

कैंसर से लड़ने में रागी की उपयोगिता

फिंगर मिलेट में एन्टीऑक्सीडेंट्स खूब अच्छी मात्रा में होते हैं और ये शब्द तो सेहत की किताबों में एक कहावत जैसा इस्तेमाल होता है। एन्टीऑक्सीडेंट्स ज्यादा ऑक्सीडेशन को रोकते हैं(जो एक अचरज भरी बात है) और इस तरह कोशिकाओं को होने वाले नुकसान को रोकते हैं नहीं तो कोशिकायें कमज़ोर पड़ कर कैंसरग्रस्त हो जाती हैं। फिंगर मिलेट के दानों की छाल में छुपे फेनोलिक एसिड्स, टैनिन्स और फ्लेवोनॉइड्स में बहुत असरदार एन्टीऑक्सीडेंट्स गुण होते हैं। सामान्य रूप से ये देखा गया है कि बाजरा या गेहूँ खाने वालों की तुलना में मिलेट खाने वालों में ग्रासनली का कैंसर होने की घटना कम होती है।

रागी के खाद्य रूप में उपयोग

अधिक उंचाई वाले और सूखाग्रस्त इलाकों में रागी आहार के लिये एक वरदान की तरह है। यहां रागी को दैनिक भोजन के रूप में उपयोग में लाया जाता है। गांवों में खेती करने वाले किसान फसल को काटने के बाद रागी के डंठलों का पराली के रूप में उपयोग करते हैं। हम जानते हैं कि भारत एक बहु विविधता वाला देश है। इसी के अनुसार देश के अलग अलग क्षेत्रों में रागी की अलग अलग किस्मों का उत्पादन किया जाता है। और विभिन्न प्रकार के आहारों के रूप में उपयोग में लाया जाता है। उदाहरण के लिये उत्तर भारत में रागी की रोटियां बनायी जाती है और हलुवे के रूप में भी उपयोग किया जाता है। वहीं दक्षिण भारत मे इडली और डोसा बनाने में रागी का उपयोग किया जाता है। वर्तमान में रागी के लड्डू और बिस्किट भी बनाये जा रहे हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

अंतरिम बजट और किसान

डॉ. भागचन्द्र जैन (प्राध्यापक)
(कृषि अर्थशास्त्र) प्रचार अधिकारी इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय कृषि महाविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

'कृषिरेव महालक्ष्मीः' अर्थात् कृषि ही सबसे बड़ी लक्ष्मी है। भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि कहलाती है। भारत विकासशील देश है। भारतीय अर्थव्यवस्था का संसार में पांचवा स्थान है। वर्ष 2023-24 में भारत की आर्थिक विकास दर 9.23 प्रतिशत होने का अनुमान लगाया गया हैं। वर्ष 2022-23 में खाद्यान का उत्पादन 32.35 करोड़ टन हुआ है। कृषि को लाभकारी व्यवसाय बनाने के लिए वर्ष 2024-25 के अंतरिम बजट में विभिन्न सार्वजनिक निजी निवेश (Public Private Investment) को प्रोत्साहन, सभी कृषि जलवायु क्षेत्रों में नैनो डी.ए.पी. का विस्तार तिलहन में किसानों को आत्म-निर्भर बनाना, फसल बीमा, डेयरी तथा मत्स्य विकास, ई-राष्ट्रीय कृषि बाजार, डिजीटल तकनीक आदि।

खाद्यान उत्पादन 2022-23

फसल	(उत्पादन करोड़ टन)	फसल	(उत्पादन करोड़ टन)
खाद्यान्न	32.35	मूंग	0.35
चावल	13.08	तिलहन	4.00
गेहूँ	11.22	मूंगफली	1.01
मोटे अनाज	5.27	सोयाबीन	1.28
मक्का	3.46	सरसों, तोरिया	1.28
जौ	2.004	गन्ना	46.88 करोड़ टन
दलहन	2.78	कपास	3.37 करोड़ गांठे प्रति गांठ 170 कि.ग्रा.
चना	1.36	पटसन	1.00 करोड़ गांठे प्रति गांठ 180 कि.ग्रा.

भारत में लगभग 26 करोड़ किसान है। अंतरिम बजट में कृषि को प्राथमिकता देते हुए दो हजार करोड़ की वृद्धि की गई है। वर्ष 2024-25 के बजट में कृषि का बजट 127 लाख करोड़ प्रस्तावित किया गया है।

फसल कटाई के बाद नुकसान रोकने के प्रयास

उचित रखरखाव न होने से फसल कटाई के बाद किसानों की फसल को भारी क्षति होती है, जिसे रोकने के लिए बजट में प्रावधान किया गया है, जैसे-फसलो का खेत से खलिहान तक पहुंचाने, उसका भण्डारण करने, पूर्ति श्रृंखला, प्रसंस्करण, विपणन और ब्राण्ड बनाने के लिए निजी तथा सार्वजनिक निवेश को बढ़ावा दिया जाएगा। आपूर्ति श्रृंखला (Supply Chain) तथा भण्डारण की पर्याप्त व्यवस्था न होने से प्रति वर्ष लगभग एक लाख करोड़ रूपये से अधिक मूल्य का अनाज तथा सब्जी बर्बाद हो जाती है। फसल कटाई के बाद भडारण हेतु सार्वजनिक निजी निवेश को बजट में बढ़ावा दिया गया है।

नैनो डी.ए.पी. को बढ़ावा

विभिन्न फसलों में नैनो यूरिया के सफलता के बाद सभी कृषि जलवायु क्षेत्रों में नैनो डी.ए.पी. का उपयोग किया जाएगा। बजट में उर्वरकों पर दिये जाने वाले अनुदान को घटा दिया गया है। गत वर्ष अनुदान की राशि 1.68 लाख करोड़ थी, जिसे अंतरिम बजट में 1.64 लाख करोड़ रूपये किया गया है। यूरिया अनुदान का बजट 7.5% घटाया गया है।

तिलहन में किसानों की आत्म-निर्भरता

भारत द्वारा अपनी जरूरत की 50 प्रतिशत तिलहन आयात की जाती है, इसलिए तिलहन में आत्म-निर्भर बनाने के लिए विशेष योजनाए चलायी जाएगी।

फसल बीमा

कृषि जोखिम भरा व्यवसाय है, फसलों को प्राकृतिक आपदा, कीट-बीमारी आदि से क्षति पहुंचती है जिसकी भरपायी हेतु भारत सरकार द्वारा विभिन्न फसलों का बीमा किया जाता है। राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के अंतर्गत 4 करोड़ से अधिक किसानों को फसल बीमा का लाभ मिला है। फसल बीमा योजना का बजट 2.7% घटाया गया है।

दुग्ध विकास और मत्स्य पालन

अंतरिम बजट में दुग्ध विकास (Dairy) हेतु व्यापक कार्यक्रम बनाया गया है जिससे दुधारू पशुओं की उत्पादकता को बढ़ाया जा सकेगा। डेयरी विकास हेतु बजट में 7105 करोड़ का प्रावधान किया गया है। नीली अर्थव्यवस्था हेतु जलवायु के अनुकूल कार्यो को बढ़ाना देने हेतु तटीय एक्वाकल्चर और समुद्री कृषि हेतु योजना शुरू की जाएगी। सीफुड निर्यात को बढ़ावा दिया जाएगा। इससे रोजगार के 55 लाख नए अवसर सृजित किए जाएंगे।

ई-राष्ट्रीय कृषि बाजार

इलेक्ट्रानिक राष्ट्रीय कृषि बाजार (Electronic National Agriculture Market) अर्थात ई-नाम से 1361 कृषि उपज मण्डियों को जोड़ा गया, जिससे किसान अपनी उपज को कही भी ऑनलाइन बेच सके। ई-नाम द्वारा किसानों ने 3 लाख करोड़ रुपए का व्यापार किया है, जिसमें मध्यस्थों के बिना किसानों के खाते में रकम आयी।

डिजिटल तकनीक

कृषि के लिए डिजिटल अवसंरचना विकसित की गई है, जिसके लिए डिजिटल पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर फॉर एग्रीकल्चर के अंतर्गत किसानों को मोबाईल पर उर्वरक बीज से लेकर, स्टार्ट-अप्स और बाजार की जानकारी मिलेगी। अंतरिम बजट में किसानों, ग्रामीणों के लिए कृषि योजनाओं, कार्यक्रमों को उपयोगी बनाया गया है, जिनका लाभ लेकन किसान ग्रामीण पशुपालक, फल -सब्जी उत्पादक नये आयाम स्थापित कर सकते हैं।

कृषि जगत में डिजिटल क्रांति

श्रीमती कोमल चावला, डॉ. विवेक कुमार सिंघल
डॉ. प्रफुल कुमार, डॉ ऋचा चौधरी
कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केन्द्र, महासमुंद (छत्तीसगढ़)

परिचय: जी-20 की अध्यक्षता करने वाला भारत देश विश्व में अपनी अर्थव्यवस्था को मजबूत करते हुए तेज गति से अग्रसित हो रहा है। हमारे देश की कुल जनसंख्या 1.27 अरब को पार कर गई है जिससे आने वाली भावी पीढ़ी को मानव जीवन की तीन महत्वपूर्ण आवश्यकता, रोटी, कपडा और मकान की आपूर्ति करने हेतु वर्तमान में ही इसकी तैयारी करनी होगी। बढ़ते शहरीकरण एवं औद्योगिकीकरण से कृषि भुमि सीमित होती जा रही है, तथा बढ़ते प्रदूषण से होने वाले मौसम में प्रतिकूलता एवं उन्नत तकनीक के अभाव से कृषि क्षेत्र में अधिक कार्य करने की आवश्यकता है।

कृषि के अंतर्गत, हमने इसके बहु-विषयक वर्गों में कई क्रांतियाँ देखी हैं, जैसे अनाज उत्पादन के लिए हरित क्रांति, मछली उत्पादन के लिए नीली क्रांति, लाल क्रांति (टमाटर उत्पादन), पीली क्रांति (तिलहन उत्पादन), आदि। भारत सरकार की प्रमुख योजना डिजिटल इंडिया के शुभारम्भ के बाद कृषि क्षेत्र में भी वैज्ञानिक विभिन्न प्रकार के कंप्यूटर मॉडल, स्मार्ट फोन ऐप, ई-कृषि बाजार प्रणाली आदि के विकास में काम कर रहे हैं, ताकि इनपुट संसाधनों का पूरा उपयोग किया जा सके और कुशल आउटपुट प्राप्त किया जा सके। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते है कि अब कृषि क्षेत्र में डिजिटल क्रांति का समय है।

कृषि सूचना विज्ञान: इंफॉर्मेटिक्स सूचना का एक विज्ञान है जो विषय संबंधित डेटा को परिवर्तित, संसाधित और संग्रहीत करता है और इसे उपयोगी जानकारी में परिवर्तित कर शोध या अध्ययन में उपयोग किया जा सकता है। एग्रो इंफॉर्मेटिक्स में कृषि डेटा का अध्ययन कंप्यूटर प्रौद्योगिकियों का उपयोग करके किया जाता है। कृषि सूचना विज्ञान कृषि सूचना, कृषि सूचना प्रसंस्करण और सूचना प्रणाली का विज्ञान है। कृषि सूचना विज्ञान कृषि में नवीन विचारों, वैज्ञानिक तकनीकों और कंप्यूटर विज्ञान के ज्ञान को लागू करने के बारे में है। यह मुख्य रूप से सूचना प्रौद्योगिकी को कृषि डेटा के प्रबंधन, विश्लेषण और अनुप्रयोग से जोड़ता है। कृषि एवं कृषि सम्बंधित क्षेत्र में विभिन्न कंप्यूटर हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर एवं कम्प्यूटरीकृत नियंत्रण प्रणाली जैसे- विशेषज्ञ प्रणालियों, क्रॉप मॉडल्स और सिमुलेशन मॉडल का विकास किया जा रहा है।

कृषि सूचना विज्ञान की विशेषताएं: 1.एग्रो इन्फार्मेटिक्स कंप्यूटर विज्ञान के क्षितिज का विस्तार करने के लिए नवीन विचारों, तकनीकों और वैज्ञानिक ज्ञान के साथ कृषि में अनुप्रयोग है। 2.यह कृषि डेटा के प्रबंधन और विश्लेषण के लिए प्रयुक्त सूचना प्रौद्योगिकी है। 3.इसमें आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, आर्टिफिशियल न्यूरल नेटवर्क, निर्णय समर्थन प्रणाली, विशेषज्ञ प्रणाली, भौगोलिक सूचना प्रणाली, कृषि से संबंधित सूचना प्रणाली, जेनेटिक एल्गोरिदम, इत्यादि सॉफ्टवेयर के साथ प्रोग्रामिंग भाषा जैसे विविध क्षेत्रों को शामिल किया गया है। 4.यह डेटाबेस प्रौद्योगिकियाँ, नेटवर्किंग प्रौद्योगिकियाँ, वेब प्रौद्योगिकियाँ, मल्टीमीडिया प्रौद्योगिकियाँ, आदि पारंपरिक आईटी घटकों से संबंधित है । 5.यह क्षेत्र कृषि विज्ञान और सूचना विज्ञान के अलावा, अन्य संबद्ध क्षेत्रों जैसे-बागवानी, पशु चिकित्सा विज्ञान, पारिस्थितिकी, भूगोल, मानव विज्ञान, आदि के साथ भी जुड़ा हुआ है। 6.स्मार्ट खेती मुख्य रूप से इंटरनेट ऑफ थिंग्स पर निर्भर करती है जिससे किसानों और उत्पादकों के शारीरिक श्रम की आवश्यकता समाप्त हो जाती है और इस प्रकार हर संभव तरीके से उत्पादकता में वृद्धि होती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

पशुओं में सांप के काटने का प्रबंधन और उपचार

डॉ. पीयूष कुमार, डॉ. रजनी फ्लोरा कुजुर
डॉ. आर. सी. घोष, डॉ. डी. के. जोल्हे
डॉ. प्रीती सिंह, डॉ. सविता साहू
डॉ. शुभम चन्द्र पाल, डॉ. दिव्या महिलाने
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय अंजोरा, दुर्ग (छ.ग.)

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी आबादी का एक बड़ा प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में रहता है और ज्यादातर कृषि पर निर्भर है जहां पशुधन उत्पादन हावी है। ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों को कई बार पशुओं की बीमारी और सर्पदंश जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। माना जाता है कि बकरियों की तुलना में मवेशियों को सर्पदंश का अधिक खतरा होता है। सर्पदंश गर्मियों में मवेशियों के लिए एक गंभीर समस्या हो सकती है जब मौसम गर्म होता है और सांपों के लिए अपने बिलों से बाहर निकलने के लिए चारागाहों पर शिकार करने के लिए अनुकूल होता है जहा मवेशी चरते हैं। चरने के दौरान मवेशियों का सांपों के संपर्क में आने का सबसे ज्यादा खतरा होता है। सर्पदंश को दुनिया भर में पशुधन के लिए एक गंभीर समस्या के रूप में बताया गया है। सर्पदंश से विधाक्तता के लिए तत्काल चिकित्सा ध्यान देने की आवश्यकता होती है। कुछ किसान या तो संसाधन विहीन हैं या शहरी क्षेत्रों से बहुत दूर रहते है और वे आसानी से अपने पशुओं के लिए आधुनिक औषधि प्राप्त नहीं कर सकते हैं। ऐसे किसान आमतौर पर पारंम्परिक उपायों का इस्तेमाल करते हैं। सर्पदंश ग्रामीण क्षेत्रों में आम हैं, विशेष रूप सें जंगल और जंगल के किनारे कें गांवों में।

सांप के काटने की पहचान

जब एक भेड़ को एक जहरीले सांप ने काट लिया है, तो जानवर को निगलने में कठिनाई का अनुभव होगा, जीभ मुँह से ढीली हो जायेगी और जानवर लार टपकायेगा। इसके बाद पेट की सामग्री नथूने के माध्यम से बाहर आती है भेड़ लेट जाती है तथा हीलने डुलने में भी असमर्थ रहती है। मौत श्वसन विफलता के परिणाम स्वरूप हो सकती है, अगर कोबरा द्वारा काटा जाता है , या जानवर अपनी लार में डूब सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि मृत्यु कई बार काटने से होती है तथा अन्य कारक जैसे-जहर की मात्रा, गाय और सांप दोनों का आकार, जानवर की उम्र और स्वास्थ शामिल है। खराब स्वास्थ वाले वृद्ध गाय की तुलना में एक स्वस्थ गाय के जहर के प्रभाव में आने की सम्भावना कम होती है। कहा काटा गया वह भी महत्वपूर्ण है। आमतौर पर, कटान सिर, चेहरे और थूथन क्षेत्र पर होते है जब जानवर चर रहा होता है और पैरों पर काटने से कहीं ज्यादा गंभीर होता है।

काटने के प्रकार

जहरीले सांप दो श्रेणियों मे आते है पहला एलापिड्स, जिसमें कोबारा, करैत, मांबा तथा कोरल सर्प आते है। इनके दाँत छोटे और नुकीले होते है और अपने जहर को शिकार में डालता है इसका जहर तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करता है और श्वसन केंन्द्र और मांसपेशियों के पक्षघात् के कारण मृत्यु का कारण बनता है। दूसरा वाइपर जिसमें रसेल वाइपर, पिट

वाइपर, रैटल सर्प, पफ एडर्स आते है। इनके दाँत लम्बे, खोखलें, हाइपोडर्मिक सुई जैसे नुकीले होते हैं जो मांस में घुस जाते हैं, जहर को ऊतक में गहराई तक पहुँचाते है। यह रक्त वाहिकाओं और ऊतक को भारी नुकसान पहुंचाता है। स्थानीय रक्तस्त्राव और ऊतक परिगलन हो सकते हैं जो पूरी तरह से ठीक हो जाते हैं। हालांकि, पशुधन में कई सांप के काटने को 'ड्राई बाइट' माना जाता है, जहाँ कोई जहर इंजेक्ट नहीं किया जाता है। एक सांप किसी जानवर का आकार निर्धारित कर सकता है और उसका जहर एक मूल्यवान संसाधन है जिसे वह अंधाधुंध बर्बाद नही करता है इसलिये ड्राई बाइट को चेतावनी के रूप में दिया जाता है।

प्राथमिक चिकित्सा

पशु चिकित्सक को बुलाने से पहलें यह पता लगाने की कोशिश करें की क्या जानवर को वास्तव में किसी जहरीले सांप ने काटा है। हालांकि जानवर के शरीर पर बालों के कारण काटने का पता लगाना मुश्किल हो सकता है, रक्तस्त्राव या सूजन एक अच्छा संकेत है। एक जहरीले सांप कें काटने से दो काफी विशिष्ट पंचर घाव हो जाते है। एक गैर-विषैले सांप कें काटने सें दांतो कें कोई निशान नहीं छुटेंगें, जब तक कि यह एक बड़े अजगर से न हो।

कुछ सुझाव

- यदि जानवर को नथूने या थूथन में काट लिया गया है, तो ये क्षेत्र सूज जाएंगे, जिससें जानवर को सांस लेने में मुश्किल होगी। खुले वायुमार्ग को बनाएँ रखने के लिए नाक सें साफ पाइप का एक टुकड़ा पास करें। जहाँ जानवर पक्षाघात का संकेत दिखाता है, पाइप के द्वारा सांस लेने से पशु चिकित्सक कें आने तक उसे जीवित रखने में मदद मिलेगी।
- जानवर को शांत रखें, क्योकि बढ़ी हुई ह्रदय गति शरीर में और अधिक तेजी सें जहर फैलायेगी।
- घाव को कभी भी काटे नही और न ही जहर को चूसने की कोशिश करें। अगर आपकें मुंह में कट है , तो आपको भी जहर का असर हो सकता है।
- कोबरा के काटने के मामले में (थूकने वाले कोबा को छोड़कर) दंश पर एक दबाव पट्टी लगाएँ। यह एक टूर्निकेट नहीं है क्योंकि इसका उद्देश्य रक्त के प्रवाह को रोकना नहीं है, बल्कि लसिका प्रणाली में विष के अवशोषण को धीमा करना है (यदि एक वाइपर के काटने पर लागू किया जाता है, जहां सूजन विकसित होती है, तो यह अच्छे के बजाए नुकसान करेगा) ।
- वाइपर और थूकने वाले कोबरा के दंश के लिए, बस जानवर को शांत रखें, और जितनी जल्दी हो सके पशु चिकित्सा उपचार की तलाश करें। गर्म या ठंडा सेक न लगाएँ, क्योकि इससे ऊतक और भी अधिक क्षतिग्रस्त हो सकते है।
- किसी भी प्रकार के वैकल्पिक उपचार का प्रबंध न करें। सांप के काटने का एक मात्र सिद्व उपचार एंटी-वेनम हैं।
- आपका पशु चिकित्सक यह निर्धारित करने में सक्षम होना चाहिए कि जानवर को सांप ने काटा था या नहीं, जहर इंजेक्ट किया था कि नहीं, यह किस प्रकार का सांप था और जानवर को एंटी-वेनम की आवश्यकता है कि नहीं ।

सांप के काटने की पहचान कैसे करें?

सांप के काटने कें संकेतों और लक्षणों को पहचाने और प्रभावित जानवर को जल्द से जल्द अस्पताल ले जाएँ। कुत्ते, बिल्लियाँ और घोड़े इन सभी में खतरा ज्यादा रहता है, हांलाकि जिज्ञासु कुत्ते सबसे अधिक बार प्रभावित होते है। सांप के जहर के पहले लक्षण आमतौर पर उत्तेजना, कापना, लार आना और उल्टी होना, धीरे-धीरे कमजोरी, डगमगाने वाली चाल और अंततः पक्षाघात होना है। पीड़ित कुत्तों में अक्सर पुतलियाँ फैल जाती है जिससे कम दिखायी देने लगता है और उनके रक्त में थक्के जमने की समस्या होने लगती है। सांप द्वारा काटे गए जानवर में लक्षण, सांप के प्रकार और कितना जहर डाला गया है उसपे निर्भर करता है जो कि निम्नलिखित है।

- काटे गए स्थान पर सूजन और जलन ■ उल्टी करना
- लार टपकना और कापना ■ पुतलियां का फैलना
- अनैच्छिक मल-मूत्र का होना ■ पेशाब का रंग लाल या भूरा होना ■ तेजी सें सांस लेना/हांफना ■ काटने के घाव या दस्त से खून आना। ■ पक्षाघात (पिछले पैरों से शुरू होकर सिर की ओर बढ़ना) ■ जानवर तुरन्त गिर सकता है लेकिन फिर पूर्ण रूप से ठीक हो जाता है फिर अगले घंटे के दौरान लक्षणों का विकास होता हैं।

इलाज

किसी भी प्रकार के वैकल्पिक उपचार का प्रबंध न करें। सांप के काटने का एक मात्र सिद्व उपचार एंटी-वेनम है। सांप के काटने की पहचान पशु द्वारा दिखाये गये लक्षणों से करे और तुरन्त ही निकट के पशुचिकित्सक से सम्पर्क करें।

छत्तीसगढ़ में पाये जाने वाले सांप

1.इंडियन कोबरा 2.किंग कोबरा 3.अजगर 4.रसेल वाइपर 5.करैत 6.रैट साप (धामन) 7.लाल मूंगा 8.बैडेड क्रेट (अहिराज) 9.सॉ-स्केल्ड वाइपर

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

आलू की फसल में लगने वाले प्रमुख रोग एवं उनका नियंत्रण

सुमन पाण्डेय, डॉ. निशा जांगड़े
(सहायक प्राध्यापक सब्जी विज्ञान विभाग) कृषि महाविद्यालय, इं.गा.कृ.वि.वि.रायपुर (छ.ग.)

दियारा खेती नदी के किनारे या बेसिन पर सब्ज़ियां उगाने की बहुत पुरानी प्रथा है. वर्तमान में दक्षिण एशियाई देशों में कुकुरबिटेसियस सब्ज़ियां बड़े पैमाने पर नदी के किनारे उगाई जा रही हैं. जिसे दियारा खेती या नदी के किनारे की खेती कहते हैं. नदी के किनारे खीरा, खरबूज, परवल, तरबूज और लौकी की खेती दिसंबर से जून के दौरान की जाती है.

आमतौर पर भूमिहीन,छोटे और सीमांत किसान इन ज़मीनों पर मौसमी सब्ज़ियों और फलों की खेती विपणन के लिए करते हैं. नदी के किनारे या नदी घाटियों पर खीरे की सब्ज़ियां उगाना एक अलग प्रकार की खेती है. इन क्षेत्रों को उत्तर प्रदेश और बिहार में 'दियारा भूमि' भी कहा जाता है. दियारा खेती के कई फ़ायदे हैं जैसे-जल्दी उपज मिलना, सिंचाई में आसानी, कम लागत, प्रति यूनिट क्षेत्र में अधिक लाभ और अधिक उपज, अधिक उर्वरता के कारण कम खनिज आवश्यकता, सीमित खरपतवार वृद्धि, कीट और रोग के नियंत्रण में आसानी, कम लागत वाली श्रम सुविधाएं इत्यादि।

दियारा खेती के तरीके

गड्ढे या खाई बनाना और भरना

अक्टूबर-नवंबर के दौरान दक्षिण-पश्चिम मॉनसून की समाप्ति और बाढ़ के बाद गड्ढे या खाइयां या चैनल तैयार किए जाते हैं. नमी और उच्च तापमान की उपलब्धता के प्रबंधन के लिए उत्तर-पश्चिम दिशा में खाई खोदी जाती है. जल स्तर की ऊंचाई के आधार पर चैनल 50-60 सेंटीमीटर चौड़ा और 45-90 सेंटीमीटर गहरा होना चाहिए. आम तौर पर 60 सेमी से 90 सेमी नदी के तल में जल स्तर की ऊंचाई होती है. कभी-कभी लगभग 35-45 सेमी व्यास के गोलाकार

गड्ढे तैयार किए जाते हैं जिनकी गहराई 90 सेमी होती है. गड्ढों/खाइयों को गोबर की सड़ी हुई खाद या किसी अन्य कार्बनिक अपशिष्ट से भरा जाता है.

खाद और उर्वरक

पहली बार अच्छी तरह से सड़ी गोबर की खाद या मूंगफली की खली या अरंडी की खली को दिया जाता है. सिंगल सुपर फास्फेट, यूरिया या किसी मानक उर्वरक मिश्रण को भी बेसल अनुप्रयोग के रूप में दिया जाता है. थिनिंग करते समय 30-60 ग्राम यूरिया प्रति गड्ढे में बुवाई के 30-40 दिनों के बाद, 40 ग्राम यूरिया की टॉप ड्रेसिंग आमतौर पर दो बार में की जाती है.

बीज दर और अंकुर/रोपण का समय

फ़सलों के अनुसार बीज की दर अलग-अलग होती है अर्थात एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए खीरे में 2-3 किलो, करेला और लौकी में 4-5 किलो, लौकी और तुरई में 3 किलो पर्याप्त रहती है. बीज की बुवाई आम तौर पर नवंबर के पहले और दूसरे सप्ताह में और दिसंबर के पहले सप्ताह तक कुछ समय के लिए की जाती है. देर से बुवाई जनवरी के पहले सप्ताह में की जाती है. बीज को 3-4 सेमी की गहराई पर बोया जाता है. सामान्यतः दो बीज एक ही स्थान पर बोये जाते हैं. यदि तापमान बहुत कम है तो पहले से अंकुरित बीजों को बोया जाता है. इसके लिए बीजों को 24 घंटे पहले भिगोकर रखना चाहिए और बाद में नम बीजों को बोरे में या सूती कपड़े से ढककर एक सप्ताह तक गर्म स्थान पर अंकुरित होने के लिए रखना चाहिए. इस तरह से 5-6 दिनों के बाद अंकुरण शुरू हो जाता है. जैसे ही अंकुर बीज आवरण के बाहर दिखाई देते हैं, उन्हें रोप दिया जाता है. सामान्यतः 3-4 पूर्व-अंकुरित बीज/हिल्स को गड्ढों में बोया जाता है.

सिंचाई

स्प्रिंकलर या ट्रिकल सिंचाई प्रणाली काफ़ी फ़ायदेमंद होती है क्योंकि किसानों द्वारा लगाए गए अधिकांश पोषक तत्व रेतीली मिट्टी के कारण बह जाते हैं, जब तक कि जल स्तर का प्रबंधन नहीं किया जाता है.

छत बनाने की तैयारी

उत्तर-पश्चिम भारत में जब दिसंबर-जनवरी में सर्दियों का तापमान 1-2 डिग्री सेल्सियस तक गिर जाता है तो पौधे को कम तापमान और ठंढ से प्रारंभिक अवस्था में सुरक्षा की आवश्यकता होती है. स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री जैसे धान के भूसे या गन्ने के पत्तों से बनी छत द्वारा सुरक्षा प्रदान की जाती है. फ़रवरी के महीने में रेत पर गीली घास बिछा दी जाती है. यह कोमल पौधों/फलों को गर्मियों के दौरान चिलचिलाती रेत की गर्मी से बचाने में मदद करता है और तेज़ हवाओं के दौरान बेलों को भी बचाता है. पाले से सुरक्षा के रूप में पॉलीइथाइलीन कवर का उपयोग करने के तरीके विकसित किए जाने बाकी हैं.

खरपतवार प्रबंधन

दियारा भूमि क्षेत्रों में प्रमुख खरपतवार पॉलीगोनम प्रजातियां, यूफोरबिया हर्टा, एक्लिप्टा प्रोस्ट्रेटा, सीडा प्रजातियां और फिम्ब्रिस्टलीलिस डाइकोटोमा आदि हैं. इन खरपतवारों को मैन्युअल रूप से हाथों से हटाया जा सकता है, क्योंकि अतिरिक्त रेत के कारण मिट्टी काफ़ी ढीली हो जाती है. किसी भी खरपतवारनाशी का उपयोग नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि यह नदी के बहते पानी के साथ मिल सकता है और मानव, पशु और मछलियों आदि के लिए ख़तरनाक हो सकता है।

फलों की कटाई और उपज

खीरे की कटाई तब करनी चाहिए जब फल काफी कोमल और खाने योग्य हो, करतोली, ककरोल और परवल रोपाई के क्रमशः 50,60 और 80 दिनों के बाद फूलने लगते हैं. आम तौर पर 8-10 गांठों के बाद प्रत्येक गांठ में फूल आने के 30-35, 28-35, 15-18 दिनों के बाद फल लगते हैं. खाद्य परिपक्व फलों को 2-3 दिनों के अंतराल पर तोड़ लेना चाहिए, अन्यथा गुणवत्ता में गिरावट शुरू हो जाती है और बीज परिपक्व होने के कारण फल की जून के अंत से अक्टूबर के अंत तक निरंतर कटाई की जा सकती है.

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

जैव उर्वरक प्रसिद्ध क्यों नहीं है?

महिमा पाण्डेय, अनुष्का श्रीवास्तव
रूहे हसीन, जागृति सिंह, अनुराधा पटेल
मॉलिक्यूलर बायोलॉजी एंड बायोटेक्नोलॉजी विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ. प्र.)

गोविन्द मिश्रा अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

हम पहले से ही ग्रीक शब्द बायोस से परिचित हैं जिसका अर्थ जीवन है। जैसा कि पारंपरिक परिभाषा में कहा गया है, उर्वरक फसल की वृद्धि और विकास को बढ़ाने के लिए मिट्टी में डाले जाने वाले रसायन हैं। "जैवउर्वरक" एक जीवन युक्त उर्वरक है, हाँ वास्तव में। तो एक रसायन में जीवन कैसे होता है? सूक्ष्मजीवों के रूप में। पर्याप्त मात्रा में घोल में लाए जाने पर प्राथमिक और साथ ही द्वितीयक पौधों के पोषक तत्वों को ठीक करने की अविश्वसनीय क्षमता वाले छोटे सूक्ष्म जीव संख्याएँ, यह एक जीवित चीज़ के रूप में कार्य करती है जो पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करती है।

क्या सूक्ष्मजीवों से युक्त किसी घोल का उपयोग जैव उर्वरक के रूप में किया जा सकता है? नहीं, यह संभव नहीं है। इसे कुछ विशिष्ट मानदंडों को पूरा करना होगा-

1.सही प्रकार के सूक्ष्मजीव - वे जो पौधों के उपयोग के लिए पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व स्थापित करने में सिद्ध हों।

2.पर्याप्त संख्या - 10^9 सीएफयू (कॉलोनी बनाने वाली इकाइयां) प्रति एमएल।

3.सक्रिय उपभेद - वे विकास के लॉग चरण में होने चाहिए और बहुत अधिक जीवित होने चाहिए।

उदाहरण: साइनोबैक्टीरिया, एजोला, राइजोबियम एसपी, एज़ोटोबैक्टर एसपी, और एज़ोस्पाइरिलम एसपी नाइट्रोजन की विशेष आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक हो सकते हैं। इन जैवउर्वरकों का प्रति हेक्टेयर 20-60 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रदान किया जा सकता है। फ़ेरेटुरिया ऑरान्टिया, ससेडोमोनास एक्सपी, और बैसिलस एसपी उपजातियाँ, और एस्परगिलस एसपी, पेनिसिलियम एसपी, और स्यूडोमोनास एसपी नाइट्रोजन, कालियम, और फॉस्फोरस को प्रदान कर सकते हैं। इन जैवउर्वरकों का प्रति हे. 20-30 किलोग्राम कालियम स्थिर कर सकता है। माइकोरिज़ल जैवउर्वरक जैसे की जैवउर्वरक Zn, Cu, P, और K के स्थिरीकरण में सहायक हो सकते हैं।

रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर जैव उर्वरकों के उपयोग के गुण: ये मिट्टी के स्वास्थ्य और स्थिरता में सुधार करने में मदद करते हैं। यह वैज्ञानिक रूप से सिद्ध हो चुका है कि जैव उर्वरक डालने से मिट्टी 40 साल तक स्थिर रह सकती है, जो अकेले रासायनिक उर्वरकों का उपयोग करने पर केवल 10 साल तक होती है। पीजीपीआरएस (प्लांट ग्रोथ प्रमोटिंग राइजोबैक्टीरिया) को पोषित करके पौधों की चयापचय प्रक्रियाओं में मदद करता है जबकि रासायनिक उर्वरक केवल उपज बढ़ा सकते हैं। पौधे या मिट्टी जैवउर्वरकों

की अधिकता को सहन कर सकते हैं, लेकिन एक बार अतिरिक्त रसायन डालने पर यह पौधों या मिट्टी की वनस्पतियों के लिए विषाक्त हो जाता है। ये कम महंगे हैं क्योंकि इनकी बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है और रासायनिक उर्वरकों की तुलना में इनके उत्पादन के लिए कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

जैव उर्वरकों के उपयोग में कुछ बाधाएँ होती हैं-

उपज में बढ़ोतरी का आसानी से पता नहीं चल पाता है: यह उपज में बढ़ोतरी का नतीजा कोई शेयर बाजार नहीं होता, जिससे किसान को आसानी से पता नहीं चल पाता है कि जैव उर्वरक का प्रभाव हुआ है या नहीं।

ब्याज की धीमी दर: सभी जैव उर्वरक कभी-कभी लाभ कमाने के लिए आवश्यक मानदंड को पूरा नहीं करते हैं, जो किसानों को उनके निवेश का परिणाम निर्धारित करने में कठिनाई पहुंचा सकता है।

निर्माता उचित कच्चे माल का उपयोग नहीं कर सकता है: कुछ उत्पादक उचित कच्चे माल का उपयोग नहीं कर सकते हैं जो अधिक महंगा होता है, जिससे उत्पादकों के लिए इस्तेमाल करना मुश्किल हो सकता है।

उचित भंडारण और परिवहन सुविधाओं की कमी: इसके कारण, जैविक गतिविधि ख़राब हो जाती है और किसान इसका उपयोग करने में अनिच्छुक होते हैं।

उपयोग के उचित तरीकों के अभाव: निम्न गुणवत्ता और अवांछनीय मिट्टी की कमी हो सकती है जब तक उपयोग के उचित तरीकों की गारंटी नहीं है।

प्रतिक्रियाएं

अभाव के साथ संबंधित चुनौतियां: राइजोबियम फेजोली और राइजोबिया हेतु सही प्रकार के सूक्ष्मजीवों का अभाव चुनौतीपूर्ण हो सकता है, विशेष रूप से सीमित क्षेत्रों और विशिष्ट परिस्थितियों में। इसका संशोधन करने हेतु अधिक अनुसंधान और प्रौद्योगिकी विकास की आवश्यकता है।

जैव उर्वरक किसान हितैषी क्यों नहीं हैं? जैव उर्वरक के अलावा भी कई अन्य कारकों का महत्वपूर्ण योगदान है, जैसे कि मौसम, खेती की तकनीक, और उपज की विशेषताएं। यह साबित करता है कि जैव उर्वरक मात्रात्मक उपाय नहीं हैं और इसका सफल उपयोग अन्य कारकों के साथ संयुक्त होना चाहिए।

रासायनिक उर्वरकों के पूरक: जैव उर्वरक एकमात्र उपाय नहीं हैं। यह अच्छा होता है कि उन्हें रासायनिक उर्वरकों के साथ संयुक्त रूप से उपयोग किया जाए, ताकि उपज में सुधार हो सके। यह संबंधित उपयोगी तकनीकों का उपयोग करते हुए, जैव उर्वरक और रासायनिक उर्वरकों की सही संयोजना किया जा सकता है।

मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की कमी: सूक्ष्मजीवों को अपनी चयापचय गतिविधियों के लिए भोजन की आवश्यकता होती है जो वे मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ से प्राप्त करते हैं। लेकिन आधुनिक समय की मिट्टी अस्वस्थ है क्योंकि यह रोगाणुओं के प्रसार को रोकने का काम करती है।

विशिष्टता: रासायनिक उर्वरकों के विपरीत, सभी जैव उर्वरकों को विभिन्न पौधों पर लागू नहीं किया जा सकता है। विशिष्ट पौधों के लिए, अधिकतम रिटर्न प्राप्त करने के लिए विशिष्ट जैव उर्वरकों की आवश्यकता होती है।

आवेदन की विस्तृत प्रक्रिया: चूंकि ये जीवित सामग्री हैं, इसलिए इन्हें कीटनाशकों, कीटनाशकों, पारंपरिक उर्वरकों जैसे रसायनों के साथ लागू नहीं किया जाना चाहिए। साथ ही इन्हें बुआई से ठीक पहले या समय पर लगाना चाहिए। उपरोक्त शर्तों का पालन न करने से मौजूद सूक्ष्मजीव मर जाएंगे और इससे उत्पाद अव्यवहार्य हो जाएगा।

लघु जीवन काल: रासायनिक उर्वरकों के विपरीत, जिन्हें संग्रहीत किया जा सकता है और क्रमिक मौसम की फसलों में उपयोग किया जा सकता है, जैव उर्वरकों का जीवनकाल 6 महीने का छोटा होता है या बिना किसी विशेष भंडारण सुविधाओं के शायद ही कभी एक वर्ष तक होता है।

किसानों की अर्थव्यवस्था: भारतीय किसान इतने गरीब हैं कि वे जैवउर्वरकों के प्रयोग और भंडारण हेतु विशेष सुविधाएं उपलब्ध नहीं करा पाते हैं और उन्हें इसके स्थान पर रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करना आसान लगता है।

किसानों में तकनीक-प्रेमीपन की कमी: भारतीय किसान जैवउर्वरकों का उपयोग करने के लिए ठीक से सुसज्जित नहीं हैं, जैसा कि इस काम में लगे तकनीकी अधिकारियों के पास है। उचित मार्गदर्शन का अभाव है.

प्रयोग का डर: भारतीय किसान रासायनिक उर्वरकों से परिचित हैं और वे जैव उर्वरकों का उपयोग करने में अनिच्छा दिखाते हैं क्योंकि वे इससे परिचित नहीं हैं कि परिणाम क्या हो सकते हैं।

भारत के कृषक समुदाय के बीच जैवउर्वरकों को और अधिक प्रसिद्ध बनाने हेतु उठाए जाने वाले उपाय

सरकार को रासायनिक उर्वरकों के उपयोग में कमी के लिए सख्त कदम उठाने चाहिए क्योंकि वे न केवल मिट्टी को नुकसान पहुंचाते हैं, बल्कि पूरे जीवमंडल को नुकसान पहुंचाते हैं। साथ ही, किसानों को इसके प्रयोग और उपयोग की प्रक्रिया के बारे में मार्गदर्शन प्रदान किया जाना चाहिए, उनके लाभों को और अधिक स्पष्ट रूप से समझाया जाना चाहिए। स्थानीय प्रशिक्षण या विज्ञापन सत्र भी उपयोगी साबित हो सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

किण्वित डेयरी उत्पादों में मौजूद सूक्ष्मजीवों का मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव

विशाल कुमार (शोध छात्र) डेयरी विज्ञान और खाद्य प्रौद्योगिकी विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005 (उ.प्र.)

आकांक्षा स्नातकोत्तर छात्रा,डेयरी विज्ञान और खाद्य प्रौद्योगिकी विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005 (उ.प्र.)

परिचय- किण्वित डेयरी उत्पाद हमारे आहार में पोषक तत्व प्रदान करते हैं, जिनमें से कुछ किण्वन के दौरान सूक्ष्मजीवों की क्रिया द्वारा उत्पन्न होते हैं। ये उत्पाद विविध माइक्रोबायोटा से आबाद हो सकते हैं जो भोजन के ऑर्गेनोलेप्टिक और भौतिक-रासायनिक विशेषताओं के साथ-साथ मानव स्वास्थ्य पर भी प्रभाव डालते हैं। अम्लीकरण स्टार्टर लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया मोल्ड्स द्वारा किया जाता है, और पकने के दौरान यीस्ट प्रभावी हो जाते हैं और डेयरी उत्पादों में सुगंध और बनावट के विकास में योगदान करते हैं। प्रोबायोटिक्स आम तौर पर नॉनस्टार्टर माइक्रोबायोटा का हिस्सा होते हैं, और उनका उपयोग हाल के वर्षों में बढ़ाया गया है। किण्वित डेयरी उत्पादों में लाभकारी यौगिक हो सकते हैं, जो उनके माइक्रोबायोटा (विटामिन, संयुग्मित लिनोलिक एसिड, बायोएक्टिव पेप्टाइड्स और गामा-एमिनोब्यूट्रिक एसिड, अन्य) की चयापचय गतिविधि द्वारा उत्पादित होते हैं। कुछ सूक्ष्मजीव जहरीले यौगिक भी छोड़ सकते हैं, जिनमें सबसे कुख्यात बायोजेनिक एमाइन और एफ्लाटॉक्सिन हैं। हालांकि आम तौर पर सुरक्षित माना जाता है, किण्वित डेयरी उत्पाद रोगजनकों द्वारा दूषित हो सकते हैं। यदि निर्माण या भंडारण के दौरान प्रसार होता है, तो वे छिटपुट मामलों या बीमारी के प्रकोप का कारण बन सकते हैं।

परिचय: किण्वित डेयरी उत्पाद हमारे आहार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं और इनमें विविध माइक्रोबायोटा हो सकते हैं। दूध के किण्वन के दौरान लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया मुख्य खिलाड़ी होते हैं, जो लैक्टोज को लैक्टिक एसिड में परिवर्तित करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप अम्लता में वृद्धि होती है, जिससे लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया के अलावा अन्य सूक्ष्मजीवों की वृद्धि की स्थिति तेजी से प्रतिकूल हो जाती है। किण्वित डेयरी प्रसंस्करण में शामिल लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया विविध माइक्रोबियल समूहों से संबंधित हैं जो विभिन्न पोषण, चयापचय और संस्कृति आवश्यकताओं के साथ-साथ विभिन्न तकनीकी गुणों की विशेषता रखते हैं। बिफीडोबैक्टीरिया नॉनस्टार्टर सूक्ष्मजीवों के एक महत्वपूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व करते हैं जो कुछ डेयरी उत्पादों, मुख्य रूप से किण्वित दूध में शामिल होते हैं, क्योंकि उनमें से कुछ में स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाले गुण होते हैं। हालाँकि शुरुआती संस्कृतियों की तुलना में उनकी विकास दर आमतौर पर काफी धीमी होती है, उनका प्रसार अंतिम उत्पादों में लैक्टेट और एसीटेट के स्तर को बढ़ाने में योगदान देगा। डेयरी उत्पादों में अवांछित सूक्ष्मजीवों के संबंध में, बीजाणु-पूर्व बैक्टीरिया पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए जो डेयरी उद्योग में महत्वपूर्ण संदूषक हैं।

प्रोबायोटिक्स और लाभकारी क्रिया के तंत्र- प्रोबायोटिक्स जीवित सूक्ष्मजीव हैं जो पर्याप्त मात्रा में दिए जाने पर मेजबान को स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं। सबसे अधिक जांचे गए और व्यावसायिक रूप से उपलब्ध प्रोबायोटिक्स मुख्य रूप से लैक्टोबैसिलस और बिफीडोबैक्टीरियम जेनेरा की प्रजातियों के सूक्ष्मजीव हैं। इसके अलावा, कई अन्य जैसे प्रोपियोनिबैक्टीरियम, स्ट्रेप्टोकोकस, बैसिलस, एंटरोकोकस, एस्चेरिचिया कोली और यीस्ट का भी उपयोग किया जाता है। प्रोबायोटिक्स को जठरांत्र संबंधी मार्ग में जीवित रहने और गैस्ट्रिक रस और पित्त के प्रति प्रतिरोधी होने में सक्षम होना चाहिए। उन्हें मानव शरीर में अपनी गतिविधि के माध्यम से मेजबान को लाभ पहुंचाना चाहिए। स्वास्थ्य लाभ प्रदान करने के लिए, उन्हें गैर-रोगजनक और गैर-विषैला होना चाहिए और कई तंत्रों के माध्यम से रोगजनक सूक्ष्मजीवों के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करनी चाहिए। इसके अलावा, प्रोबायोटिक्स में हस्तांतरणीय एंटीबायोटिक प्रतिरोध जीन की कमी होनी चाहिए। एक ही जीनस और प्रजाति के विभिन्न जीवाणु उपभेद मेजबान पर अलग-अलग प्रभाव डाल सकते हैं। मानव हस्तक्षेप अध्ययनों में प्रोबायोटिक्स के सबसे आशाजनक स्वास्थ्य प्रभावों में बच्चों में तीव्र दस्त में सुधार, श्वसन पथ के संक्रमण के जोखिम में कमी, बच्चों की दूध एलर्जी / एटोपिक जिल्द की सूजन से राहत और चिड़चिड़ा आंत्र सिंड्रोम का उन्मूलन शामिल है। प्रोबायोटिक्स मेजबान के माइक्रोबायोटा को सामान्य करके, रोगजनकों के निषेध द्वारा, मेजबान की प्रतिरक्षा प्रणाली के साथ बातचीत करके और अपनी स्वयं की चयापचय गतिविधि के माध्यम से अपने लाभकारी स्वास्थ्य प्रभाव डाल सकते हैं। प्रोबायोटिक्स हानिकारक बाहरी कारकों के खिलाफ माइक्रोबायोटा की लचीलापन भी बढ़ा सकते हैं। हालाँकि, प्रभावों के पीछे आणविक तंत्र काफी हद तक अज्ञात हैं।

प्रतिरक्षा प्रणाली के साथ सहभागिता- शारीरिक अखंडता और स्वास्थ्य के रखरखाव के लिए एक इष्टतम कार्यशील प्रतिरक्षा प्रणाली महत्वपूर्ण है। प्रतिरक्षा प्रणाली रोगजनक सूक्ष्मजीवों के कारण होने वाले संक्रमण से रक्षा प्रदान करती है। यह कभी-कभी रक्षा प्रणाली को ऊपर या नीचे करके हमारे स्वास्थ्य और कल्याण को कई तरीकों से नियंत्रित करता है। संक्रामक रोगों से सुरक्षा के लिए एक प्रभावी ढंग से कार्य करने वाली प्रतिरक्षा प्रणाली मौलिक है। संक्रमण के खिलाफ एक संभावित प्रोबायोटिक तंत्र आंत प्रतिरक्षा प्रणाली की उत्तेजना हो सकता है। आंत उपकला कोशिकाओं में, प्रोबायोटिक्स को टोल-जैसे रिसेप्टर्स द्वारा पहचाना जा सकता है। इसलिए, प्रोबायोटिक्स उपकला कोशिकाओं और/या मैक्रोफेज और डेंड्राइटिक कोशिकाओं के माध्यम से साइटोकिन अभिव्यक्ति पैटर्न को नियंत्रित कर सकते हैं। इन विट्रो में कई प्रायोगिक अध्ययनों से पता चलता है कि प्रोबायोटिक्स के कुछ प्रकार गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल और श्वसन उपकला कोशिकाओं या प्रतिरक्षा कोशिकाओं में एंटीवायरल, साइटोकिन और केमोकाइन प्रतिक्रियाओं को उत्तेजित करके संक्रमण से सुरक्षा प्रदान करने में सक्षम हैं। चूहों को लैक्टोबैसिली का प्रशासन फेफड़ों में वायरस टाइटर को कम करके श्वसन संक्रमण को प्रभावित कर सकता है और जन्मजात प्रतिरक्षा प्रतिक्रियाओं को उत्तेजित करके जानवरों की जीवित रहने की दर को बढ़ा सकता है।

किण्वित डेयरी उत्पादों और गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल ट्रैक्ट में प्रोबायोटिक्स की व्यवहार्यता और कार्यक्षमता में सुधार करने की रणनीतियाँ-प्रोबायोटिक्स को आम तौर पर किण्वित डेयरी उत्पादों में सहायक संस्कृतियों के रूप में जोड़ा जाता है। खाद्य पदार्थों में उनकी व्यवहार्यता को उस विशिष्ट कार्यात्मक खाद्य उत्पाद के लिए जिम्मेदार स्वास्थ्य लाभ प्रदान करने में सक्षम न्यूनतम दैनिक खुराक सुनिश्चित करनी चाहिए जिसमें वे शामिल हैं। हालांकि, कम पीएच, ऑक्सीजन सामग्री, तापमान और अन्य सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति जैसे कारकों के कारण प्रोबायोटिक्स अक्सर खाद्य मैट्रिक्स में खराब अस्तित्व दिखाते हैं। इसके अलावा, प्रोबायोटिक्स को क्रिया स्थल, आंत तक जीवित पहुंचने के लिए गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल पारगमन के माध्यम से पर्याप्त स्तर पर व्यवहार्य रहना चाहिए।

अवसरवादी और रोगजनक सूक्ष्मजीव और मेजबान में हानिकारक कार्रवाई के तंत्र-खाद्य जनित रोग के प्रकोप और छिटपुट मामलों का अनुपात, जिसे डेयरी उत्पादों की खपत के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, संयुक्त राज्य अमेरिका में 1998 से 2008 तक लगभग 4-7% प्रकोप था और 2009-2010 में यह आंकड़ा 13% था। इनमें से केवल एक अनुपात ही किण्वित डेयरी उत्पादों के कारण होगा। यूरोपीय संघ में, पनीर को 763 (5.4%) प्रकोपों में से 41 और अन्य डेयरी उत्पादों (दूध को छोड़कर) में संचरण के वाहन के रूप में पहचाना गया था और 2012 के दौरान केवल 4 (0.5%) में। डेटा के निरीक्षण से पता चलता है कि इनमें से कई प्रकोप, वास्तव में, जमा हुए डेयरी उत्पादों से जुड़े हैं जिन्हें किण्वित नहीं किया गया है बल्कि प्रत्यक्ष अम्लीकरण द्वारा उत्पादित किया गया है। स्टार्टर कल्चर के साथ या उसके बिना उत्पादित चीज़ों में रोगजनकों का व्यवहार भिन्न होता है। 1998 से 2008 तक संयुक्त राज्य अमेरिका में लिस्टेरियोसिस के छह डेयरी-संबंधित प्रकोपों में से चार मैक्सिकन शैली के क्वेसो फ्रेस्को / क्वेसो ब्लैंको के कारण हुए थे, जो स्टार्टर संस्कृतियों के बिना उत्पादित नरम चीज हैं।

किण्वित डेयरी उत्पादों में रोगजनकों और हानिकारक सूक्ष्मजीवों का मुकाबला करने की रणनीतियाँ- किण्वित डेयरी उत्पादों की सुरक्षा की गारंटी देने के लिए सबसे आम दृष्टिकोण यह सुनिश्चित करना है कि उनके निर्माण में उपयोग किया जाने वाला दूध रोगज़नक़ मुक्त है (या इसमें एस ऑरियस जैसे कुछ रोगजनकों का स्वीकार्य रूप से निम्न स्तर है) और इसके बाद उत्पादन के दौरान पुनः संदूषण की रोकथाम की जाती है। वितरण, और खुदरा बिक्री। वर्तमान तकनीक के साथ, रोगज़नक़ मुक्त कच्चे दूध का उत्पादन करना मुश्किल है, लेकिन ऐसे स्रोत से खाद्य गुणवत्ता वाले दूध का उपयोग करना जो जानवरों को सख्त रोगज़नक़ परीक्षण व्यवस्था में प्रस्तुत करता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

गन्ने में जैव उर्वरकों का प्रयोग

कपिल गौतम (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

श्रीगोविन्द (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

प्रेम कुमार (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

गन्ना (सैकेरम ऑफिसिनारम एल.; पोएसी) बहुवर्षीय फसल है, जोकि भारत की महत्त्वपूर्ण नकदी फसलों में से एक है. भारत विश्व में गन्ना उत्पादन में क्षेत्रफल व उत्पादन की दृष्टि से दूसरा स्थान रखता है. गन्ने की खेती व प्रसंस्करण द्वारा जहां करोड़ों लोगों को रोजगार मिलता है, वहीं दूसरी ओर देश को हर साल 50,000 करोड़ रुपए से भी अधिक का राजस्व प्राप्त होता है.यह देखा गया है कि गन्ने की खेती से किसानों की आर्थिक स्थिति में काफी हद तक सुधार हुआ है. गन्ना दुनिया की सबसे महत्वपूर्ण चीनी और ऊर्जा फसल है। गन्ने के पौधे बहुत लंबे होते हैं, उनकी उत्पादन अवधि लंबी होती है, वे बहुत सारे पोषक तत्वों का उपभोग करते हैं और उन्हें बड़ी मात्रा में उर्वरक के साथ-साथ बड़ी मात्रा में सिंचाई की आवश्यकता होती है गन्ने की वृद्धि में संतुलित मिट्टी की उर्वरता महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हालाँकि, एक टन मिल योग्य गन्ना प्राप्त करने में प्रति हेक्टेयर खेत से 2.0 किलोग्राम नाइट्रोजन, 0.5 किलोग्राम फास्फोरस, 2.8 किलोग्राम पोटाश, 0.3 किलोग्राम गंधक और 0.03 किलोग्राम लौह तत्व का अवशोषण किया जाता है. इस के चलते मिट्टी की उर्वरकता में उपयोगी तत्वों का दिनप्रतिदिन नुकसान होता जा रहा है.रासायनिक उर्वरकों के व्यापक उपयोग से मिट्टी में पोषक तत्वों की गंभीर कमी हो जाती है, जिससे खेती योग्य भूमि की उपज में काफी कमी आएगी.

जैविक उर्वरक के प्रयोग से मिट्टी की सरंध्रता बढ़ी है, मिट्टी की कुल संरचना में सुधार हुआ है, और विभिन्न भौतिक और रासायनिक गुणों को समायोजित किया गया है पुआल रिटर्निंग और सुअर खाद जैसे जैविक उर्वरकों में बड़ी संख्या में सूक्ष्मजीव होते हैं, जैसे कवक, वायरस, बैक्टीरिया और आर्किया। गन्ने में मुख्यतः प्रयोग होने वाली जैविक खादें, गोबर की खाद, मैली की खाद व जैव उर्वरक एसीटोबैक्टर का मिश्रण शामिल है. मृदा सूक्ष्मजीवों की प्रजातियाँ और मात्रा न केवल मृदा कार्बनिक पदार्थ और मृदा पोषक तत्वों के परिवर्तन और परिसंचरण के लिए गतिशील हैं, बल्कि मृदा में पौधों के उपलब्ध पोषक तत्वों के लिए आरक्षित भंडारण के रूप में भी कार्य करती हैं और मृदा उर्वरता के साथ निकटता से जुड़ी हुई हैं। गन्ने की खेती में जैविक खादों का प्रयोग अकेले या जैव उर्वरकों के साथ फसल की बोआई से पहले एवं प्रत्येक पेड़ी फसल को प्रारंभ करते समय करें. इस के लिए कार्बनिक खादों को मिट्टी में अच्छी तरह मिला कर सिंचाई कर देते हैं, ताकि पौधों को पोषक तत्त्व जल्दी से जल्दी प्राप्त हो सकें.मैली खाद या प्रेसमड गन्ने से चीनी बनने की प्रक्रिया में एक उपउत्पाद के रूप में प्राप्त होता है, जिसे जैविक खादों के रूप में उपलब्ध करा कर चीनी मिलें अपने क्षेत्र में गन्ना उत्पादन में वृद्धि करा सकती हैं. जैविक खादों के प्रयोग द्वारा अधिक संख्या में पेड़ी फसलें ली जा सकती हैं एवं गन्ने की खेती से अधिक से अधिक लाभ लिया जा सकता है. कार्बनिक खादों के प्रयोग से लंबे समय तक पोषक तत्त्वों की संतुलित मात्रा प्राप्त होती रहती है, जिस से आगामी पेड़ी फसलों की संख्या व बढ़वार रासायनिक उर्वरकों की तुलना में बेहतर होती है.

● **गन्ने में नाइट्रोजन पोषक तत्त्वों की आपूर्ति के लिए विभिन्न जैविक खाद**-यह जीवाणु वातावरण में उपस्थित नाइट्रोजन का प्रवर्तन कर उसे पौधों के योग्य बना देते हैं. साथ ही, यह पौधे के लिए वृद्धि हार्मोन बनाते हैं. इन में मुख्य एसीटोबैक्टर एजोस्पिरिलम एजोटोबैक्टर.

एजोटोबैक्टर जैविक खाद ● यह जैविक खाद एजोटोबैक्टर क्रोकोकम से बनी है. ● यह पौधों की वृद्धि एवं उत्पादकता में 25 फीसदी तक बढ़ोतरी करता है. ● यह जीवाणु मिट्टी में कहीं भी पाया जाता है. ● यह नाइट्रोजन परिवर्तन करता है एवं वृद्धि हार्मोन बनाता है, जिस से जड़ों में वृद्धि होती है. ● कुछ कीटनाशक पदार्थ छोड़ता है, जिस से जड़ों की रोगों से रक्षा होती है.

एजोस्पिरिलम जैविक खाद ● यह जैविक खाद जीवाणु एसीटोबैक्टर डाईएजोट्रफिक्स से बनी है. ● यह जीवाणु गन्ने के अंदर रहता है और इस के सभी भागों जड़, तना और पत्ते में पाया जाता है. ● यह फसल उत्पादन में 5 से 20 टन प्रति हेक्टेयर और चीनी परता में 5 से 15% तक की वृद्धि करता है. ● यह जीवाणु जड़ों के समीप पाया जाता है. ● इस के प्रयोग के 5 से 6 सप्ताह बाद इस का प्रभाव दिखाई देता है. ● यह मुख्यतः गन्ने की लंबाई और मोटाई को बढ़ाता है. ● यह पौधे के जमाव एवं बढ़ने में मदद कर उत्पादकता में 25 फीसदी तक की वृद्धि कर सकता है.

फास्फोरस घुलनशील जैविक खाद ● यह जैविक खाद बेसिलस एस्परजिलस से बनी है. ● यह जीवाणु पौधों की जड़ों के पास रहकर अनुपलब्ध फास्फोरस को घुलनशील कर उपलब्ध करवाते हैं. ● यह पौधों की वृद्धि को बढ़ाते हैं और उत्पादकता को 20 फीसदी तक बढ़ाते हैं. ● जीवाणु को किसी भी कैरियर जैसे कि लिग्नाइट गोबर खाद वर्मी कुलाइट पिट एवं चारकोल में रखा जा सकता है.

जीवाणु खाद की मात्रा और प्रयोग विधि

गन्ने के टुकड़ों का उपचार: 5 किलोग्राम जीवाणु खाद 1 एकड़ हेतु पर्याप्त होती है. 100 ली. पानी में इस का घोल बनाकर गन्ने के टुकड़ों को भिगो कर कूड़ों में लगाएं. इस के बाद कूड़ों को ढक दें.

मिट्टी का उपचार: प्रति एकड़ 5 किलोग्राम उर्वरक को 10 लिटर पानी में घोल लें और इस को 80-100 किलोग्राम फार्मयार्ड खाद के साथ अच्छी तरह मिला लें. गन्ना रोपण के समय पंक्तियों में इस मिश्रण का छिड़काव कर के कूड़ों को भली प्रकार से ढक दें.

जैव उर्वरक की सावधानियां ● जीवाणु खाद को ठंडी और सूखी जगह पर रखें. सूरज की किरणों और गरमी से बचाए रखें. ● जैविक खाद के थैले पर जीवाणु खाद एवं फसल का नाम, उस के बनने एवं अंतिम प्रयोग विधि, तिथि, बनने के नंबर की संख्या प्रयोग विधि एवं बनाने वाले का नाम और पता देख कर ही खरीदें. ● जैविक खाद को उस की अंतिम तिथि से पहले ही उपयोग में लाएं. अंतिम तिथि निकल जाने के बाद कोई भी जीवाणु सक्रिय नहीं रहता, इसलिए अंतिम तिथि से पहले ही जीवाणु खाद का प्रयोग किया जाना चाहिए.

जैव उर्वरक की विशेषताएं

प्राकृतिक: जैव उर्वरक प्राकृतिक स्रोतों से बनाए जाते हैं जैसे कि गोबर, कोम्पोस्ट, खाद, आदि।

पोषण सामग्री: जैव उर्वरक में पौष्टिक तत्वों की अधिक मात्रा होती है जो फसलों के लिए उपयुक्त होती है।

माइक्रोऑर्गनिज्म्स: ये उर्वरक में जीवाणु, कवक, और अन्य माइक्रोऑर्गनिज्म्स का संबल होते हैं, जो मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ावा देते हैं और पौधों के पोषण को बढ़ाते हैं।

गुणकारी: जैव उर्वरक मिट्टी की सामर्थ्य को बढ़ाने में मदद करते हैं, और फसलों की उत्पादकता बढ़ती है।

पर्यावरण साथी: जैव उर्वरक प्रदूषण को कम करने में मदद कर सकते हैं, क्योंकि ये जल, वायु, और मिट्टी के साथ संगत होते हैं।

सस्ता: जैव उर्वरक सस्ते होते हैं और उन्हें घरेलू / स्थानीय स्रोतों से आसानी से उपलब्ध किया जा सकता है।

प्रभावी: जैव उर्वरक प्रत्येक खेती व्यवस्था में उपयोगी होते हैं और स्थायी परिणाम दिखाते हैं।

।। श्री गणेशाय नम ।।

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार

खाद बीज एवं कृषि कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता

सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

श्री अन्न : परिचय एवं उपयोगिता

रोहित शोध छात्र, कृषि प्रसार विभाग
चंद्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक
विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

सरिता दुबे शिक्षा-स्नातक, आशा
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर (उ.प्र.)

पूरी दुनिया वर्ष 2023 को अंतर्राष्ट्रीय पोषक अनाज वर्ष के तौर पर मना रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत ने ही अंतर्राष्ट्रीय पोषक अनाज वर्ष का प्रस्ताव दिया था, जिस पर 72 देशों ने अपना समर्थन व्यक्त किया। कृषि विशेषज्ञों के अनुसार, बाजरा को कर्नाटक प्रदेश में 'श्री धान्य' कहा जाता है क्योंकि बाजरा न केवल स्वादिष्ट और पोषण से भरपूर होता है, बल्कि इसमें बहुत सारे औषधीय गुण भी विद्यमान होते हैं। प्रधानमंत्री जी के आह्वान के बाद अब मिलेट्स (बाजरा सहित सभी मोटे अनाज) पूरे देश में 'श्री अन्न' के नाम से जाना जाएगा। मोटे अनाजों में अनेक पोषक तत्त्व भरपूर मात्रा में पाए जाते है जिससे इन्हे 'श्रीअन्न' कहा जाता है। 'श्रीअन्न' का शाब्दिक अर्थ है सभी खाद्यान्नों में सर्वश्रेष्ठ एवं उत्तम। मिलेट्स ऐसा अनाज है जिसकी जानकारी मानव समाज को बहुत पहले से है और अब देश में मिलेट के उत्पादन और उपभोग दोनों को बढ़ावा दिया जा रहा है। एक तरफ मिलेट को उगाने में लागत कम आती है, वहीं दूसरी तरफ इसका सेवन करने से शरीर को वो सभी पोषक तत्व मिल जाते हैं, जो साधारण खान-पान से मुमकिन नहीं हो पाता है। यही वजह है कि आधुनिक युग में बेहतर स्वास्थ्य के लिए चिकित्सक भी डाइट में 15 से 20 प्रतिशत मिलेट को शामिल करने की सलाह दे रहे है।

प्रधानमंत्री जी ने संसदीय दल की बैठक में सभी सांसदों को मोटा अनाज खाने की सलाह दी। इतना ही नहीं अपितु इस दौरान उन्होंने यह भी कहा कि जी20 की बैठकों में भी मोटा अनाज के व्यंजन ही परोसे जाएंगे। अंतर्राष्ट्रीय पोषक अनाज वर्ष 2023 का भी उद्देश्य मिलेट के उपभोग को बढ़ाकर पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करना है। इसके लिए 8 मिलेट्स को चिन्हित किया गया है, जिसमें मुख्य रूप से ज्वार, बाजरा, रागी, कोदो, कुटकी, कंगनी, चेना, सांवा आदि शामिल है। ये फसलें नमी, तापमान और विभिन्न प्रकार की मिट्टी में, जोकि रेतीली से गंभीर प्रकार की मिट्टी हो सकती है, उग सकता है। इसके अलावा, मिलेट्स में लोहा, कैल्सियम, जस्ता, मैग्निसियम और पोटाशियम जैसे तत्व अच्छी मात्रा मे होते हैं। रागी में कैल्सियम और बाजरा में लौह तत्व प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इसमें काफी मात्रा में वह फाईबर तथा विभिन्न प्रकार के विटामिन्स (कैरोटिन, नियासिन, विटामिन बी6 और फोलिक एसिड) पाया जाता है जो भोजन में जरूरी होता है। इसमें प्रचुर मात्रा में मिलने वाला लेसीथीन शरीर के स्नायुतंत्र को मजबूत बनाता है। अतः नियमित रूप से मिलेट्स का सेवन करने से भारत की आबादी का अधिकांश भाग कुपोषणमुक्त हो सकता है। हालांकि बाजरे को मोटा आनाज कहा जाता है लेकिन पोषण तत्वों में समृद्ध होने के कारण इस अनाज को न्यूट्रिया मिलेट्स अथवा न्यूट्रिया सीरियल्स भी कहा जाता है।

क्यों होता है मिलेट्स को उगाना आसान

मिलेट्स अनाज आकार में छोटा और कठोर होता है जो कम सिंचाई सुविधा वाले तथा सूखे इलाकों में आसानी से उगाया जा सकता है। इन्हें पहाड़ी, तटीय, वर्षा, सूखा आदि इलाकों में बेहद कम संसाधनों में ही उगाया जा सकता है। मिलेट्स को ऐसी मिट्टी में भी उगाया जा सकता है जो बहुत ही कम उपजाऊ और कम नमी वाली होती है। कोदो मिलेट 50-60 सेमी की मध्यम वर्षा में अच्छी तरह से बढ़ती है हालांकि इस अनाज की फसल भारत में कम उगाई जाती है लेकिन क्षेत्रीय स्तर पर अनाज की सुरक्षा संबंधी अनेक किस्में पाई जाती है। इसके पकने में कम समय लगता है और जल्द ही तैयार हो जाती है। मिलेट्स में छोटा

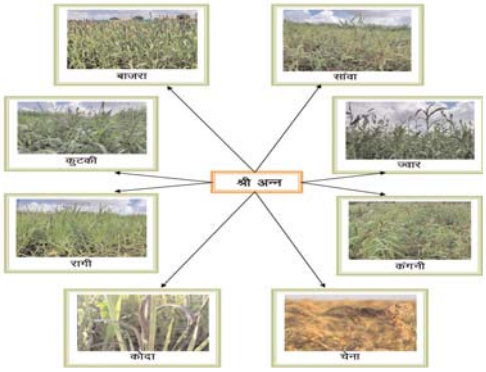

अनाज और मोटा अनाज दोनों शामिल हैं और इन्हें उगाना भी बेहद आसान है. मिलेट्स को उगाने में ना तो अत्यधिक खाद-उर्वरकों पर धन व्यय करना होता है और ना ही कीटनाशकों पर अलग से खर्च करने की आवश्यकता पड़ती है। बाजरा पशु चारा का अच्छा स्रोत है और कम समय में बड़ा हो जाता है। इस कारण यह सूखे वाले क्षेत्रों में आरक्षित फसल का काम करता है तथा अपने इस गुण के कारण यह भारत में बहुत उपयोगी है क्योंकि हमारी खेती में बार-बार मानसून की कमी व अनियमितता महसूस की जाती है।

क्या होता है मोटा अनाज या मिलेट्स

मोटे अनाज को पोषक तत्वों का भंडार माना जाता है। बीटा-कैरोटीन, नाइयासिन, विटामिन-बी6, फोलिक एसिड, पोटेशियम, मैग्नीशियम, जस्ता आदि से भरपूर इन अनाजों को सुपरफूड भी कहा जाता है। ज्वार,, बाजरा, रागी (मडुआ), मक्का, जौ, कोदो, बाजरा, सांवा, लघु धान्य या कुटकी, कांगनी और चीना जैसे अनाज मिलेट्स यानी मोटा अनाज होते हैं। इनके उपभोग से हमारी सेहत को कई तरह के फायदे होते हैं। मिलेट्स में कुछ छोटे अनाज शामिल हैं तो कुछ मोटे अनाज। मोटा अनाज में सामान्यतः ज्वार, बाजरा, रागी का नाम शामिल है। इन अनाजों में भूसी नहीं होती हैं तथा साधारण पानी से साफ करने के पश्चात मोटा अनाज को भोजन में शामिल किया जा सकता हैं, जबकि छोटा अनाज में भूसी होती है, जिसका प्रसंस्करण करके भूसी हटाई जाती है। खाने से पहले इन छोटे अनाजों को छानना-फटकना होना है, जिसके पश्चात इनसे विभिन्न प्रकार के व्यंजन बनाए जा सकते हैं। खाद्य एवं कृषि संगठन के डेटा यह दर्शाता है कि साल 2020 के दौरान पूरे विश्व में करीब 30.464 मिलियन मीट्रिक टन मिलेट्स का उत्पादन हुआ, जिसमें भारत की हिस्सेदारी 12.49 मीट्रिक टन की थी।

मोटे अनाज से होने वाले लाभ

हृदय के लिए लाभकारी

मोटे अनाज में कार्बोहाइड्रेट की मात्रा काफी कम होती है। ऐसे में नियमित तौर पर मोटा अनाज सेवन करने से उच्च रक्तचाप और हृदय से जुड़ी समस्याओं का खतरा काफी कम हो जाता है। साथ ही इसके सेवन से शरीर में कोलेस्ट्रॉल भी कम होता है। रागी को मूल्यवर्धित करने के पश्चात इसके पाउडर से पिठा, हलवा, बिस्किट केक, रोटी, डोसा, दलिया, उपमा, तैयार किया जा सकता है।

हड्डियों के लिए फायदेमंद

मोटा अनाज जैसे बाजरा, रागी आदि हड्डियों के मजबूती के लिए काफी फायदेमंद होता है। इसमें अत्यधिक मात्रा में कैल्शियम पाया जाता है, जो हमारी हड्डियों के विकास और उन्हें मजबूत बनाने में काफी अहम भूमिका निभाता है। रागी कैल्शियम, आयरन, प्रोटीन, फाइबर और अन्य खनिजों का एक समृद्ध एवं प्रमुख स्रोत है। रागी को सबसे पौष्टिक अनाजों में से एक माना जाता है जो वजन नियंत्रण में, हड्डियों का स्वास्थ्य बनाए रखने में, रक्त कोलेस्ट्रॉल कम करने, एनीमिया आदि को नियंत्रित रखने में मदद करता है।

ठंड में होता है लाभकारी

मोटा अनाज तासीर में गर्म होते हैं। अतः सर्दियों में इसके सेवन से शरीर को गर्माहट मिलती है, जिससे हम ठंड से बचे रहते हैं। इसके अलावा इसमें मौजूद कई पोषक तत्व भी शरीर के लिए फायदेमंद होते हैं। यदि पशु कम मात्रा में दूध दूबे देते हैं या अपनी क्षमता अनुसार दूध उत्पादन नहीं कर पाते तो उन्हें संतुलित मात्रा में बाजरा खिला सकते हैं। यह दूध बढ़ाने और पशुओं में गर्माहट लाने का भी काम करता है। पशुओं को ठंड से बचाने के लिए कोई अलग से दवा नहीं आती, लेकिन बाजरा अपने आप में हेल्दी-नेचुरल टॉनिक के तौर पर कार्य करता है।

पाचन तंत्र के लिए फायदेमंद

मिलेट्स यानी मोटा अनाज खाने से हमारे पाचन तंत्र को भी अत्यधिक फायदा मिलता है। इसके सेवन से पेट को दुरुस्त रखा जा सकता है, जिससे कब्ज, गैस, एसिडिटी जैसी समस्याये दूर रहती हैं। इससे अम्ल नहीं बन पाता और यह आसानी से हजम हो जाता है। लसलसे युक्त पदार्थ से मुक्त होने के कारण यह उन लोगों के लिए अधिक फायदेमंद है जो पेट की बीमारियों से पीडित होते हैं।

य) मधुमेह रोंग में गुणकारी

वर्तमान समय में मधुमेह (डायबिटीज) की समस्या काफी आम हो चुकी है। कई लोग इस गंभीर समस्या से परेशान है। ऐसे में मोटा अनाज का सेवन कई तरह के मधुमेह रोंग में गुणकारी है। वास्तविक तौर पर मधुमेह रोगियों के लिए गेहूं का सेवन हानिकारक माना जाता है। ऐसे में बाजरा, रागी, ज्वार आदि रक्त शर्करा को नियंत्रित करने में काफी अहम भूमिका निभाते हैं। मिलेट्स में ग्लाइसेमिक प्रतिक्रिया यानी रक्त शर्करा के स्तर को बढ़ाने की क्षमता कम होने के कारण यह मधुमेह रोगियों के लिए उत्तम आहार है। बाजरे की रोटी अधिक दिनों तक खाने से इसमें निहित ग्लूकोज धीरे-धीरे निकलता है और इस प्रकार से यह मधुमेह से पीड़ित लोगों को भी अनुकूल पड़ता है।

निष्कर्ष

मिलेट्स के विभिन्न लाभों को देखते हुए किसानों को इसकी फसल ज्यादा से ज्यादा उगाने एवं उपभोग करने की कोशिश करनी चाहिए जिससे इसे मुख्य खाद्यानों में शामिल किया जा सके। खाद्यानों का उत्पादन और खपत बढ़ाने के साथ आज के आधुनिक औद्योगिकृत और शहरीकृत समाज में हम इन पोषक पदार्थों से पूर्ण अनाजों से स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ बना सकते हैं जो उपभोक्ताओं के लिए अत्यंत ही आवश्यक है। भारत के अनेक परिवार उन क्षेत्रों में रहते है जहां सिंचाई सुविधाएं कम हैं। अतः ऐसे इलाकों में खाने के लिए उपयुक्त अनाज के रूप में बाजरे की खेती की जा सकती है और इसे लोकप्रिय बनाने की जरूरत है। इसके अलावा, हमें इस अनाज के बारे जनता में जागृति भी पैदा करनी होगी और लोगों को आरामपसंद जीवन शैली से विमुख करना होगा ताकि वे स्वस्थ जीवन बिता सकें। इसके अलावा मिलेट्स की फसल पर्यावरण के लिए भी उपयोगी है। यह जलवायु परिवर्तन के असर को कम करती है। दैनिक आहार में इन पौष्टिक अनाजों को शामिल कर कुपोषण की समस्या से निपटा जा सकता हैं, साथ ही साथ खाद्यान विविधीकरण के माध्यम से मुख्य अनाजों के उत्पादकता बोझ में कमी लायी जा सकती हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

बागवानी फसलों में पार्थेनोकार्पी का महत्व

अभिषेक प्रताप सिंह, विपिन कुमार
(शोध छात्र) आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज अयोध्या (उ.प्र.)

ओम नारायण, अवधेश कुमार, प्रभात कुमार
रहमतगुल हसनजई, इमरान अली

श्याम प्रकाश सिंह (सहायक प्राध्यापक) कृषि अर्थशास्त्र विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

परिचय

वह स्थिति जिसमें बीज बने बिना ही फल विकसित हो जाते हैं, पार्थेनोकार्पी कहलाती है। फल उत्पादन की यह प्रक्रिया वर्ष 1902 में शुरू की गई थी। इसका मुख्य कारण पौधों में निषेचन , परागण और भ्रूण विकास की अनुपस्थिति है।

वनस्पति विज्ञान में, पार्थेनोकार्पिक फल का अर्थ है "कुंवारी फल"। इस प्रकार के फल सामान्यतः बीज रहित होते हैं। केला पार्थेनोकार्पी का एक अच्छा उदाहरण है। इस प्राकृतिक प्रक्रिया में, उत्पादित केले बाँझ होते हैं, व्यवहार्य अंडाशय के बिना विकसित होते हैं और बीज पैदा नहीं करते हैं, जिसका अर्थ है कि उन्हें वानस्पतिक रूप से प्रचारित करना होगा। अनानास और अंजीर भी पार्थेनोकार्पी के उदाहरण हैं जो प्राकृतिक रूप से होते हैं।

पार्थेनोकार्पिक फल

अनानास, केला, ककड़ी, अंगूर, तरबूज, संतरा, अंगूर, नाशपाती, अंजीर पार्थेनोकार्पी के कुछ उदाहरण हैं। ये बिना निषेचन के विकसित होते हैं और अक्सर बीज रहित होते हैं।

पार्थेनोकार्पी के प्रकार

पार्थेनोकार्पी को तीन अलग-अलग श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है

* वानस्पतिक पार्थेनोकार्पी * उत्तेजक पार्थेनोकार्पी * स्टेनोस्पर्मोकार्पी

वनस्पति पार्थेनोकार्पी

यह आम तौर पर परागण के बिना होता है और परागण की अनुपस्थिति के कारण फलों के भीतर कोई बीज नहीं बनता है। इसे नाशपाती और अंजीर आदि में देखा जा सकता है।

उत्तेजक पार्थेनोकार्पी

उत्तेजक पार्थेनोकार्पी आमतौर पर निषेचन की प्रक्रिया के बिना होता है। यह स्थिति तब होती है जब ततैया के ओविपोसिटर को एक फूल के अंडाशय में डाला जाता है और इसे साइकोनियम के अंदर मौजूद एकलिंगी फूलों में हवा या पौधे के विकास नियामकों को प्रवाहित करके भी प्राप्त किया जा सकता है।

स्टेनोस्पर्मोकार्पी

यह एक अद्वितीय प्रकार का पार्थेनोकार्पी है जहां निषेचन होता है और बीज विकसित होना शुरू होता है लेकिन अंततः समाप्त हो जाता है। एक बीज का निशान है जिसे फल के भीतर देखा जा सकता है और यह रेखांकित किया जा सकता है कि बीज का विकास कहाँ समाप्त हुआ था। इस प्रकार की पार्थेनोकार्पी बीज रहित अंगूरों और तरबूज़ों में देखी जा सकती है। बीजरहित फलों के प्रजनक अविकसित बीजों का लाभ उठाते हैं, इससे पहले कि उन्हें नष्ट कर दिया जाए। इन आंशिक रूप से विकसित बीजों को फल से निकाल लिया जाता है और टिशू कल्चर तकनीक का उपयोग करके पौधों में विकसित किया जाता है। बीज रहित गुण माता-पिता दोनों को हस्तांतरित हो जाता है जो बीज रहित संतानों की उच्च उपज के उत्पादन में सहायता करता है।

पार्थेनोकार्पी के लाभ

यह बागवानों के बीच बहुत लोकप्रिय है। जैम, सॉस और फलों के पेय के उत्पादन के लिए बीज रहित फलों को अधिक पसंद किया जाता है। इस प्रक्रिया से फलों का मांसल भाग भी बढ़ता है। यह प्रक्रिया उत्पादक को कीटनाशकों का उपयोग किए बिना फसलों से कीटों और कीड़ों को दूर रखने की भी अनुमति देती है। चूंकि परागण करने वाले कीड़ों की कोई आवश्यकता नहीं है, इसलिए हानिकारक कीड़ों को फसलों पर हमला करने से रोकने के लिए पौधों को ढका जा सकता है।

यह अधिक स्वास्थ्यप्रद है और परिणाम भी आसानी से प्राप्त होते हैं।

- बीज रहित फल प्रदान करता है और गुणवत्ता में सुधार करता है।
- इससे खेती की पूरी लागत कम हो जाती है.
- इससे जैविक कीटनाशकों के उपयोग के बिना फसल की पैदावार में सुधार होता है।
- पादप वृद्धि नियामक प्राकृतिक होते हैं और उत्पादित फल बड़े होते हैं।

पार्थेनोकार्पी रसायनों का उपयोग किए बिना कीड़ों और कीटों को दूर रखता है क्योंकि फलों के निर्माण के लिए परागण करने वाले कीड़ों की कोई आवश्यकता नहीं होती है। यह पौधों को कीटनाशकों के हमले से बचाता है।

नुकसान

पार्थेनोकार्पी रासायनिक रूप से भी प्रेरित हो सकता है और ऐसे मामलों में, यह पौधे और फलों की पैदावार के लिए हानिकारक है। उदाहरण के लिए, फूलों की अवधि से पहले या फूल की कली के खुलने से पहले ऑक्सिन जैसे फाइटोहोर्मोन का प्रारंभिक अनुप्रयोग फूलों को नुकसान पहुंचा सकता है जिससे बीज और फल गिरने का गर्भपात हो सकता है।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885
मै. माँ उर्वरक केन्द्र

अमित राय
रसायनिक एवं
जैविक खाद बीज
एवं दवाई के विक्रेता

पताः भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)
03/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

उत्तर भारत में गाजर की उन्नत खेती

नीरज कुमार प्रजापति भा.कृ.अनु.प.- भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान वाराणसी (उ.प्र.)

रविन्द्र कुमार वर्मा भा.कृ.अनु.प.- भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.)

शुभम कुमार तिलकधारी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जौनपुर (उ.प्र.)

गाजर एक शीतकालीन जलवायु का पौधा है। गाजर का वानस्पतिक नाम 'डाकस करोटा' तथा एपियेसी परिवार के अन्तर्गत आता है तथा गुण सूत्र संख्या 18 है। इसकी उत्पत्ति दक्षिण पश्चिम एशिया (अफगानिस्तान) है। गाजर का उपयोग भारत के सभी प्रान्तों में होता हैं। बढ़ते हुए कुपोषण से बचाव के लिए गाजर का महत्व पहले से ज्यादा बढ़ गया है क्योंकि इसमें उपलब्ध कैरोटोन (विटामिन ए) की मात्रा अन्य सब्जियों से अधिक है, तथा बीमारियों से बचने की क्षमता रहती है। इसकी जड़ों को सलाद के रूप में कच्चा, पकाकर तथा अचार बनाकर प्रयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त हलुआ, मुरब्बा तथा जूस बनाकर प्रयोग करते हैं तथा हृदय रोग के लिए इससे बने मुरब्बे लाभप्रद होते हैं।

जलवायु: गाजर ठंडे जलवायु की फसल है। लेकिन एशियाई किस्मों में अधिक तापमान सहने की शक्ति होती है। वृद्धी अवस्था में तापमान अधिक रहने से इसके रंग व स्वाद में कमी आ जाती हैं। इसके बीज के अंकुरण के लिए 7.0-23.9 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। इसकी वृद्धी और रंग हेतु 15-18 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त है।

भूमि एवं भूमि की तैयारी: गाजर की खेती सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है। इसके लिए दोमट या बलुई दोमट भूमि जिसमें जीवांश की पर्याप्त मात्रा हो, सिंचाई तथा जल-निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। ज्यादा सख्त और बहुत हल्की मिट्टी में जड़ों में शाखाएं फूट जाती है। जिससे जड़ें खराब हो जाती है। गाजर की बुआई से पूर्व 3-4 जुताइयाँ करके अच्छी प्रकार से मिट्टी को भुरभुरा बना लेना चाहिए।

बुआई का समय एवं बीज दर: मैदानी क्षेत्रों में एशियाई किस्मों के लिए बुआई अक्टुबर के महीने में उचित समय होती है। पहाड़ी इलाकों में इन किस्मों (दोनों वर्गों) की बुआई मार्च से जून तक की जाती है। एक हेक्टेयर खेत के लिए 6-8 किलो ग्राम बीज की आवश्यकता पड़ती है।

बुआई और दूरी: बुआई के समय खेत में नमी अच्छी प्रकार होनी चाहिए। बुआई कतारों में मेड़ बना कर करें, इन मेड़ो की आपस की दूरी 40-45 सेंमी. रखें या छोटी-छोटी समतल क्यारियाँ बनाकर बोए। पौधे से पौधे की दूरी 7.5 सेंमी. रखनी चाहिए यदि क्यारियों मे बुआई करनी हो तो बीज को क्यारियों में छिटक देते हैं या 30 सेंमी के अंतराल पर हाथ से हल्की कतारें बना ले और उन कतारों में बीज बोएं तथा मेडों पर बीज 1-2 सेमी से अधिक गहरा नहीं बोना चाहिए।

सिंचाई: बीजों के अंकुरण तक खेत में एक-दो बार हल्की सिंचाई करनी चाहिए, सिंचाई की संख्या जलवायु एवं भूमि पर निर्भर करती है, बाद में सिंचाई गर्म मौसम में सप्ताह में एक बार और जब ठण्ड पड़ने लगे तो 10 से 12 दिन में

एक बार करते हैं। इस बात का ध्यान रखना चाहिए, कि खेत सूखने और सख्त होने न पाए नहीं तो जड़ों का समुचित विकास नही हो पता है। सिंचाई हमेशा हल्की करनी चाहिए।

अन्त: संस्य क्रियाएं: गाजर के अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए आवश्यक है, कि खेत खरपतवार रहित होना चाहिए। गाजर के पौधों की बढ़वार धीमी गति से होती हैं, इसीलिए शुरू में खरपतवार निकालना आवश्यक है। यदि फसल मेड़ों पर उगाई गयी है तो पौधों की दूरी 8-10 सेमी0 कर दें। और जरूरत से ज्यादा पौधे उखाड़ दें, बुआई के लगभग 40-50 दिन के बाद गुड़ाई कर मेंड़ों पर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। बुआई के पश्चात् खरपतवारनाशी जैसे स्टाम्प के 3.3 लीटर मात्रा के 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करने से शुरू के 30-40 दिन तक खरपतवार नही उगते और बढ़वार अच्छी होती है।

खाद एवं उर्वरक: एक हेक्टेयर खेत में लगभग 20-25 टन गोबर की सड़ी खाद बुआई के 3-4 सप्ताह पूर्व डालकर अच्छी तरह मिट्टी में मिला देते हैं। बुआई के पहले अन्तिम जुताई के साथ 50 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40 किलोग्राम फास्फोरस तथा 60 किलोग्राम पोटाश प्रति हे. की दर से खेत में डाले। शेष नाइट्रोजन की आधी मात्रा को बोने के 30-40 दिन बाद छिड़के, जिससे की जड़ों का विकास अच्छा हो।

उन्नत शील किस्में: गाजर की किस्मों को मुख्य रूप से दो वर्गों में विभाजित किया गया है:

ऐशियाई किस्में (उष्णकटिबन्धीय): इन किस्मों में अधिक तापमान सहन करने की क्षमता होती है। अतः इनके बीज मैदानी भागों में बन जाते है।

पूसा केसर: यह एक उन्नत शील ऐशियाई किस्म है यह अधिक तापमान सहन करने वाली किस्म है। इसका गूदे और बीज भाग भी लाल रंग की होती है। यह 90-100 दिनों में खुदाई के लिए तैयार हो जाती है इसकी किस्म की जड़ों की पैदावार लगभग 250-300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है।

पूसा मेघाली: यह जल्द तैयार होने वाली किस्म है इसकी जड़े 20-12 सेंमी. लम्बी एवं नीचे की तरफ ठूठ जैसी नारंगी पीले रंग होती है इस किस्म की जड़ 100-110 दिनों में खुदाई के लिए तैयार हो जाती है।

काशी अरूण: यह 90-100 दिनों में तैयार हो जाने वाली किस्म है जड़ की लम्बाई 23 सेमी, डाईमीटर 3.05 सेमी तथा जड़ का भार 140 ग्राम होता है इसकी पैदावार 300-350 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है।

काशी कृष्णा: इस किस्म की जड़ की लम्बाई 23.05 सेमी0 जड़ भार 108 ग्राम होता है, इसकी जड़ों का रंग काला और खाने में मीठा होता है तथा इसकी उपज 200-250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है।

यूरोपीयन किस्में (शीतोष्ण)- इन किस्मों की खेतों के लिए कम तापमान की आवश्यकता होती है। इन किस्मों के बीज पहाड़ी क्षेत्रों में बनते हैं।

नेन्टेस: इसकी जड़े औसतन मोटाई में मध्यम आकार की होती है। जड़ों की ऊपर वाला भाग मोटा होता है, जो अन्त में बेलनाकार हो जाता है। जड़ की गूदे गहरे नारंगी रंग का व सुगन्धित होता है।

चैन्टेनी: इस किस्म की जड़े 12-18 सेंमी. से भी लम्बी लाल संतरे के रंग की होती है। अतं में नुकीली नहीं होता है। जड़ के गूदे का रंग संतरे जैसा और जड़ के बीज की नस गूदे से हल्के रंग की होती है। यह खाने में अत्यधिक मीठा होता है।

पूसा यमदाग्नि: इसकी जड़ें 15-20 सेमी लम्बी, हल्की केसरिया रंग लिए हुए, नीचे का भाग ठूंठ के आकार का होता हौ इसका मध्य भाग और गूदा केसरिया रंग का होता है, जो कोमल और मीठे स्वाद का होता है।

कीट एवं रोग

सफेद लट: बाजरे की फसल के बाद गाजर बोने से खेत में उपस्थित सफेद लट जड़ों को खाकर समाप्त कर देती हैं। रोकथाम हेतु 15-20 किग्रा फोरेट प्रति हेक्टेयर की दर से बोआई के पूर्व मृदा में मिला देना चाहिए।

आद्र विगलन: इस रोग के कारण बीज अंकुरित होते ही पौधें ग्रसित हो जाते हैं। रोकथाम हेतु बीजों को केप्टान को 3 ग्राम या ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम प्रति किग्रा की दर से बीजों का उपचार करना चाहिए तथा जल निकासी की अच्छी सुविधा होनी चाहिए।

जीवाणु मृदु सड़न: इस रोग से ग्रसित पौधे की जड़े सड़ने लगती हैं। अधिक आर्द्रता वालें क्षेत्रों में यह बीमारी अधिक तीव्रता से फैलती हैं। सड़ी हुई जड़ों में गंध आती है। इससे रोकथाम हेतु उचित जल निकासी की व्यवस्था करनी चाहिए।

कैरेट यल्लोइस: यह एक विषाणु जनित रोग जो लीफ हॉपर द्वारा फैलता है। नई चितकबरी पुरानी पत्तियां पीला पड़ कर मुड़ जाती हैं। जड़ें आकार में छोटी व स्वाद में कड़वी हो जाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए मैलाथियान का 0.02 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए तथा नीम का तेल भी लाभकारी होता है।

खुदाई: जब जड़ें पूर्ण आकार की हो जाती है, तो खुदाई करते हैं। सामान्यतयः गाजर की जड़ें 90-120 दिनों में खुदाई के लिए तैयार हो जाती हैं। देर से खुदाई करने पर गाजर की स्वादिष्टता एवं रंग पर प्रभाव पड़ जाता है। खुदाई के 2-3 दिन पहले सिंचाई करें तत्पश्चात खुदाई करना आसान हो जाता है। खुदाई के समय ध्यान रहे कि जड़ों को क्षति न पहुँचें जड़ों के कटने से बाजार मूल्य घट जाता है।

उत्पादन: इसकी पैदावार, भूमि, किस्म इत्यादि पर निर्भर करती है। एशियाटिक प्रकार की किस्में 250-350 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तथा यूरोपियन प्रकार की किस्में 200-300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर उपज देती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

केंचुआ : खाद के निर्माण की विधि एवं उसका कृषि में उपयोग

प्रवीण कुमार शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय मेरठ

शिवम् कौशिक शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज,अयोध्या

सिद्रा किदवई शोध छात्रा, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

सौरभ भारती शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

केंचुआ खाद

केचुएं की मदद से कचरे को खाद में परिवर्तित करने हेतु केचुओं को नियंत्रित वातावरण में पाला जाता है। इस प्रक्रिया को वर्मी कल्चर कहते हैं। केचुओं द्वारा कचरे को खाकर जो कास्ट (मल) निकलता है, उसे एकत्रित रूप से वर्मी कम्पोस्ट कहतें है। वर्मी कम्पोस्ट को "काला सोना (Black Gold)" भी कहा जाता है।

केचुओं का महत्व

केचुआं कृषि में अपना महत्वपूर्ण योगदान भूमि सुधार के रूप में देता है। इनकी कार्यशीलता मृदा में स्वतः ही चलती रहती है, जिस भूमि में केचुएं नही पाये जाते है उनसे यह स्पष्ट होता है कि मिटट्री अपनी उर्वरा शक्ति खो रही है, तथा उसका ऊसर भूमि में परिवर्तन हो रहा है। केचुआं मिट्टी में पाए जाने वाले जीवो में सबसे प्रमुख है। ये अपने आहार के रूप में मिट्टी तथा कच्चे जीवांश को निगलकर अपनी पाचन नलिका से गुजारते है। जिससे वह महीन कम्पोस्ट में परिवर्तित हो जाते है। और अपने शरीर से छोटी-छोटी कास्टिम्स (Castings) के रूप में बाहर निकालते है, इस कम्पोस्ट को वर्मी कम्पोस्ट कहतें है। अब तक केचुओ कि 4500 प्रजातियां विश्व के विभिन्न भागो मे पाई जा चुकी हैं। केचुएं मुख्यतः जलीय और स्थलीय दो प्रकार के होतें है।

केचुआं खाद बनाने की विधि

वर्मी कम्पोस्ट विभिन्न विधियों से बनाई जाती है जिसकी चरणबद्ध विधि निम्न चरणों में सम्पन्न होती है।

चरण 1: कार्बनिक अवशिष्ट कचरे से पत्थर, कॉच, प्लास्टिक, सिरेमिक तथा धातुओ को अलग करके कार्बनिक कचरे के बडे ढ़ेलों को तोडकर ढ़ेर बनाया जाता है।

चरण 2: मोटे कार्बनिक अवशिष्टों जैसे पत्तियों का कुड़ा पौधो के तने गन्ने कि भूसी खोयी को दो चार इंच आकार के छोटे-छोटे टुकड़ो में काटा जाता है। इससे खाद बनने में कम समय लगता है।

चरण 3: कचरे में से दुर्गन्ध हटाने व आवांछित जीवों को खत्म करने के लिए कचरें को कुछ फुट मोटी सतह के रूप में फैलाकर धूप में सुखाया जाता है।

चरण 4: अवशिष्ट को गाय के गोबर में मिलाकर एक महीने तक सड़ाने हेतु गड्ढो में डाल दिया जाता है, उचित नमी बनाने हेतु रोज पानी का छिड़काव किया जाता है।

चरण 5: केचुआं खाद बनाने के लिए सबसे पहले फर्श पर बालु की 1 इंच मोटी पर्त बिछाकर उसके ऊपर चरण 4 से प्राप्त

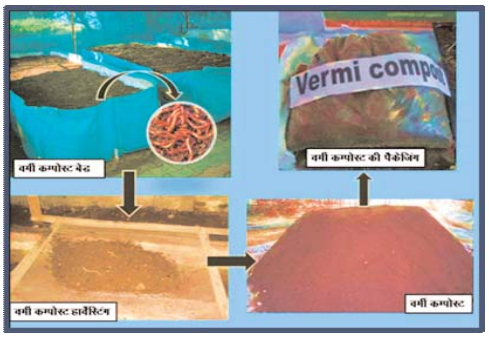

केंचुआ खाद बनाने की विधि

पदार्थो को 18 इंच मोटी पर्त इस प्रकार बिछातें है कि इसकी चौड़ाई 40-45 इंच बन जाती है। बाडे (beds) की लंबाई को छप्पर में उपलब्ध जगह के आधार पर रखते हैं। इस प्रकार 10 फीट लम्बाई की बेड (beds) में लगभग 500 किग्रा कार्बनिक अवशिष्ट समाहित हो जाता है। बाड़े को ऐसा रखें जिसमें केचुओं को घुमाने के लिए पर्याप्त स्थान तथा बाडे में हवा का प्रबंधन संभव हो सके। बाडे में नमी बनाए रखने के लिए पानी का छिड़काव करते रहते हैं।

चरण 6: जब बाडे के सभी भागों में तापमान सामान्यतः हो जाये तब इसमे लगभग 5000 केंचुए 5000 ग्राम अवशिष्ट कि दर से केचुओं तथा कोकुन का मिश्रण बाडे की एक तरफ से इस प्रकार डालतें है कि यह लम्बाई में से एक तरफ से पूरे बाडे तक पहुंच जाए।

चरण 7: सम्पूर्ण बडे को बारीक कटे हुए अवशिष्ट कि 3-4 इंच मोटी पर्त से ढकते है। अनुकुल परिस्थितियो में केंचुए पूरे बाड़े पर अपने पांव फैला जाते हैं अधिकतर केचुएं बेड में 2-3 इंच गहराई पर रहकर कार्बनिक पदार्थो का भक्षण कर उत्सर्जन करते रहतें है।

चरण 8: अनुकूल आर्द्रता, तापक्रम तथा हवामय परिस्थितियों में 25-30 दिनों के उपरान्त बाडे कि ऊपरी सतह पर 3-4 इंच मोटी केंचुआ खाद एकत्र हो जाती है। इसे अलग करने कि लिए बाडे कि बाहरी आवरण सतह को एक तरफ से हटाते है। ऐसा करने पर जब केचुआ बाडे पे गहराई में चले जाते हैं। तत्पश्चात बाडे को पुनः पूर्व कि भाँति महीन कचरें से ढककर पर्याप्त आर्द्रता बनाये रखने हेतु पानी का छिड़काव कर देते हैं।

चरण 9: लगभग 5-7 दिनों में केंचुआ खाद की 4-6 इंच मोटी एक और परत तैयार हो जाती है। इसे भी पिछले चरण 8 कि भांति अलग कर लेते हैं तथा बाडे में फिर पर्याप्त आर्द्रता बनाए रखने हेतु पानी का छिड़काव किया जाता है।

चरण 10: हर 6-8 दिनों के अन्तराल में अनुकूल परिस्थितियों में पुनः केंचुआ खाद की 4-6 इंच मोटी पर्त बनती है। जिसे पूर्व में चरण 9 की भांति अलग कर लिया जाता है। इस प्रकार 40-45 दिनों में लगभग 80-85% केंचुआ खाद एकत्र कर ली जा सकती है।

चरण 11: अन्त में कुछ केंचुआं खाद के केंचुओं तथा केंचुओं के अण्डो सहित एक छोटे से ढ़ेर के रूप में बच जाती है। इसे दूसरे चक्र में केचुएं के रूप में प्रयुक्त कर लेतें है इस प्रकार लगातार केंचुआ खाद उत्पादन हेतु इस प्रक्रिया को दोहराते रहते हैं।

चरण 12: एकत्र की गई केचुआ खाद से केचुएं के अंडों अवयस्क केचुओं तथा केंचुए द्वारा नही खाए गये पदार्थों को 3-4 सेंमी आकार की छलनी से छानकर अलग कर लेते हैं।

चरण 13: अतिरिक्त नमी हटाने कि लिए छनी हुई केचुआं खाद को पक्के फर्श पर फैला देते हैं तथा जब नमी लगभग 30-40 प्रतिशत तक रह जाती है तो इसे एकत्र कर लेते हैं।

चरण 14: केचुआं खाद को प्लास्टिक के थैले में सील करके पैक किया जाता है ताकि इसमें नमी कम न हो।

केचुओं को भोजन देना

लगभग 30 दिन के बाद 31 वे दिन वर्मी बाडे में थाड़ो-थोड़ा जैविक कचरा समान रूप से फैला सकते है कचरे के तह कि मोटाई 5 सेमी से अधिक मोटी नही होनी चाहिए, अथवा कचड़े के सड़ने से जो गर्मी उत्पन्न होगी उससे केचुओं को नुकसान हो सकता है। एक सप्ताह में दो बार कचरा वर्मी बाडे पर डाला जा सकता है। इस समय भी नमी 50-60% बनाये रखना चाहिए। केचुओं के बाक्स ढककर रख दे, केचुओं कि सुरक्षा के लिए अनिवार्य है कि इस तरह से ढके कि बाक्स में हवा का वहन ठीक प्रकार से होता रहे।

उपयोग विधि

वर्मी कम्पोस्ट जैविक खाद का उपयागे विभिन्न फसलो में अलग-अलग मात्रा में किया जाता है। खेत की तैयारी के समय 2.5 से 3.0 टन प्रति हेक्टेयर उपयोग करना चाहिए। खाद्यान फसलो में 5.0 से 6.0 टन प्रति हेक्टेयर मात्रा का उपयोग करें गार्डन व मामलो मे 100 ग्राम प्रति गमला खाद का उपयोग करे। सब्जियो में 11-13 टन/हेक्टेयर खाद का उपयोग करें।

वर्मी कम्पोस्ट में विभिन्न तत्वों कि मात्रा

वर्मी कम्पोस्ट में साधारण मृदा कि तुलना में 5 गुना अधिक नाइट्रोजन 7 गुना अधिक फास्फेट 7 गुना अधिक पाटेाश 2 गुना अधिक मैग्नीशियम व कैल्शियम होता है।

Nitrogen- 1.0-2.25%, Phosphorus- 1.0-1.50%

केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) के लाभ

वर्मी कम्पोस्ट अच्छी किस्म कि खाद है तथा साधारण कम्पोस्ट या गाबेर कि खाद से ज्यादा लाभदायक साबित हुई हैं।

1. वर्मी कम्पोस्टे को मृदा में मिलने से भूमि भुरभुरी एवं उपजाऊ बनती है।
2. वर्मी कम्पोस्ट में आवश्यक पोषक तत्व प्रचरु व संतुलित मात्रा में होते है। जिससे पौधे संतुलित मात्रा में विभिन्न आवश्यक पोषक तत्व प्राप्त कर सकते है।
3. वर्मी कम्पोस्ट टिकाऊ खेती (Sustainable agriculture) के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है।
4. वमी कम्पोस्ट जैविक खेती के लिए एक नया कदम है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

बाजरा: आधुनिक स्वास्थ्य हेतु प्राचीन अनाज की पुन: खोज

ईशा शर्मा जीव रसायन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

नियाज अहमद, अनुष्का श्रीवास्तव
महिमा पाण्डेय मॉलिक्यूलर बायोलॉजी एंड बायोटेक्नोलॉजी विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

बाजरा, एक छोटे, छोटे अनाज की एक अत्यधिक मूल्यवान खाद्यान्न है जो आपके शरीर की सभी पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करता है, स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है, और यहां तक कि टिकाऊ कृषि में भी योगदान करता है। यह अनाज भारत में मौजूद है और इसे लंबे समय तक उपेक्षित रखा गया है। प्राचीन अनाजों में बाजरा एक अद्वितीय स्थान रखता है, जिसकी विशेष खासियत यह है कि यह विभिन्न जलवायु और कठोर परिस्थितियों में भी उगाई जा सकती है। इसकी व्यापक ऐतिहासिक प्रासंगिकता है जो इसे प्राचीन युगों में एक मुख्य खाद्यान्न बनाती है। आज, बाजरा की खेती विश्वभर में 131 देशों में की जाती है, जो इसके वैश्विक प्रसार को दर्शाता है। इसे पूरे एशिया और अफ्रीका में प्राचीन और पारंपरिक भोजन का स्रोत माना जाता है, जो लगभग 590 मिलियन लोगों के लिए मुख्य भोजन का स्रोत बना है।

बाजरा के स्वास्थ्य लाभ: बाजरा कई स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है, जिससे यह किसी व्यक्ति के आहार में मूल्यवान योगदान देता है। बाजरा छोटे अनाज हैं जो आवश्यक पोषक तत्वों से भरे होते हैं, जिनमें विटामिन (विशेष रूप से बी-कॉम्प्लेक्स विटामिन), लौह, कैल्शियम और फास्फोरस जैसे खनिज शामिल होते हैं जो समग्र स्वास्थ्य में योगदान देते हैं। इसके अतिरिक्त, बाजरा आहारीय फाइबर से भरपूर होता है, जो पाचन में सुधार करता है और वजन घटाने में मदद करता है। उनका कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स मधुमेह और रक्त शर्करा में वृद्धि को रोकने में मदद करता है। बाजरा में कम कोलेस्ट्रॉल गुण होते हैं जो हृदय और हृदय स्वास्थ्य के लिए अच्छे होते हैं और इनमें मौजूद एंटीऑक्सीडेंट हृदय रोगों के खतरे को कम करते हैं। इसके अलावा, बाजरा को प्राकृतिक रूप से ग्लूटेन-मुक्त माना जाता है, जो इसे ग्लूटेन संवेदनशीलता या सीलिएक रोग से पीड़ित लोगों के लिए एक उत्कृष्ट विकल्प बनाता है।

बाजरा के प्रकार: देशों में बाजरा को उनकी खेती के क्षेत्र के अनुसार वर्गीकृत किया जाता है, जो मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं- प्रमुख बाजरा और लघु बाजरा। जो बाजरा दुनिया में व्यापक रूप से उगाया जाता है उसे प्रमुख बाजरा कहा जाता है और वह बाजरा जिसका क्षेत्रफल कम होता है उसे लघु बाजरा कहा जाता है। तीसरी श्रेणी को छद्म बाजरा या छद्म अनाज कहा जाता है। वह अनाज जिसमें समान पोषण गुण होते हैं लेकिन पोएसी परिवार से संबंधित नहीं होते हैं, छद्म बाजरा कहलाते हैं।

प्रमुख बाजरा: प्रमुख बाजरा वैश्विक कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, खाद्य सुरक्षा और पोषण में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। आइए तीन प्रमुख बाजरा की विशिष्ट विशेषताओं पर गौर करें-पर्ल बाजरा, ज्वार और फिंगर बाजरा।

पर्ल बाजरा (पेनिसेटम ग्लौकम): पर्ल बाजरा विभिन्न क्षेत्रों, विशेष रूप से भारत, पश्चिमी और मध्य अफ्रीका, पूर्वी और दक्षिणी अफ्रीका में एक प्रमुख अनाज के रूप में जाना जाता है। इसकी खेती दोहरे उद्देश्यों को पूरा करता है- एशिया और अफ्रीका में एक महत्वपूर्ण खाद्यान्न के रूप में और अमेरिका में मूल्यवान चारे के रूप में। इसकी बहुमुखी प्रतिभा के अलावा, बाजरा में उच्च फास्फोरस सामग्री होती है, हड्डी के स्वास्थ्य को बढ़ावा देना। इसके अतिरिक्त, इसमें आयरन और फोलिक एसिड होता है, जो एनीमिया को रोकने के लिए महत्वपूर्ण है, खासकर गर्भवती महिलाओं में। विशेष रूप से, चावल और गेहूं जैसे पारंपरिक अनाज की तुलना में, पर्ल बाजरा अपनी उच्च फाइबर सामग्री के कारण अलग दिखता है, जो चीनी और वजन नियंत्रण के लिए फायदेमंद है।

ज्वार (सोरघम बाइकलर): ग्रेट मिलेट, ज्वार और कई अन्य नामों से व्यापक रूप से पहचाना जाने वाला ज्वार संयुक्त राज्य अमेरिका, नाइजीरिया, सूडान, मैक्सिको और भारत सहित विभिन्न क्षेत्रों में पनपता है। इसकी खेती एशिया और अफ्रीका में खाद्यान्न उत्पादन और अमेरिका में चारे के दोहरे उद्देश्य को पूरा करती है। ज्वार की पोषण संबंधी प्रोफाइल प्रभावशाली है, इसमें उच्च मैग्नीशियम स्तर है जो कुशल कैल्शियम अवशोषण की सुविधा प्रदान करता है। फेनोलिक यौगिकों और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर, ज्वार को इसके स्वास्थ्य के लिए जाना जाता है। विशेष रूप से, इसका कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स इसे मधुमेह रोकथाम में एक मूल्यवान घटक बनाता है।

फिंगर मिलेट (एलुसीन कोराकाना): रागी, बर्ड्स जैसे विभिन्न नामों से जाना जाता है। फिंगर मिलेट की खेती भारत, इथियोपिया और युगांडा जैसे देशों में की जाती है, इसका अनुप्रयोग एशिया और अफ्रीका में खाद्यान्न और बीयर बनाने तक फैला हुआ है। इसकी कैल्शियम की असाधारण प्रचुरता फिंगर मिलेट को अन्य अनाज से अलग करता है, जो दूध से भी आगे निकल जाती है, दूध से तीन गुना अधिक कैल्शियम स्रोत के साथ, यह एक महत्वपूर्ण आहार बन जाता है। इसके अलावा, इसकी उच्च प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट सामग्री विशेषकर शिशुओं हेतु दूध छुड़ाने का भोजन इसे आदर्श विकल्प बनाती है। दलिया बनाने हेतु फिंगर मिलेट की प्रतिष्ठा यह इसके पोषण संबंधी महत्व को भी रेखांकित करता है।

फॉक्सटेल बाजरा (सेटेरिया इटालिका): इटालियन, जर्मन और हंगेरियन जैसे विभिन्न नामों से जाना जाने वाला फॉक्सटेल बाजरा चीन, म्यांमार, भारत और पूर्वी यूरोप में उगाया जाता है। यह बहुमुखी बाजरा खाद्यान्न और चारा फसल दोनों के रूप में काम करता है। उल्लेखनीय है कि फॉक्सटेल बाजरा अपनी प्रभावशाली सूखा सहनशीलता के कारण वर्षा आधारित क्षेत्रों में फलता-फूलता है, जो इसे चुनौतीपूर्ण कृषि वातावरण में एक लचीली और आवश्यक फसल बनाता है।

प्रोसो बाजरा (पैनिकम मिलिएसम)- आम, हॉग और ब्रूम बाजरा जैसे नामों से व्यापक रूप से पहचाने जाने वाले, प्रोसो बाजरा की खेती रूस सहित विभिन्न क्षेत्रों में की जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका, यूक्रेन और भारत। मुख्य रूप से खाद्यान्न और पक्षियों के बीज हेतु उपयोग किया जाने वाला प्रोसो बाजरा जैविक कृषि प्रणालियों में एक विशेष स्थान रखता है। इसकी अनुकूलनशीलता और बहुमुखी प्रतिभा विभिन्न कृषि पद्धतियों में इसकी लोकप्रियता में योगदान करती है।

लिटिल मिलेट (पैनिकम सुमाट्रेंस): ब्लू पैनिक और हेन मेनेरी के नाम से जाना जाने वाला लिटिल मिलेट मुख्य रूप से भारत में उगाया जाता है, जो खाद्यान्न उत्पादन के उद्देश्य को पूरा करता है। लिटिल मिलेट की विशिष्ट विशेषता इसकी सूखा-सहिष्णु प्रकृति में निहित है, जो इसे वर्षा आधारित क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण फसल बनाती है। पानी की कमी के प्रति इसकी लचीलापन कृषि परिदृश्य में इसके महत्व को बढ़ाती है।

कोडो बाजरा (पास्पलम स्क्रोबिकुलटम): मुख्य रूप से भारत में खेती की जाती है और वरगु और भारतीय पास्पलम जैसे नामों से जाना जाता है, कोडो बाजरा अपने खाद्यान्न उत्पादन के लिए मूल्यवान है। मामूली बाजरा होने के बावजूद, कोडो बाजरा स्थानीय कृषि पद्धतियों में महत्वपूर्ण योगदान देता है, जो कई समुदायों के लिए पोषण और आजीविका का स्रोत प्रदान करता है।

बार्नयार्ड बाजरा (इचिनोचोला क्रूसगैली): जापानी, सानवा और कोरियाई बाजरा के रूप में संदर्भित, बार्नयार्ड बाजरा की खेती भारत, जापान, चीन और मलेशिया जैसे देशों में की जाती है। मुख्य रूप से खाद्यान्न प्रयोजनों हेतु उपयोग किया जाने वाला बार्नयार्ड बाजरा हृदय रोगों के रोगियों हेतु अपनी अनुशंसा के कारण विशिष्ट है। यह पोषण संबंधी विचार इसकी खेती और खपत में एक स्वास्थ्य-केंद्रित आयाम जोड़ता है।

निष्कर्ष: ये बाजरा, जो अक्सर विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में खेती की जाती है, कृषि परिदृश्य में लचीलापन, अनुकूलनशीलता और अद्वितीय पोषण लाभ लाते हैं। इनमें विटामिन, खनिज, प्रोटीन, फाइबर और एंटीऑक्सीडेंट की अधिक मात्रा होती है, जो भोजन में योगदान के साथ-साथ संभावित स्वास्थ्य लाभ भी प्रदान करते हैं। इसलिए, बाजरा को एक टिकाऊ और पौष्टिक कृषि की ओर बढ़ावा दिया जा रहा है। 2018 में, भारत सरकार ने बाजरा को पुनर्जीवित करने में उल्लेखनीय कदम उठाया और इसे ÷राष्ट्रीय बाजरा वर्ष÷ के रूप में घोषित किया। इसके बाद, प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने 2023 को "अंतर्राष्ट्रीय बाजरा वर्ष" का सुझाव दिया, जिसका उद्देश्य भारत को "बाजरा के वैश्विक केंद्र" के रूप में स्थापित करना है। इस प्रस्ताव को 72 अन्य देशों से समर्थन प्राप्त हुआ, और यह अंततः मार्च 2022 में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा समर्थित किया गया। अंतर्राष्ट्रीय बाजरा वर्ष खाद्य सुरक्षा, जलवायु परिवर्तन लचीलापन और टिकाऊ कृषि जैसे गंभीर विवादों को संबोधित करने में इन अनाजों के महत्व को उजागर करने हेतु एक वैश्विक मंच के रूप में कार्य करता है। यह पहल "वसुधैव कुटुंबकम" के प्राचीन भारतीय दर्शन से मेल खाती है, जो इस विचार पर जोर देता है कि दुनिया एक परिवार है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

गृह विज्ञान विस्तार के माध्यम से महिलाओं को सशक्त बनाना : कौशल विकास और उद्यमिता

डॉ. जया वर्मा कृषि विस्तार एवं संचार विभाग, चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ. प्र.)

परिचय: सामुदायिक सशक्तिकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से समुदाय के भीतर व्यक्ति और समूह अपनी जरूरतों और चिंताओं को दूर करने और उनके जीवन को प्रभावित करने वाली निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए आवश्यक ज्ञान, कौशल, संसाधन और आत्मविश्वास प्राप्त करते हैं। इसमें सकारात्मक परिवर्तन लाने और समग्र कल्याण में सुधार के लिए आत्मनिर्भरता, सामाजिक न्याय और सामूहिक कार्रवाई को बढ़ावा देना शामिल है। सतत विकास हासिल करने और लचीले समाज के निर्माण के लिए सामुदायिक सशक्तिकरण आवश्यक है।

विज्ञान साक्ष्य-आधारित ज्ञान, नवीन समाधान और समस्या-समाधान के लिए उपकरण प्रदान करके समुदायों को सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वैज्ञानिक अनुसंधान के माध्यम से, समुदाय अपनी सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय चुनौतियों की गहरी समझ प्राप्त कर सकते हैं और उनसे निपटने के लिए सूचित रणनीतियाँ विकसित कर सकते हैं। विज्ञान शोधकर्ताओं, नीति निर्माताओं, चिकित्सकों और समुदाय के सदस्यों सहित विभिन्न हितधारकों के बीच सहयोग की सुविधा भी प्रदान करता है, ताकि ऐसे समाधान तैयार किए जा सकें जो प्रासंगिक और टिकाऊ हों।

विस्तार सेवाएँ, जिन्हें आउटरीच या सामुदायिक विकास कार्यक्रम के रूप में भी जाना जाता है, का सामुदायिक सशक्तिकरण पहलों का समर्थन करने का एक लंबा इतिहास है। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में कृषि विस्तार प्रयासों से उत्पन्न, विस्तार सेवाएँ स्वास्थ्य, शिक्षा, पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक आर्थिक विकास सहित विषयों की एक विस्तृत श्रृंखला को शामिल करने के लिए विकसित हुई हैं। इन सेवाओं का उद्देश्य सूचना का प्रसार, तकनीकी सहायता प्रदान करना और क्षमता निर्माण गतिविधियों को सुविधाजनक बनाकर वैज्ञानिक ज्ञान और स्थानीय समुदायों के बीच अंतर को पाटना है। विस्तार सेवाओं का ऐतिहासिक विकास सामुदायिक विकास के लिए अधिक सहभागी और समावेशी दृष्टिकोण की ओर बदलाव को दर्शाता है। प्रारंभिक विस्तार प्रयास मुख्य रूप से विशेषज्ञों से किसानों तक ज्ञान के हस्तांतरण पर केंद्रित थे, लेकिन समय के साथ, निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में समुदायों को शामिल करने और उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं के अनुरूप हस्तक्षेप करने के महत्व की मान्यता बढ़ रही है। आज, विकास प्रक्रिया में समुदायों को सक्रिय भागीदार के रूप में शामिल करने के लिए विस्तार सेवाएँ विभिन्न प्रकार की पद्धतियों को अपनाती हैं, जैसे सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन, समुदाय-आधारित अनुसंधान और नागरिक विज्ञान।

विस्तार सेवाएँ

सामुदायिक विकास में विस्तार सेवाओं की परिभाषा और दायरा: विस्तार सेवाओं का तात्पर्य ज्ञान का प्रसार करने, तकनीकी सहायता प्रदान करने और सतत विकास के लिए व्यक्तियों और समुदायों को सशक्त बनाने के लिए क्षमता निर्माण गतिविधियों को सुविधाजनक बनाने के उद्देश्य से संगठित प्रयासों से है। ये सेवाएँ वैज्ञानिक अनुसंधान और स्थानीय समुदायों के बीच की खाई को पाटती हैं, ज्ञान को व्यावहारिक समाधानों में बदलने में मदद करती हैं जो गंभीर चुनौतियों का समाधान करती हैं और सकारात्मक बदलाव को बढ़ावा देती हैं। विस्तार सेवाओं का दायरा समुदायों की भलाई और लचीलेपन को बढ़ाने पर ध्यान देने के साथ कृषि, स्वास्थ्य, पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक आर्थिक विकास सहित विभिन्न क्षेत्रों तक फैला हुआ है।

विभिन्न प्रकार की विस्तार सेवाएँ निम्नलिखित रूप में होती हैं-

1.कृषि विस्तार सेवाएँ: यह सेवाएँ कृषि उत्पादकता में सुधार के लिए विभिन्न उपायों को प्राथमिकता देती हैं, जैसे कृषि प्रौद्योगिकियों का अनुसरण, उन्नत बीज तकनीक, पशुधन प्रबंधन, और सामुदायिक कृषि प्रोजेक्ट्स।

2.स्वास्थ्य विस्तार सेवाएँ: इन सेवाओं का लक्ष्य सामुदायिक स्वास्थ्य में सुधार करना होता है, जैसे स्वास्थ्य शिक्षा, प्रथम सहायता, टीकाकरण, मातृ और शिशु सेवाएँ, और संक्रामक रोगों के खिलाफ जागरूकता।

3.पर्यावरण विस्तार सेवाएँ: यह सेवाएँ पर्यावरण संरक्षण, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन, और सतत विकास को प्रोत्साहित करती हैं, जैसे वन संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण, और जलवायु परिवर्तन के लिए संगठन किये जाते हैं।

4.सामाजिक आर्थिक विस्तार सेवाएँ: इन सेवाओं का उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक समृद्धि को बढ़ावा देना होता है, जैसे गरीबी उन्मूलन, उद्यमिता विकास, और सामुदायिक विकास को प्रोत्साहित करना। इन सेवाओं के माध्यम से समुदायों को सामर्थ्य और सामूहिक उत्थान के लिए सहायता प्रदान की जाती है, जिससे सामाजिक, आर्थिक, और पर्यावरणिक सुधार हो सकता है।

विस्तार कार्य में प्रयुक्त सिद्धांतों और पद्धतियों की जांच निम्नलिखित रूप में की जाती है-

1.सहभागी दृष्टिकोण: इस सिद्धांत के अनुसार, विस्तार सेवाएँ समुदाय के सदस्यों के साथ सहयोगपूर्ण रूप से डिजाइन और कार्यान्वित की जाती हैं। यह सुनिश्चित करता है कि समुदाय के आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं को समझा जा सके और उनको सही तरीके से संबोधित किया जा सके।

2.आवश्यकताओं का आकलन: इस प्रक्रिया में, समुदाय के आवश्यकताओं, चुनौतियों, और अवसरों का विस्तृत आकलन किया जाता है। इससे कार्यक्रमों का विकास और निर्माण समुदाय की आवश्यकताओं के अनुसार किया जा सकता है।

3.क्षमता निर्माण: यह सिद्धांत केंद्रीय रूप से क्षमता का निर्माण करने पर ध्यान केंद्रित करता है। क्षमता निर्माण गतिविधियों के माध्यम से समुदाय के सदस्यों को ज्ञान, कौशल, और संसाधनों में मजबूत किया जाता है, जिससे वे अपनी समुदाय में सक्रिय रूप से शामिल हो सकें।

डेटा एनालिटिक्स: डेटा एनालिटिक्स उपकरण और तकनीकें शोधकर्ताओं और चिकित्सकों को बड़े डेटासेट का विश्लेषण करने, पैटर्न की पहचान करने और निर्णय लेने और संसाधन आवंटन को सूचित करने वाली अंतर्दृष्टि उत्पन्न करने में सक्षम बनाती हैं। डेटा एनालिटिक्स का उपयोग करके, समुदाय अपनी आवश्यकताओं को बेहतर ढंग से समझ सकते हैं, प्रगति को ट्रैक कर सकते हैं और हस्तक्षेपों के प्रभाव को माप सकते हैं।

अंत:विषय अनुसंधान: अंत:विषय अनुसंधान कई दृष्टिकोणों से जटिल सामुदायिक मुद्दों को संबोधित करने के लिए विज्ञान, इंजीनियरिंग, सामाजिक विज्ञान और मानविकी सहित विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों को एक साथ लाता है। विभिन्न विषयों से ज्ञान और कार्यप्रणाली को एकीकृत करके, अंत:विषय अनुसंधान सामुदायिक सशक्तिकरण के लिए नवीन समाधान और समग्र दृष्टिकोण को बढ़ावा देता है।

सहयोगात्मक भागीदारी सामुदायिक विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, और इसके कई पहलु हैं जो सामुदायिक सशक्तिकरण को प्रोत्साहित करने में मदद करते हैं। यहां कुछ मुख्य कारक हैं-

1.संसाधनों की पूलिंग: सहयोगात्मक भागीदारी संसाधनों की पूलिंग का एक महत्वपूर्ण माध्यम है, जिससे विभिन्न संसाधनों का संयोजन किया जा सकता है। इससे विकास कार्यक्रमों को अधिक प्रभावी ढंग से समर्थित किया जा सकता है और उन्हें अधिक उत्कृष्ट बनाने में मदद मिलती है।

2.आपसी सीख और क्षमता निर्माण: सहयोगात्मक भागीदारी संगठनों और समुदायों के बीच आपसी सीख और क्षमता निर्माण को प्रोत्साहित करती है। इससे समुदाय के सदस्य सामाजिक और आर्थिक रूप से सशक्त होते हैं और अपनी समस्याओं का समाधान करने के लिए अधिक सक्षम होते हैं।

3.आवाजाही और लोकतांत्रिक निर्णय: सहयोगात्मक भागीदारी समुदाय के सदस्यों को उनकी आवाज़ को सुनिश्चित करती है और उन्हें लोकतांत्रिक निर्णय में शामिल करती है। इससे समुदाय के सदस्यों का सामाजिक और आर्थिक विकास सुनिश्चित होता है और उन्हें अपने भविष्य के लिए स्वतंत्रता का अधिकार मिलता है। सहयोगात्मक भागीदारी सामुदायिक सशक्तिकरण के लिए एक महत्वपूर्ण और प्रभावी उपाय है, जो समाज को स्वतंत्र, सकारात्मक, और समृद्ध बनाने में मदद कर सकता है।

यहाँ हितधारकों के बीच प्रभावी साझेदारी बनाने और सहयोग को बढ़ावा देने के कुछ महत्वपूर्ण रणनीतियाँ हैं:

1.स्पष्ट लक्ष्य और उद्देश्य स्थापित करें: सहयोगात्मक संबंध बनाने के लिए साझेदारों के बीच स्पष्ट लक्ष्य और उद्देश्यों का सहमति से निर्धारण करना महत्वपूर्ण है। इससे सहयोग के क्षेत्र की सीमा स्पष्ट होती है और साझेदारों का सहमति से आगे बढ़ने में मदद मिलती है।

2.विश्वास और पारस्परिक सम्मान बनाएं: विश्वास और पारस्परिक सम्मान के माध्यम से, साझेदारी के बीच विश्वास और स्थायित्व का माहौल बनता है। इससे सहयोगात्मक संबंध मजबूत होते हैं और साझेदारों के बीच उत्कृष्ट संचार की सुविधा होती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

वर्तमान परिवेश में टिकाऊ कृषि है एक आशा की किरण

सिद्रा किदवई (शोध छात्रा) सस्य विज्ञान विभाग,
सौरभ भारती शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग,
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

प्रवीण कुमार शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग,
सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी वि.वि., मेरठ

शिवम् कौशिक शोध छात्र , सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

टिकाऊ कृषि एक दर्शन और पद्धतियों का एक सेट है जो मिल कर तीन अलग-अलग शर्तों को पूरा करती हैं: * पर्यावरण का सम्मान करना और प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करना * वर्तमान में किसानों के लिए एक उचित और पर्याप्त आय सुनिश्चित करना * कृषि पर गुजारा करने और भविष्य में भी उचित और पर्याप्त आय प्राप्त करने के लिए अगली पीढ़ियों की क्षमता से समझौता नहीं करना।

स्थाई कृषि/टिकाऊ खेती कृषि विज्ञान का एक उप-क्षेत्र है इसकी परिकल्पना एवं व्यवहारिकता खेती की नियंत्रण पर आधारित है। स्थाई/टिकाऊ कृषि खेती की वह विधि जो संश्लेषित उर्वरकों एवं कीटनाशकों के अनुप्रयोग अथवा न्यूनतम प्रयोग पर आधारित है तथा जो भूमि की उर्वरा शक्ति को बचाए रखने हेतु फसल चक्र, हरी खाद, कंपोस्ट आदि का प्रयोग करती है स्थाई कृषि/टिकाऊ खेती कहलाती है ।

स्थाई कृषि/टिकाऊ खेती को पोषणीय कृषि, संपोषित कृषि एवं सतत कृषि, के अलावा स्थाई कृषि विकास को टिकाऊ कृषि, पारिस्थितिकीय कृषि, जीवाश्मीय कृषि, प्राकृतिक कृषि या परमाकल्चर आदि अनेक नामों से भी जाना जाता है ?।

स्थाई कृषि/टिकाऊ खेती का अर्थ: स्थाई/टिकाऊ कृषि भूमि वन्यप्राणी, फसल, मत्स्य पालन, पशुपालन, वन-संरक्षण पौध-आनुवंशिक तथा पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलित प्रबन्ध द्वारा पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाकर वर्तमान एवं भावी पीढ़ी के लिए भोजन एवं जीविकोपार्जन की व्यवस्था के साथ-साथ उत्पादकता एवं प्राकृवास को बनाए रखने की पद्धति है। स्थाई कृषि से मृदा अपघटन तथा मृदाक्षरण की रोकथाम के साथ ही पोषक तत्त्वों की परिपूर्ति, खरपतवार, कीट एवं रोग व्याधियों का जैविक तथा कृषिगत विधियों से नियंत्रण किया जाता है ।

स्थाई कृषि/टिकाऊ खेती की परिभाषा: स्थाई कृषि/टिकाऊ खेती को अनेक प्रकार से परिभाषित किया गया है मोटे तौर पर इसकी परिभाषा-'स्थाई कृषि प्रणाली एक ऐसी खेती की पद्धति है, जो मानव के लिए असीमित काल तक उपयोगी हो, जिसमें संसाधनों का उपयोग अधिक सक्षम या प्रभावकारी ढंग से किया जाए और पर्यावरण संतुलन बनाए रखें एवं मनुष्य तथा अन्य प्रजातियों के लिए अनुकूल हों?।''

किसान एवं किसानी मित्र

उद्देश्य: * समेकित/एकीकृत कीट, रोग व खरपतवार प्रबन्धन पर बल * जीवांश/कार्बनिक खादों का अधिकाधिक उपयोग। * भूमि एवं जल-संरक्षण क्रियाओं का अनुपालन करना संश्लेषित रसायनों का न्यूनतम प्रयोग * फसल-चक्र का समुचित प्रयोग करना ।

कुछ सतत कृषि पद्धतियां

कृषि वानिकी: कृषि वानिकी भूमि के एक ही टुकड़े पर कृषि और वानिकी के संयोजन की प्रथा है। इससे कृषि आय में विविधता लाने, मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करने और वन्यजीवों के लिए आवास प्रदान करने में मदद मिल सकती है। कृषि प्रणालियों में पेड़ों को एकीकृत करने से कई लाभ मिल सकते हैं, जिनमें मिट्टी की उर्वरता में सुधार, फसलों के लिए छाया और लकड़ी और फलों के उत्पादन के माध्यम से अतिरिक्त आय का स्रोत शामिल है। कृषिवानिकी भूमि के एक ही टुकड़े पर कृषि और वानिकी के संयोजन की प्रथा है। इससे कृषि आय में विविधता लाने, मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करने और वन्यजीवों के लिए आवास प्रदान करने में मदद मिल सकती है

एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम): आईपीएम कीटनाशकों के उपयोग को कम करने के लिए जैविक नियंत्रण, सांस्कृतिक प्रथाओं, फसल निगरानी, कीटों और बीमारियों का प्रबंधन और यांत्रिक नियंत्रण जैसी तकनीकों के संयोजन का उपयोग करता है। उदाहरणों में परजीवियों को नियंत्रित करने के लिए प्राकृतिक शिकारियों की शुरूआत, रोग प्रतिरोधी पौधों का उपयोग करना, स्वस्थ फसलें उगाना जो कीटों का सामना करने के लिए पर्याप्त मजबूत हों या यहां तक कि फसलों से कीटों को दूर आकर्षित करने के लिए विशेष रूप से आस-पास के पौधों को शामिल करना शामिल है।

फसल चक्र: विभिन्न फसलों को क्रम से लगाने से मिट्टी की उर्वरता में सुधार, कीटों और बीमारियों को कम करने और खरपतवारों को दबाने में मदद मिलती है। फसल चक्र से तात्पर्य एक ही खेत में एक के बाद एक विभिन्न प्रकार की फसलें उगाने से है। इससे मिट्टी की जैव विविधता को बढ़ावा देने में मदद मिलती है, जिससे मिट्टी के स्वास्थ्य और उत्पादकता में लाभ होता है और अंततः लाभप्रदता बढ़ सकती है या कृषि घाटे से बचाव में मदद मिल सकती है।

कवर फसलें: कवर फसलें लगाने से मिट्टी को कटाव से बचाने, मिट्टी की उर्वरता में सुधार करने और लाभकारी कीड़ों के लिए आवास प्रदान करने में मदद मिलती है। कवर फसलें कीटों को नियंत्रित करने और खरपतवारों को कम करने में मदद करके कृत्रिम कीटनाशकों की आवश्यकता को कम करने में मदद कर सकती हैं।

जैविक खेती: यह दृष्टिकोण सिंथेटिक कीटनाशकों और उर्वरकों से बचता है और कीट नियंत्रण और मिट्टी संवर्धन हेतु प्राकृतिक और जैविक तरीकों पर ध्यान केंद्रित करता है।

बिना जुताई की खेती: बिना जुताई की खेती मिट्टी की अशांति को कम करती है, कटाव को कम करती है और मिट्टी की संरचना में सुधार करती है। संरक्षण जुताई प्रथाएं मिट्टी की अशांति को कम करती हैं, जिससे मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार और कटाव को कम करने में मदद मिलती है।

कृषि वानिकी: कृषि वानिकी भूमि के एक ही टुकड़े पर कृषि और वानिकी के संयोजन की प्रथा है। इससे कृषि आय में विविधता लाने, मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करने और वन्यजीवों के लिए आवास प्रदान करने में मदद मिल सकती है। कृषि प्रणालियों में पेड़ों को एकीकृत करने से कई लाभ मिल सकते हैं, जिनमें मिट्टी की उर्वरता में सुधार, फसलों के लिए छाया और लकड़ी और फलों के उत्पादन के माध्यम से अतिरिक्त आय का स्रोत शामिल है।

पर्माकल्चर: पर्माकल्चर एक ऐसी प्रणाली है जो लोगों, जानवरों और व्यापक पर्यावरण सहित सभी प्राकृतिक तत्वों के बीच सह-अस्तित्व के लिए प्रयास करती है। पर्माकल्चर का उपयोग शहरी, उपनगरीय और ग्रामीण सहित विभिन्न सेटिंग्स में किया जा सकता है। पर्माकल्चर सिस्टम को प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र की नकल करने, विविध वृक्षारोपण और संसाधनपूर्ण डिजाइन के माध्यम से स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए डिजाइन किया गया है।

महत्व एवं विशेषताएं : * कम लागत * स्थानीय उपलब्धता * पर्यावरण हितैषी * अधिक गुणवत्तापूर्ण एवं पोषणीय उत्पाद * विविधिकरण * आय में वृद्धि एवं समृद्धि मूलक * अधिक भण्डारण क्षमता

01/2023-24

कृषि-प्रौद्योगिकियां : भारतीय कृषि में परिवर्तन

सैयद ताजीन जैदी शोध छात्र, फसल कार्यिकी विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

रूहे हसीन, जागृति सिंह, अनुराधा पटेल

अनुष्का श्रीवास्तव, महिमा पाण्डेय

मॉलिक्यूलर बायोलॉजी एंड बायोटेक्नोलॉजी विभाग आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

कृषि-प्रौद्योगिकियाँ भारतीय कृषि को नया आकार दे रही हैं, जिसमें सटीक खेती, IoT, AI और उत्पादकता को अनुकूलित करने वाले फार्म प्रबंधन सॉफ्टवेयर जैसे नवाचार शामिल हैं। चुनौतियों के बावजूद, इन्हें अपनाना एक स्थायी और अभिनव भविष्य का वादा करता है, किसानों के लिए समृद्धि को बढ़ावा देता है और भारत में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करता है।

परिचय

कृषि-प्रौद्योगिकियाँ, कृषि और प्रौद्योगिकी के मिश्रण, एक अभिन्न अंग बन गई हैं। भारत के कृषि परिदृश्य के भविष्य को आकार देना, एक ऐसे देश में जहां कृषि एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। गोद लेने की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका होती है और जनसंख्या का भरण-पोषण करती है। उन्नत प्रौद्योगिकियों में पारंपरिक कृषि पद्धतियों में क्रांति लाने की क्षमता है। यह लेख भारत में कृषि-प्रौद्योगिकियों की वर्तमान स्थिति की पड़ताल करता है, प्रमुख नवाचारों पर प्रकाश डालता है, चुनौतियों को उजागर करता है, और सतत कृषि विकास पर परिवर्तनकारी प्रभाव को विश्लेषण करता है। भारत के हाल के वर्षों में तकनीकी सहित कृषि क्षेत्र में काफी बदलाव आया है। प्रगति उत्पादकता, कुशलता और संसाधन अनुकूलन में योगदान दे रही है। सटीक खेती और ड्रोन तकनीक से लेकर स्मार्ट सिंचाई प्रणाली और डेटा-संचालित निर्णय लेने की क्षमता, कृषि-प्रौद्योगिकियाँ किसानों को सशक्त बना रही हैं और सदियों पुराने बदलाव ला रही हैं। ये नवाचार न केवल फसल की पैदावार बढ़ाते हैं, बल्कि पर्यावरण का भी समाधान करते हैं और दीर्घावधि में कृषि को अधिक टिकाऊ बनाते हैं।

कीमती खेती

सटीक खेती कृषि प्रौद्योगिकियों की आधारशिला है, जो खेती के विभिन्न पहलुओं को अनुकूलित करने के लिए डेटा, सेंसर और स्वचालन का लाभ उठाती है। भारत में, किसान संसाधन इनपुट को कम करते हुए फसल की पैदावार को अधिकतम करने के लिए सटीक कृषि तकनीकों को तेजी से अपना रहे हैं। इसमें जीपीएस-निर्देशित ट्रैक्टर, फसल की निगरानी के लिए ड्रोन और मिट्टी के स्वास्थ्य विश्लेषण के लिए सेंसर का उपयोग शामिल है।

कृषि में इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT)

इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) ने भारतीय कृषि में अपनी जगह बना ली है, जिससे कृषि कार्यों की वास्तविक समय पर निगरानी और नियंत्रण की सुविधा मिल गई है। स्मार्ट सेंसर और एक्चुएटर्स जैसे IoT उपकरण किसानों को दूर से सिंचाई का प्रबंधन करने, मौसम की स्थिति की निगरानी करने और यहां तक कि पशुधन स्वास्थ्य को ट्रैक करने में सक्षम बनाते हैं। यह कनेक्टिविटी निर्णय लेने की प्रक्रियाओं को बढ़ाती है, जिससे किसानों को बदलती परिस्थितियों पर तुरंत प्रतिक्रिया करने की अनुमति मिलती है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) और मशीन लर्निंग (एमएल): एआई और एमएल एल्गोरिदम फसल प्रबंधन, बीमारी का पता लगाने और उपज की भविष्यवाणी में अंतर्दृष्टि प्रदान करके कृषि में क्रांति लाने में महत्वपूर्ण प्रगति कर रहे हैं। ये प्रौद्योगिकियां बड़ी मात्रा में डेटा का विश्लेषण करती हैं, जिससे किसानों को फसल उत्पादन को अनुकूलित करने के लिए सूचित निर्णय लेने में मदद मिलती है। एआई-संचालित एप्लिकेशन रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता को कम करते हुए, कीटों का पता लगाने में भी सहायता करते हैं।

फार्म प्रबंधन सॉफ्टवेयर

फार्म प्रबंधन सॉफ्टवेयर किसानों के लिए अपने कार्यों को सुव्यवस्थित करने के लिए एक मूल्यवान उपकरण के रूप में उभरा है। ये एप्लिकेशन फसल योजना, इन्वेंट्री प्रबंधन और वित्तीय ट्रैकिंग में सहायता करते हैं। रिकॉर्ड-कीपिंग को डिजिटल बनाकर और डेटा-संचालित निर्णय लेने की सुविधा प्रदान करके, फार्म प्रबंधन सॉफ्टवेयर कृषि प्रथाओं में दक्षता और पारदर्शिता बढ़ाता है।

कृषि-मौसम सलाहकार सेवाएं

भारत जैसे देश में, जहां कृषि मौसम की स्थिति पर अत्यधिक निर्भरता है, कृषि-मौसम सलाहकार सेवाएँ एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उन्नत प्रौद्योगिकियाँ सटीक मौसम पूर्वानुमान प्रदान करती हैं, जिससे किसानों को तदनुसार अपनी गतिविधियों की योजना बनाने की अनुमति मिलती है। इससे उन्हें अप्रत्याशित मौसम पैटर्न से जुड़े जोखिमों को कम करने और सर्वोत्तम फसल प्रबंधन करने में मदद मिलती है।

लंबवत खेती और हाइड्रोपोनिक्स

जैसे-जैसे शहरीकरण बढ़ता है और कृषि योग्य भूमि कम होती जाती है, भारत में ऊर्ध्वाधर खेती और हाइड्रोपोनिक्स को प्रमुखता मिली है। इन विधियों में न्यूनतम स्थान और पानी का उपयोग करके नियंत्रित वातावरण में फसलें उगाना शामिल है। कृषि-प्रौद्योगिकियां ऊर्ध्वाधर खेती और हाइड्रोपोनिक्स के कार्यान्वयन को सक्षम बनाती हैं, जो घनी आबादी वाले क्षेत्रों में भोजन की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए स्थायी समाधान प्रदान करती हैं।

चुनौतियाँ और भविष्य का दृष्टिकोण

हालाँकि कृषि-प्रौद्योगिकियाँ अपार संभावनाएं रखती हैं, लेकिन भारत में इन्हें व्यापक रूप से अपनाने से कुछ चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। छोटे और सीमांत किसानों, जो कृषि आबादी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, के बीच सीमित जागरूकता और पहुंच इन प्रौद्योगिकियों के व्यापक कार्यान्वयन में बाधा बनती है। इसके अलावा, उन्नत कृषि-प्रौद्योगिकियों को प्राप्त करने और लागू करने से जुड़ी उच्च प्रारंभिक लागत कई किसानों के लिए वित्तीय बाधाएं पैदा करती है। इन चुनौतियों पर काबू पाने और कृषि-प्रौद्योगिकियों को समावेशी रूप से अपनाने को बढ़ावा देने के लिए सरकारी पहल, निजी क्षेत्र का सहयोग और जागरूकता कार्यक्रम महत्वपूर्ण हैं। सब्सिडी, प्रशिक्षण कार्यक्रम और वित्तपोषण तक आसान पहुंच किसानों को इन परिवर्तनकारी प्रौद्योगिकियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। आगे देखते हुए, भारत में कृषि-प्रौद्योगिकियों का भविष्य आशाजनक प्रतीत होता है। निरंतर अनुसंधान और विकास, रणनीतिक साझेदारियों के साथ मिलकर, अधिक अनुरूप समाधानों का निर्माण कर सकता है जो भारतीय कृषि की विविध आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। जैसा कि राष्ट्र खाद्य सुरक्षा के लिए प्रयास कर रहा है, कृषि-प्रौद्योगिकियों द्वारा सक्षम टिकाऊ कृषि पद्धतियां आने वाली पीढ़ियों के लिए एक समृद्ध और लचीला कृषि क्षेत्र सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगी। निष्कर्षतः, भारत में कृषि और प्रौद्योगिकी का मेल नवाचार और स्थिरता के एक नए युग की शुरुआत करता है, जो किसानों और पूरे देश के लिए एक उज्जवल और अधिक उत्पादक भविष्य का वादा करता है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

रजनीगंधा फूल की व्यावसायिक खेती

प्रज्ञा (परास्नातक छात्रा) कृषि अर्थशास्त्र
बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
बांदा (उ.प्र.)

परिचय

रजनीगंधा एक बहुमुखी पुष्प है। इसके फूल का रंग सफेद एवं अत्यंत सुगंधित होता है। यह पुष्प अपनी मनमोहक भीनी दुभीनी सुगंध होता है। अधिक समय तक ताजा रहने, तथा दूर तक परिवहन क्षमता के कारण बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखता हैं। इसी कारण इसकी व्यावसायिक महत्व हैं।

उपयोग

फूल से सुंगचित तेल निकाला जाता हैं। पुष्प सजावट के लिए, गुलदस्ता बनाने में उपयोग होता हैं। पुष्प की माला, गजरा, लड़ी बनाने के लिए उपयोग होता हैं।

मुख्य किस्म

डबल: इसकी पंखुड़ियां कई पंक्ति में सजी होती हैं जिससे फूल का केंद्र बिंदु दिखाई नही देता हैं।

सिंगल: इसकी पंखुड़ियां केवल एक ही पंक्ति में होती हैं।

स्वर्ण रेखा, रजत रेखा, एन. बी. आर. आई लखनऊ की म्यूटेंट किस्म है।

स्थान

भारत मे रजनीगंधा की व्यावसायिक खेती मुख्य रूप से पश्चिमी बंगाल, कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र मे सफलतापूर्वक की जाती है।

मिट्टी

रजनीगंधा के लिए दोमट व बलुई दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। इसके अलावा जिसमें पानी न ठहरता हो तथा पानी का निकासी व मिट्टी हवामुक्त हो इसमें भी उगाया जा सकता है। 6.5 से 7.5 पी. एच वाली मृदा सबसे उपयुक्त होती हैं।

लगाने का समय

सामान्य रूप से मैदानी भागों में फरवरी टु मार्च एव अक्टूबर-नवम्बर मे कंदो को लगाया जाता हैं। इसको लगाने का समय स्थान विशेष भी जलवायु पर निर्भर करता है।

सिंचाई

कंदो में जब जड़ व पत्तियों का विकास होकर प्रस्फुटन होने लगे तभी सिंचाई करनी चाहिए। कीड़े एवं बीमारियां कीड़े मे मुख्य रुप से थ्रिप्स तथा mite का आक्रमण होता है, जो कि पत्ता तथा फूल दोनो को प्रभावित करता है। 0.1 प्रतिशत रोगोर या मैलाथियान का छिड़काव 15 दिनों के अन्तराल पर करना चाहिए, इस फूल मे फफूंद की बीमारी स्टेम रॉट लगती हैं इस रोग में पत्तो पर धब्बे उत्पन्न हो जाते है तथा अधिक ग्रसित होने पर सारा पत्ता धब्बों से भर जाता है, इस रोग की उपचार के लिए 2त्र फॉरमेलिन का पानी में घोलकर छिटकाव करना चाहिए। पैदावार एक हेक्टेयर भूमि में 100 से 140 क्विंटल ताजे खुले फूलों की पैदावार की जाती है। इसकी खेती से लागत मूल्य का तीन गुणा अधिक लाभ प्राप्त हो सकता है।

फसल नुकसान का सर्वे पूरा, क्रॉप कटिंग के आधार पर मुआवजा

हमीरपुर। ओलावृष्टि, चक्रवात व बेमौसम बारिश से जिले की फसलों का भारी नुकसान हुआ है। 53 गांवों में हुई भीषण ओलावृष्टि में 90 फीसदी से अधिक फसलें नष्ट हो गई। बृहस्पतिवार को जनपद आए फसल बीमा निदेशक व उनके सलाहकार ने सातों ब्लॉकों में जाकर फसलों का स्थलीय निरीक्षण किया है। कहा कि जिन किसानों ने 72 घंटे के अंदर दावा किया है। जल्द ही उनके खातों में क्षतिपूर्ति की धनराशि भेजी जाएगी। फसल बीमा के स्टेट हेड विनोद करना व उनके सलाहकार सेवानिवृत्त निदेशक कृषि एवं सांख्यकीय राजेश गुप्ता ने जनपद का दो दिवसीय दौरा किया। ओलावृष्टि, चक्रवात व बेमौसम बारिश से फसलों के नुकसान का जायजा लिया।

02/203-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

समुदाय विज्ञान विस्तार के प्रयासों के माध्यम से पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना

नेहा कन्नौजिया कृषि विस्तार एवं संचार विभाग
चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर

पर्यावरणीय चुनौतियों का परिचय: आज की दुनिया में, विश्वभर की समुदायों को अनेक पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जो पारिस्थितिकियों, मानव स्वास्थ्य, और सामाजिक-आर्थिक स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण खतरे पैदा करती हैं। ये चुनौतियाँ विभिन्न मानव गतिविधियों और प्राकृतिक प्रक्रियाओं से उत्पन्न होती हैं, जो व्यापक चिंता और कार्रवाई की अत्यावश्यकता का कारण बनती है। इन पर्यावरणीय चुनौतियों को समझना और समाधान करना वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों की संतुलनशीलता और कल्याण के लिए महत्वपूर्ण है।

प्रमुख पर्यावरणीय चुनौतियों का अवलोकन

1.जलवायु परिवर्तन: शायद विश्वभर की समुदायों के सामने सबसे प्रमुख पर्यावरणीय चुनौती है, जलवायु परिवर्तन जो मानव गतिविधियों जैसे फोसिल ईंधन जलाना, वनस्पति उन्धान, और औद्योगिक प्रक्रियाओं के कारण वायुमंडल में ग्रीनहाउस गैसों के संचय के द्वारा चलता है। इसके प्रभाव में बढ़ते तापमान, बदलते मौसम पैटर्न, समुद्र स्तर की उच्चाई में वृद्धि, अत्यधिक मौसमी घटनाएँ, और पारिस्थितिकी और कृषि में घटकों के विघटन शामिल हैं।

2. प्रदूषण: वायु, जल, और मिट्टी का प्रदूषण एक व्यापक पर्यावरणीय चुनौती बन चुका है, जो मानव स्वास्थ्य, जैव विविधता, और पारिस्थितिकी प्रणाली को हानि पहुंचाता है। प्रदूषण के स्रोतों में औद्योगिक उत्सर्जन, वाहन निर्गमन, कृषि का प्रवाह, अनुचित कचरा निपटान, और प्लास्टिक प्रदूषण शामिल हैं। प्रदूषण सांस की बीमारियों, जल प्रदूषण, जैव विविधता के हानि, और प्राकृतिक आवास की क्षति का कारण बन सकता है।

3. आवास का विनाश: कृषि, शहरीकरण, इंफ्रास्ट्रक्चर विकास, और संसाधन निष्कासन के लिए प्राकृतिक आवासों के परिवर्तन ने व्यापक आवास का विनाश और टुकड़ों में बदलने का परिणाम दिया है। यह आवास का नुकसान जैव विविधता को खतरे में डालता है, पारिस्थितिकी प्रणाली की कार्यक्षमता को अवरुद्ध करता है, और मानव कल्याण के लिए आवश्यक पारिस्थितिकी सेवाएँ जैसे स्वच्छ वायु और पानी, बहुलक, और जलवायु नियंत्रण को कम करता है।

4. प्राकृतिक संसाधनों का अधिकार: नदियाँ, वन, मात्स्य पालन, और खनिज समायोजन के असमर्थनीय शोध, अधिकतम उत्सर्जन, वनस्पति उन्धान, मिट्टी की गर्मी, पानी की कमी, और अपने गैर-नवीकरणीय संसाधनों के असमर्थन ने जीवात्मक स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा, और आजीविका में प्रमुख चुनौतियों का सामना किया है, खासकर संसाधन-आधारित समुदायों में।

इन पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करना कई कारणों से प्रमुख महत्व रखता है-

1.पारिस्थितिकी स्वास्थ्य: स्वस्थ पारिस्थितिकी संतुलन, वन्यजीव संरक्षण, जलवायु नियंत्रण, शुद्ध वायु और पानी प्रदान करना, और जीविका का समर्थन करना महत्वपूर्ण है। पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना करने से पारिस्थितिकी स्वास्थ्य को संरक्षित रखने में मदद मिलती है, जिससे पारिस्थितिकी संरचना और प्रतिरोध को सुनिश्चित किया जाता है, इससे मानव कल्याण के लिए महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी सेवाओं की जारी दी जाती है।

2.मानव स्वास्थ्य: पर्यावरणीय विकृति, प्रदूषण, और जलवायु परिवर्तन मानव स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं। अशुद्ध वायु और पानी की गुणवत्ता, जहरीले रासायनों से संपर्क, और अत्यधिक मौसमी घटनाओं से सांस की बीमारियाँ, जलवायु रोग, अत्यधिक गरमी के रोग, कुपोषण, और अन्य स्वास्थ्य प्रभाव हो सकते हैं। पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करने से हम मानव स्वास्थ्य की रक्षा करते हैं, और पर्यावरणीय रूप से संबंधित बीमारियों के बोझ को कम करते हैं।

3.सामाजिक-आर्थिक स्थिरता: पर्यावरणीय चुनौतियाँ खाद्य और पानी की आपूर्ति को व्यवस्थित करके, संसाधन संघर्षों को बढ़ाकर, जनसंख्या को विस्थापित करके, और असमानताओं को बढ़ाकर सामाजिक-आर्थिक स्थिरता को खतरे में डाल सकती है। इन चुनौतियों का समाधान स्थायी विकास को प्रोत्साहित करता है, पर्यावरणीय झटकों के प्रति प्रतिकूलता को बढ़ाता है, और समावेशी और समान आर्थिक वृद्धि को बढ़ावा देता है।

समुदाय विज्ञान: समुदाय विज्ञान विस्तार, जिसे समुदाय आधारित सहभागी अनुसंधान (सीबीपीआर) या समुदाय विज्ञान के नाम से भी जाना जाता है, वह वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए एक दृष्टिकोण है जो सहयोग, साझेदारी, और स्थानीय समुदायों के साथ लगाव पर जोर देता है। इसमें वैज्ञानिक ज्ञान, अनुसंधान विधियों, और विशेषज्ञता को समुदाय के सदस्यों के अनुभवात्मक ज्ञान, आवश्यकताओं, और प्राथमिकताओं के साथ मिलाया जाता है।

समुदाय विज्ञान विस्तार के सिद्धांत निम्नलिखित हैं

4.सहयोग: समुदाय विज्ञान विस्तार अनुसंधानकर्ताओं, विस्तार पेशेवरों, समुदाय संगठनों, और निवासियों के बीच सहयोगी साझेदारी पर आधारित होता है। ये साझेदारियाँ संबंध-सम्मान, साझा निर्णय लेने, और अनुसंधान प्रक्रिया के सभी चरणों में न्यायसंगत भागीदारी की विशेषता से चिह्नित होती हैं।

2.सहभागी दृष्टिकोण: समुदाय विज्ञान विस्तार सक्रिय रूप से समुदाय के सदस्यों को अनुसंधान प्रक्रिया में शामिल करता है, शुरुआती अनुसंधान प्रश्नों की पहचान और अध्ययनों की योजना बनाने से लेकर डेटा कलेक्शन, परिणामों का विश्लेषण, और फिर निष्कर्षों की व्याख्या तक। यह सहभागी दृष्टिकोण सुनिश्चित करता है कि अनुसंधान समुदाय के लिए प्रासंगिक, प्रतिक्रियाशील, और अर्थपूर्ण है।

3.शक्ति-प्रदान: समुदाय विज्ञान विस्तार समुदायों को अनुसंधान प्रक्रिया और इसके परिणामों का स्वामित्व लेने का साधन बनाता है। वैज्ञानिक अनुसंधान, डेटा संग्रह, और निर्णय लेने में शामिल होकर, समुदाय के सदस्य कौशल, ज्ञान, और आत्मविश्वास को विकसित करते हैं, ताकि वे परिवर्तन के लिए वकालत कर सकें और अपने जीवन को प्रभावित करने वाले पर्यावरणीय मुद्दों का सामना कर सकें।

4.क्षमता निर्माण: समुदाय विज्ञान विस्तार विज्ञानिक अनुसंधान और डेटा संग्रह में समुदायों की क्षमता को स्थायी रूप से बनाए रखने पर ध्यान केंद्रित करता है। इसमें समुदाय के सदस्यों को अनुसंधान कौशल, गंभीर विचार, और समस्याओं का समाधान करने की क्षमता विकसित करने के लिए प्रशिक्षण, तकनीकी सहायता, और संसाधन प्रदान करना शामिल है।

समुदाय विज्ञान विस्तार के माध्यम से सशक्तिकरण: समुदाय विज्ञान विस्तार समुदायों को कई तरीकों से वातावरण संबंधी मुद्दों पर वैज्ञानिक अनुसंधान, डेटा संग्रह, और निर्णय लेने की प्रक्रिया में संलग्न होने की शक्ति प्रदान करता है-

1.संसाधनों का पहुंच: समुदाय विज्ञान विस्तार समुदायों को वैज्ञानिक विशेषज्ञता, अनुसंधान उपकरण, और वित्त प्रावधानों तक पहुंच प्रदान करता है जो उनके लिए अन्यथा उपलब्ध नहीं हो सकते। यह समुदायों को अपने समुदाय पर प्रभाव डालने वाले वातावरण संबंधी मुद्दों पर अनुसंधान करने और डेटा संग्रह करने की संभावनाएँ प्रदान करता है।

2.ज्ञान साझा करना: समुदाय विज्ञान विस्तार अनुसंधानकर्ताओं और समुदाय के सदस्यों के बीच ज्ञान और सूचना के आदान-प्रदान को सुगम बनाता है। अनुसंधानकर्ता वैज्ञानिक ज्ञान और विधियों को योगदान देते हैं, जबकि समुदाय के सदस्य स्थानीय ज्ञान, अनुभव, और वातावरणीय चुनौतियों और समाधानों के बारे में अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं।

3.सहभागी अनुसंधान: समुदाय विज्ञान विस्तार समुदाय के सदस्यों को अनुसंधान प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार बनाता है। समुदाय के सदस्य अनुसंधान प्रश्नों की पहचान करने, अध्ययनों की योजना बनाने, डेटा एकत्र करने, और परिणामों का विश्लेषण करने में मदद करते हैं, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि अनुसंधान समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करता है, सांस्कृतिक रूप से उपयुक्त है, और उत्तरदायी है।

4.निर्णय लेने का प्रभाव: समुदाय विज्ञान विस्तार समुदाय को वातावरणीय मुद्दों से संबंधित निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में शक्तिप्रदान करता है। वैज्ञानिक प्रमाण और डेटा उत्पन्न करके, समुदाय के सदस्य नीति परिवर्तन, संसाधन आवंटन, और समुदाय इंटरवेंशन के लिए आवाज़ उठा सकते हैं, जो वातावरणीय चुनौतियों का सामना करते हैं और संवेदनशील विकास को प्रोत्साहित करते हैं।

पर्यावरण संरक्षण में समुदाय संलग्नता का महत्व समुदाय संलग्नता पर्यावरण संरक्षण के प्रयासों में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो स्थानीय ज्ञान, संसाधनों, और प्रबंधन का उपयोग करके कई लाभ प्रदान करती है। संरक्षण पहल के लिए समुदायों को शामिल करके, हम उनके अनूठे अनुभवों का लाभ उठा सकते हैं, प्राकृतिक संसाधनों की प्रबंधन को बढ़ावा दे सकते हैं, और संरक्षण प्रयासों की प्रभावकारिता और स्थायित्व को बढ़ा सकते हैं।

समुदाय संलग्नता की भूमिका

1.स्थानीय ज्ञान: समुदायों के पास अपने पर्यावरण के बारे में मूल्यवान पारंपरिक ज्ञान होता है, जिसमें स्थानीय पारिस्थितिकीय प्रणालियाँ, वन्यजीव निवास स्थल, और मौसम के पैटर्न शामिल होते हैं। इस ज्ञान को पीढ़ियों में बांटा जाता है, जो जैव विविधता, संसाधन प्रबंधन व्यवहार, और पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रभाव के बारे में अमूल्य ज्ञान प्रदान करता है। समुदायों को संलग्न करने से हम इस आदिवासी ज्ञान को संरक्षण रणनीतियों में शामिल कर सकते हैं, जिससे उनकी प्रासंगिकता और प्रभावकारिता में वृद्धि होती है।

2.संसाधन और विशेषज्ञता: समुदायों के पास अक्सर संरक्षण प्रयासों के लिए जरूरी भूमि, पानी, और वनों जैसे संसाधन होते हैं। समुदायों को साथी के रूप में शामिल करके, हम इन संसाधनों का उपयोग संरक्षण गतिविधियों के लिए कर सकते हैं, जैसे कि पर्यावासी स्थल की पुनर्स्थापना, वन्यजीवों का मॉनिटरिंग, और पर्यावरण संसाधनों का विवेकपूर्ण प्रबंधन। इसके अलावा, समुदायों के पास स्थानीय विशेषज्ञ भी हो सकते हैं, जैसे कि पारंपरिक चिकित्सक या शिकारी, जिनके कौशल और विशेषज्ञता संरक्षण अनुसंधान और मॉनिटरिंग में योगदान कर सकते हैं।

3.संरक्षण और स्वामित्व: जब समुदाय संरक्षण प्रयासों में सक्रिय रूप से शामिल होते हैं, तो वे अपने प्राकृतिक पर्यावरण पर स्वामित्व और पर्यावरण संरक्षण का दायित्व विकसित करते हैं। इस जिम्मेदारी का भाव समुदाय के सदस्यों को स्थानीय पारिस्थितिकी, वन्यजीव, और जैव-विविधता को संरक्षित और बचाया जाने में सक्रिय भूमिका निभाने के लिए प्रेरित करता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

सब्जी वर्गीय फसलों में संरक्षित खेती की भूमिका

अंशुमान मिश्रा आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

आकांक्षा सैम हिगिनबॉटम यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर, टेक्नोलॉजी एंड साइंस, प्रयागराज

भूमिका: भारत भौगोलिक विभिन्नताओं से परिपूर्ण एक कृषि आधारित अर्थव्यवस्था वाला देश है। संरक्षित खेती नए युग की ऐसी नवीनतम् कृषि प्रणाली है, जिसके माध्यम से किसान फसलों की मांग के अनुसार वातावरण को नियंत्रित करते हुए मंहगी फसलों के लिए ऐसा वातावरण तैयार करते हैं, जहां पर धूप, छांव, गर्मी व ठंडक का अधिक प्रभाव न हो और फसलों का प्राकृतिक प्रकोपों व अन्य कारकों से बचाव किया जाता है।

क्या है संरक्षित खेती: भारत में संरक्षित खेती का आगमन वर्ष 1980 के दौरान हुआ था। आज वर्तमान में इस तकनीक के प्रचार-प्रसार में चीन के बाद दूसरा स्थान अपने ही देश का है। भारत में संरक्षित कृषि का क्षेत्रफल वर्तमान में लगभग 2.51 लाख हेक्टेयर हो चुका है। इसमें महाराष्ट्र, कर्नाटक, गुजरात, राजस्थान, हरियाणा, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखंड आगे हैं। संरक्षित खेती आधुनिक तकनीक की वह संरचना है, जिसमें एक नियंत्रित वातावरण में फसलों की खेती की जाती है। इसमें कीट अवरोधी नेट हाउस, ग्रीन हाउस, नवीनतम तकनीक से लैस पॉलीहाउस, प्लास्टिक लो-टनल, प्लास्टिक हाई-टनल, प्लास्टिक मल्चिंग और ड्रिप सिंचाई का इस्तेमाल होता है। जिस तरह से जलवायु परिवर्तन से देश की कृषि प्रभावित हो रही है, ऐसे समय जरूरत है कृषि में नई तकनीक के इस्तेमाल करना, जिससे फसल उत्पादन पर कोई असर न पड़े और अच्छा उत्पादन मिलता रहे।

संरक्षित खेती की परिकल्पना: भारत में, संरक्षित खेती प्रौद्योगिकी वाणिज्यिक उत्पादन के लिए लगभग तीन दशक ही पुरानी है, जबकि विकसित देशों जैसे जापान, रुस, ब्रिटेन, चीन, हॉलैंड और अन्य देशों में दो सदी पुरानी है। इजराइल एक ऐसा देश है जहां किसानों ने अच्छी गुणवत्ता वाले फल, फूल और सब्जियों को कम पानी वाले रेगिस्तानी क्षेत्रों में उगाकर इस तकनीक से अच्छे उत्पादन के साथ बढ़िया मुनाफा भी कमा रहे हैं। हॉलैंड ने पॉलीहाउस की उन्नत तकनीक विकसित करके दुनिया के फूल निर्यात जगत में 70% का योगदान दिया है।

भारत में संरक्षित खेती की वर्तमान स्थिति: भारत सरकार राज्य और केंद्रीय स्तर पर ग्रीनहाउस खेती की संरक्षित खेती से संबंधित विभिन्न योजनाएं पेश करती है। रिपोर्ट के अनुसार , 20वीं सदी के अंत तक भारत में संरक्षित खेती का क्षेत्रफल लगभग 110 हेक्टेयर और दुनिया भर में 275,000 हेक्टेयर से अधिक था। समय के साथ यह क्षेत्र 10% बढ़ गया। जिन राज्यों ने 2007-2012 तक संरक्षित खेती के तहत क्षेत्र का लगातार विस्तार किया है वे हैं गुजरात, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु, पंजाब, हरियाणा और महाराष्ट्र। महाराष्ट्र और गुजरात में 2025 तक संरक्षित खेती के तहत क्रमशः 5,730.23 हेक्टेयर और 4,720.72 हेक्टेयर का विस्तृत क्षेत्र था। गुजरात में, वागड़ एग्रो सर्विसेज नाम की सबसे अच्छी अग्रणी कंपनियों में से एक है जो उच्च तकनीक वाली संरक्षित कृषि सेवाएं और अन्य संबंधित खेती प्रदान करती है।

संरक्षित खेती की ओर सरकार की पहल: संरक्षित संरचनाओं की प्रारम्भिक लागत अधिक होती है, लेकिन फसलों के अच्छे उत्पादन के साथ 3-5 वर्षों में इसकी भरपाई की जाती है। ऑफ-सीजन सब्जी, फल व फूलों की खेती और नर्सरी को इससे अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए संरक्षित संरचनाओं के अन्तर्गत उगाया जाता है। वित्तीय सहायता या सब्सिडी भी सरकार द्वारा प्रदान की जाती है। इन संरचनाओं का संचालन कुशलता से किया जाता है, क्योंकि संरक्षित संरचनाओं में आधुनिक विधियों/तकनीकों का उपयोग किया गया था। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न उपक्रमों के अंर्तगत संरक्षित खेती की संरचनाओं पर लगभग 50% तक की सरकारी छूट हर प्रदेश में दी जाती है। इसके साथ-साथ किसी-किसी प्रदेश द्वारा 25-30 प्रतिशत की अतिरिक्त सरकारी छूट भी दी जाती है। इन दोनों सरकारी अनुदानों को मिलाकर लगभग 75-80% तक की छूट किसानों को प्राप्त हो जाती है।

संरक्षित खेती के फायदे

* पर्यावरण नियंत्रित संसाधनों के अंर्तगत की जाने वाली संरक्षित खेती से फसल की गुणवत्ता और उत्पादकता में लगभग 5 से 12 प्रतिशत की वृद्धि होती है।
* इन तकनीकों के तहत उपरोक्त फसलों की खेती वर्षभर की जा सकती है।
* फल, फूल व सब्जियों का इस तकनीक के माध्यम से आफ सीजन उत्पादन करके अतिरिक्त आय अर्जित की जा सकती है।
* रोग प्रतिरोधिता व अनुवांशिक रुप से उत्कृष्ट प्रत्यारोपण से उत्पादन निरन्तर लिया जा सकता है।
* यह तकनीक बेरोजगार ग्रामीण महिलाओं और नवयुवकों के लिए स्वरोजगार के अच्छे अवसर प्रदान करती है।
* संरक्षित संसाधनों के तहत फसलों हेतु पानी की आवश्यकता को सीमित और नियंत्रित किया जा सकता है।
* इस तकनीक से बहुत अच्छी गुणवत्ता वाली फसलों को आसानी से उगाया जा सकता है, जिनकी बाजार में मांग एवं कीमत दोनों ही अधिक होती हैं।

संरक्षित खेती के नुकसान

* सभी प्रकार की फसलें उगाना संभव नहीं है।
* पानी का वाष्पीकरण कम होने से जल का संरक्षण होगा।
* पौधों में होने वाले नेमाटोड नामक रोग के कारण पौधों तक पहुँचने वाली सूर्य की रोशनी की मात्रा कम हो जाएगी।
* उच्च गुणवत्ता और मात्रा के कारण उपज को बेचने हेतु उच्च मांग (निकटवर्ती बाजार) की आवश्यकता होती है।

निष्कर्ष: वर्तमान समय में घटती हुई कृषि भूमि, इससे होने वाली कृषि आय में कमी तथा बढ़ती हुई मंहगाई के कारण किसानों की आत्मनिर्भर भारत के सपने को साकार करने में जलवायु परिवर्तन बहुत बड़ी बाधा बनता जा रहा है। संरक्षित खेती से जलवायु परिवर्तन के कुप्रभावों को कम किया जा सकता है। इसमें गुणवत्तायुक्त फसलों, फलों, फूलों व पौधों का उत्पादन वर्षभर लिया जा सकता है। इस तकनीक से किसानों की आय बढ़ाई जा सकती है।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

किसान भाई उत्तम एवं लाभप्रद फसलों का कैसे करें चयन

सौरभ भारती (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

सिद्रा किदवई शोध छात्रा , सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

शिवम् कौशिक शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

प्रवीण कुमार शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

हमारे किसान भाई फसलों के चयन को लेकर काफी दुविधा में रहते हैं जिससे यदि गलत फसलों का चयन हो जाए तो किसान भाई को निम्न कोटि कि उत्पादकता एवं आय प्राप्त होती है। उत्पादकता और लाभप्रदता में वृद्धि निम्नलिखित के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है: • उपयुक्त कृषि प्रणाली को अपनाना • स्थान विशिष्ट प्रौद्योगिकी को अपनाना • बाजार की मांग आधारित उत्पादन करना • कम लागत अथवा बिना लागत वाली तकनीकों को अपनाना • वैज्ञानिक प्रौद्योगिकियों के साथ व्यावहारिक ज्ञान का सम्मिश्रण करना • सभी प्राकृतिक संसाधनों का कुशल उपयोग करना • समय विशिष्ट प्रबंधन पद्धतियों को अपनाना • गुणवत्ता आधारित उत्पादन को प्राथमिकता देना

फसल प्रणाली एवं फसलों के चयन पर कैसे करे निर्णय

किसानों को फसल अथवा फसल पैटर्न चुनने के लिए निर्णय लेते समय नीचे दिए गए सभी प्रश्नों के उत्तर देने की आवश्यकता है। इस निर्णय लेने की प्रक्रिया के दौरान, किसान अपने मौजूदा संसाधनों और अन्य स्थितियों के साथ प्रस्तावित फसल/फसल प्रणालियों की उपयुक्तता की जांच करते हैं। इस प्रकार, वे किसी फसल/फसल प्रणाली को चुनने या अस्वीकार करने को उचित ठहराते हैं।

जलवायु कारक-क्या फसलध्फसल प्रणाली स्थानीय मौसम मापदंडों जैसे तापमान, वर्षा, धूप के घंटे, सापेक्ष आर्द्रता, हवा का वेग, हवा की दिशा, मौसम और कृषि-पारिस्थितिकी स्थितियों के लिए उपयुक्त है?

मिट्टी की स्थिति - क्या फसल/फसल प्रणाली स्थानीय मिट्टी के प्रकार, पीएच और मिट्टी की उर्वरता के लिए उपयुक्त है?

पानी: • क्या पानी की गुणवत्ता उपयुक्त है? • क्या पानी उठाने के लिए बिजली उपलब्ध है? • क्या आपके पास पंप सेट, सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियाँ हैं? • क्या आपके पास तालाब, कुएँ, बाँध आदि जैसे पर्याप्त जल स्रोत हैं? • क्या आपको पर्याप्त वर्षा प्राप्त होती है? • क्या वर्षा का वितरण चिन्हित फसलों को उगाने के लिए उपयुक्त है?

फसल प्रणाली विकल्प: • क्या आपके पास अंतर-फसल, मिश्रित फसल, बहुमंजिला फसल, रिले फसल, फसल चक्र आदि अपनाने का अवसर है? • क्या आपको फसल प्रणाली प्रबंधन का ज्ञान है?

किसानों के अतीत और वर्तमान के अनुभव: • आप जिस फसल/फसल प्रणाली को चुनने की योजना बना रहे हैं, उसके संबंध में आपके पिछले अनुभव क्या थे? • प्रस्तावित फसल/फसल प्रणाली पर आपके दोस्तों, रिश्तेदारों और पड़ोसियों की क्या राय है?

अपेक्षित लाभ और जोखिम: • आप प्रस्तावित फसल/फसल प्रणाली से कितने लाभ की उम्मीद कर रहे हैं? • क्या यह मुनाफा मौजूदा फसल/फसल प्रणाली से बेहतर है? • प्रस्तावित फसल/फसल प्रणाली में आप किन जोखिमों की आशंका जता रहे हैं? • क्या आपके पास समाधान है?

भूमि जोत सहित किसानों की आर्थिक स्थितियां

• क्या प्रस्तावित फसल/फसल प्रणाली आपकी भूमि जोत के आकार के लिए उपयुक्त है? • क्या आपके वित्तीय संसाधन प्रस्तावित फसल/फसल प्रणाली के प्रबंधन के लिए पर्याप्त हैं? • यदि नहीं, तो क्या आप वैकल्पिक मार्गों से वित्तीय संसाधन जुटा सकते हैं?

श्रम उपलब्धता और मशीनीकरण क्षमता: • क्या आप अपने पारिवारिक श्रम के माध्यम से प्रस्तावित फसल/फसल प्रणाली का प्रबंधन कर सकते हैं? • यदि नहीं, तो क्या आपके पास इसे प्रबंधित करने के लिए पर्याप्त श्रमिक हैं? • क्या मशीनरी उपलब्ध है? खरीदने की सामर्थ्य? प्रभावी लागत? • क्या परिवाराध्किराए पर लिया गया श्रमिक मशीनरी को संभालने के लिए सुसज्जित है?

प्रौद्योगिकी की उपलब्धता और उपयुक्तता: • क्या प्रस्तावित फसल/फसल प्रणाली उपयुक्त है? • क्या प्रौद्योगिकियां आर्थिक रूप से व्यवहार्य और तकनीकी रूप से व्यवहार्य हैं? • क्या प्रौद्योगिकियाँ जटिल या उपयोगकर्ता के अनुकूल हैं?

बाजार की मांग और बाजार के बुनियादी ढांचे की उपलब्धता: • क्या प्रस्तावित फसलें बाजार की मांग के अनुरूप हैं? • क्या आपके पास अपनी उपज बेचने हेतु बाजार का बुनियादी ढांचा है? • क्या आपके पास बिचौलियों को कम करने के लिए संगठित विपणन प्रणाली है?

नीतियां और योजनाएं • क्या सरकारी नीतियां आपकी फसलों के पक्ष में हैं? • क्या कोई मौजूदा योजना है जो आपकी फसल को प्रोत्साहन देती है? • क्या आप उन लाभों का लाभ उठाने के पात्र हैं?

सार्वजनिक और निजी विस्तार प्रभाव: • क्या आपके पास सलाह प्राप्त करने के लिए कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एजेंसी (एटीएमए)/विभागीय विस्तार पदाधिकारियों तक पहुंच है? • क्या आप कृषि पत्रिकाओं की सदस्यता लेते हैं? • क्या आप समाचार पत्रों में कृषि संबंधी लेख पढ़ते हैं? • क्या आपको इनपुट डीलरों, कृषि व्यवसाय कंपनियों, गैर सरकारी संगठनों, कृषि क्लीनिकों और कृषि व्यवसाय केंद्रों

से कोई सहायता मिलती है?

कृषि ऋण सहित आवश्यक कृषि आदानों की उपलब्धता: • क्या आपको समय पर बीज, उर्वरक, कीटनाशक और उपकरण जैसे पर्याप्त कृषि इनपुट मिलते हैं? • क्या आपके पास संस्थागत ऋण तक पहुंच है?

फसल कटाई के बाद भंडारण और प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियां • क्या आप अपनी फसल के मूल्यवर्धन की तकनीक जानते हैं? • क्या आपके पास अपनी भंडारण सुविधा है? • यदि नहीं, तो क्या आपके पास ऐसी सुविधा तक पहुंच है? • क्या आपके पास प्राथमिक प्रसंस्करण सुविधा तक पहुंच है?

इन सभी प्रशनो को समझदारी पूर्वक ध्यान में रखते हुए किसान भाई अपनी फसल का उत्तम चयन कर सकते है और अपने खेतों से अधिक उत्पादन, उत्पादकता और अधिक शुद्ध लाभ ले सकते हैंज

स्रोत: बुनियादी कृषि पर कृषक पुस्तिका

कुंज एजेंसीज

अपने भाई चप्पा सेठ की दुकान

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती है

प्रो. कार्तिक गुप्ता 9589545404
प्रो. हार्दिक गुप्ता 9644689094

भितरवार रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

10/2023-24

बदलते परिवेश में जलवायु स्मार्ट कृषि (सीएसए) क्यों है अधिक लाभकारी

शिवम् कौशिक शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

प्रवीण कुमार शोध छात्र , सस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

सौरभ भारती शोध छात्र , सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

सिद्रा किदवई शोध छात्रा, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज , अयोध्या

एक ऐसे युग में जहां जलवायु परिवर्तन कृषि के लिए अभूतपूर्व चुनौतियां पेश करता है, नवीन और टिकाऊ कृषि प्रथाओं की आवश्यकता कभी भी अधिक जरूरी नहीं रही है। जलवायु-स्मार्ट कृषि (सीएसए) आशा की किरण के रूप में उभरती है, जो कृषि, खाद्य सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन के बीच जटिल परस्पर क्रिया को संबोधित करने के लिए एक रणनीतिक दृष्टिकोण प्रदान करती है। किसानों के रूप में, आने वाली पीढ़ियों के लिए हमारे खेतों की लचीलापन और स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए सीएसए के सिद्धांतों और लाभों को समझना अनिवार्य है।

जलवायु-स्मार्ट कृषि का अर्थ : जलवायु-स्मार्ट कृषि (सीएसए) कृषि उत्पादन प्रणालियों और खाद्य मूल्य श्रृंखलाओं को बदलने और पुनर्निर्देशित करने का एक दृष्टिकोण है ताकि वे सतत विकास का समर्थन कर सकें और जलवायु परिवर्तन के तहत खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित कर सकें।

सीएसए की आवश्यकता : जलवायु-स्मार्ट कृषि में एक समग्र दृष्टिकोण शामिल है जो तीन प्रमुख उद्देश्यों को एकीकृत करता है:

उत्पादकता और आय बढ़ाना: सीएसए का उद्देश्य कृषि उत्पादकता और आय में वृद्धि करना, खाद्य सुरक्षा और गरीबी उन्मूलन सुनिश्चित करना है, विशेष रूप से जलवायु परिवर्तनशीलता और परिवर्तन की स्थिति में।

जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीलापन अपनाना और निर्माण करना: इसमें उन प्रथाओं को लागू करना शामिल है जो उत्पादकता बनाए रखते हुए और भेद्यता को कम करते हुए खेतों को सूखे, बाढ़ और अत्यधिक तापमान जैसी बदलती जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल बनाने में सक्षम बनाती हैं।

ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करना: सीएसए कृषि से ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने, जलवायु परिवर्तन से निपटने के वैश्विक प्रयासों में योगदान देने और कृषि एवं पर्यावरण पर इसके प्रतिकूल प्रभावों को कम करने का प्रयास करता है।

जलवायु-स्मार्ट कृषि दृष्टिकोण व्यापार-संबंधों को कम करने और फसल और पशुधन प्रणाली, वानिकी, और मत्स्य पालन और जलीय कृषि को अधिक उत्पादक और अधिक टिकाऊ बनाने के लिए तालमेल को बढ़ावा देने का प्रयास करता है।

जलवायु-स्मार्ट कृषि कोई नई कृषि प्रणाली नहीं है, न ही प्रथाओं का एक सेट है। यह विकास पथ तैयार करने के लिए एक अभिनव दृष्टिकोण है जो कृषि क्षेत्रों को अधिक उत्पादक और टिकाऊ बना सकता है और जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और शमन में योगदान करने में बेहतर सक्षम बना सकता है।

जलवायु-स्मार्ट कृषि के प्रमुख सिद्धांत:

सतत् गहनता: यह सिद्धांत नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभावों को कम करते हुए कृषि उत्पादकता बढ़ाने की वकालत करता है। इसमें संरक्षण कृषि, एकीकृत कीट प्रबंधन और पानी और उर्वरकों जैसे आदानों के कुशल उपयोग जैसी प्रथाएं शामिल हैं।

जलवायु जोखिम प्रबंधन: सीएसए किसानों को फसल विविधीकरण, कृषि वानिकी और बेहतर जल प्रबंधन तकनीकों जैसी प्रथाओं के माध्यम से जलवायु संबंधी जोखिमों का आकलन और प्रबंधन करने हेतु प्रोत्साहित करता है।

बेहतर लचीलापन: लचीलापन बनाने में लचीली फसल किस्मों को अपनाना, कृषि संबंधी दृष्टिकोणों को लागू करना और जलवायु संबंधी झटकों का सामना करने हेतु बुनियादी ढाँचे में निवेश करना शामिल है।

कार्बन पृथक्करण: कृषि वानिकी, कवर फसल और मृदा संरक्षण जैसी प्रथाएं वातावरण से कार्बन को अलग करने में मदद करती हैं, मिट्टी के स्वास्थ्य और उर्वरता में सुधार करते हुए जलवायु परिवर्तन को कम करती हैं।

समावेशी और भागीदारी दृष्टिकोण: सीएसए संदर्भ विशिष्ट और सामाजिक रूप से न्यायसंगत समाधानों को अपनाने को सुनिश्चित करने के लिये निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में किसानों, शोधकर्ताओं, नीति निर्माताओं और अन्य हितधारकों को शामिल करने के महत्त्व पर जोर देता है।

जलवायु-स्मार्ट कृषि के लाभ

कृषि उत्पादकता में वृद्धि: सीएसए प्रथाओं को अपनाकर किसान फसल की पैदावार बढ़ा सकते हैं, पशुधन उत्पादकता में सुधार कर सकते हैं और आय स्रोतों में विविधता ला सकते हैं, जिससे अंततः आजीविका और खाद्य सुरक्षा में सुधार हो सकता है।

जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रति लचीलापन: सीएसए खेतों को जलवायु संबंधी झटकों का सामना करने और उनसे उबरने के लिये लचीलापन प्रदान करता है, भेद्यता को कम करता है और फसल विफलताओं एवं आय के नुकसान से सुरक्षा करता है।

पर्यावरणीय स्थिरता: स्थायी भूमि प्रबंधन प्रथाओं को बढ़ावा देकर, सीएसए प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, जैव विविधता की रक्षा करने और पर्यावरणीय क्षरण को कम करने, पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य और स्थिरता में योगदान करने में मदद करता है।

जलवायु परिवर्तन शमन में योगदान: ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और कार्बन जब्ती को बढ़ाने वाली प्रथाओं के माध्यम से, सीएसए जलवायु परिवर्तन को कम करने और कम कार्बन कृषि क्षेत्र को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

भविष्य के जलवायु परिदृश्यों के अनुकूलन: बदलती जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल सक्रिय रूप से अनुकूलन करके, किसान अपने खेतों को भविष्य में रूफ कर सकते हैं और बदलती जलवायु में निरंतर उत्पादकता और लाभप्रदता सुनिश्चित कर सकते हैं।

जलवायु-स्मार्ट कृषि को लागू करना: जलवायु-स्मार्ट कृषि खेतों, चरागाहों, जंगलों और महासागरों और मीठे पानी के पारिस्थितिक तंत्र में गतिविधियों से संबंधित है। इसमें प्रौद्योगिकियों और प्रथाओं का मूल्यांकन और अनुप्रयोग, एक सहायक नीति और संस्थागत ढांचे का निर्माण और निवेश रणनीतियों का निर्माण शामिल है।

जलवायु-स्मार्ट कृषि प्रणालियों में विभिन्न तत्व शामिल हैं जैसे:

- अनुकूलन और शमन की प्राथमिकताओं के साथ निकट अवधि की खाद्य सुरक्षा और आजीविका की जरूरतों को संतुलित करने के लिए भूमि, फसल, पशुधन, जलीय कृषि और मत्स्य पालन का प्रबंधनय
- खाद्य सुरक्षा, कृषि विकास, अनुकूलन और शमन के लिए महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के संरक्षण के लिए पारिस्थितिकी तंत्र और **परिदृश्य प्रबंधनय** • किसानों और भूमि प्रबंधकों के लिए सेवाएँ जो उन्हें जलवायु परिवर्तन के जोखिमों और प्रभावों को बेहतर ढंग से प्रबंधित करने और शमन कार्रवाई करने में सक्षम बना सकती हैं और मांग-पक्ष उपायों और मूल्य श्रृंखला हस्तक्षेपों सहित व्यापक खाद्य प्रणाली में परिवर्तन जो जलवायु-स्मार्ट कृषि के लाभों को बढ़ाते हैं।

अंत में, जलवायु-स्मार्ट कृषि (सीएसए) जलवायु परिवर्तन की स्थिति में लचीला, टिकाऊ और संपन्न कृषक समुदायों के निर्माण की दिशा में एक आशाजनक मार्ग प्रदान करती है। सीएसए को अपनाकर, हम न केवल अपनी आजीविका को सुरक्षित कर सकते हैं बल्कि जलवायु परिवर्तन से निपटने और सभी हेतु खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के वैश्विक प्रयासों में भी योगदान दे सकते हैं। आइए हाथ मिलाएं और कृषि के लिए जलवायु-स्मार्ट भविष्य की दिशा में इस यात्रा को शुरू करें।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

रंगीन कपास: कपड़ा उद्योग का भविष्य

साक्षी वस्त्र एवं परिधान विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

परिचय

कपास को 'व्हाइट गोल्ड' के नाम से जाना जाता है जो मुख्य रूप से फाइबर और कपास के बीज के लिए उगाया जाता है। इसका उपयोग परिधानों और घरेलू वस्त्रों की विस्तृत श्रृंखला के लिए किया गया है। कपास में कई अंतर्निहित गुण होते हैं जैसे कोमलता, सांस लेने की क्षमता, नमी को अवशोषित करना, ताकत, ड्रैपेबिलिटी और गर्मी प्रतिरोध, उच्च फाइबर ताकत, गैर-एलर्जी और गैर-उत्तेजक। यह रंगने योग्य, संभालने और सिलने में भी आसान है। पारंपरिक सफेद कपास दुनिया में सबसे अधिक मांग वाला फाइबर है और पचपन देश सकल घरेलू उत्पाद के एक महत्वपूर्ण प्रतिशत के लिए कपास पर निर्भर हैं। लेकिन सफेद कपास का उत्पादन तेजी से मिट्टी की उर्वरता में कमी, लवणीकरण, कीटनाशकों के एक पाउंड के नुकसान जैसे गंभीर नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभावों से जुड़ा हुआ है। हाल के वर्षों में पर्यावरण के प्रति चिंता ने लोगों के मन में गहरी जड़ें जमा ली हैं। पारिस्थितिकी तंत्र और मानव स्वास्थ्य हेतु हानिकारक सामग्रियों और उत्पादों को तेजी से हतोत्साहित किया जा रहा है। आजकल बीटी कॉटन भारत और दुनिया के अन्य हिस्सों में प्रतिरोध में कमी के कारण विस्फोट चक्र की लहरें उठा रहा है, इसके पुराने समय के चचेरे भाइयों में से एक चुपचाप वापसी कर रहा है। यह प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास है हाँ; प्राकृतिक रंगों से युक्त कपास।

पर्यावरण के प्रति जागरूक समुदाय विशेष रूप से हानिकारक रंगों और कीटनाशकों से रहित सूती वस्त्रों की मांग कर रहे हैं। इस संदर्भ में, हानिकारक और प्रदूषणकारी रसायनों का उपयोग करके रंगाई के बिना जैविक कपास और प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास में रुचि फिर से बढ़ रही है। प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास रंगने की प्रक्रिया को पूरी तरह से समाप्त कर देता है क्योंकि इस कपास में फाइबर के लुमेन में एक रंगीन जीन मौजूद होता है जो कपास के बढ़ने और परिपक्व होने पर उसे प्राकृतिक रंग प्रदान करता है। जैविक खेती के तरीकों से उगाया गया प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास स्वच्छ पर्यावरण अनुकूल वातावरण के लिए सबसे उपयुक्त विकल्प है। रंगीन कपास 2500 ईसा पूर्व तक मानव जाति द्वारा उगाई और उपयोग की जाती थी और यह उत्तरी पेरू तट, दक्षिण अमेरिका में हुआका प्रीटा में खुदाई से स्पष्ट है। इन स्थलों से प्राप्त रंगीन लिंट में चॉकलेट, नीला, बैंगनी, हरा, भूरा, महोगनी लाल, लाल और क्रीमी-सफेद जैसे रंग दिखाई देते हैं जो जीनस गॉसिपियम की चार प्रजातियों में पाए जाते हैं। टेट्राप्लोइड प्रजाति जी. बार्बडेंस और जी. हिर्सुटम की खेती दक्षिण और मध्य अमेरिका में 2300 ईसा पूर्व से की जा रही थी। सफेद कपास की तुलना में, प्राकृतिक रूप से रंगीन लिंट छोटे, मोटे और कमजोर थे। वे केवल हाथ से कताई के लिए उत्तरदायी थे। हालाँकि, औद्योगिक क्रांति के बाद पावरलूम और जिनिंग मशीनों के आगमन के साथ, दृश्य बदल गया। बताया जाता है कि द्वितीय विश्व युद्ध में सिंथेटिक रंगों की कमी के कारण तत्कालीन सोवियत संघ सैनिकों की वर्दी बनाने के लिए बड़ी मात्रा में रंगीन कपास की खेती की जाती थी।

हालाँकि, बहुमुखी जींस का रंग नीला, कपास प्रजनकों से दूर है। अब जेनेटिक इंजीनियरिंग ने कदम रख दिया है। विस्कॉन्सिन में दो कंपनियां आर्गसेटस और उत्तरी कैलिफोर्निया में कैल्गीन उन जीनों को सफेद कपास में डालने की योजना बना रही हैं जो नील के पौधे में नीले रंग के उत्पादन के लिए जिम्मेदार हैं। वे एक ही बार में मशीन-अनुकूल नीली कपास का उत्पादन करने की उम्मीद करते हैं। रंगीन कपास में कई कीट और रोग-प्रतिरोधी गुण होते हैं और ये सूखा और नमक प्रतिरोधी होते हैं। प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास में मोम की मात्रा भी फायदेमंद हो सकती है क्योंकि यह रेशों से कचरा आसानी से हटाने में सहायता करती है। हाल के वर्षों में जैविक कपास और प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास में रुचि फिर से बढ़ी है क्योंकि इसकी खेती और प्रसंस्करण हानिकारक और प्रदूषणकारी रसायनों से रहित है। इस तथ्य के बावजूद कि रंगीन सूती कपड़े की कुछ सीमाएँ हैं, इसके कई फायदे हैं जो इसके पक्ष में जाते हैं। इन्हें इस प्रकार गिनाया गया है- प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास उगाने वालों को कीटनाशकों की कम आवश्यकता हो सकती है। आनुवंशिकीविद् कपास में रंग के जटिल वंशानुक्रम पैटर्न का अध्ययन कर रहे हैं। लिंट का रंग तीन स्थानों पर स्थित जीनों के एक समूह द्वारा निर्धारित होता है। एलसीआई, एलसी2, और एलसी3। वे सफेद एलील्स पर हावी होते हैं और संशोधक जीन के साथ मिलकर काम करते हैं जो या तो दबाने वाले या तीव्र करने वाले होते हैं। मजबूत दमनकर्ताओं की उपस्थिति में, सफेद लिंट उत्पन्न होता है। अक्सर, लिंट रंग के जीन प्लियोट्रोपिक पाए जाते हैं, यानी, वे एक से अधिक लक्षणों को नियंत्रित करते हैं। आर्थिक और तकनीकी रूप से बेहतर रंगीन कपास के विकास में यह सबसे महत्वपूर्ण समस्या रही है। उदाहरण के लिए, जी. आर्बोरियम और जी. बार्बडेंस में भूरे रंग का जीन लिंट की लंबाई और उसकी सुंदरता को दबा देता है। इसी तरह, जी. हिर्सुटम में हरे और भूरे रंग के लिंट फाइबर के विकास को रोकते हैं। आम तौर पर, सभी रंगीन जीनोटाइप में फाइबर के गुण सफेद किस्म से काफी कम होते हैं। हालाँकि, सभी एसोसिएशन प्रतिकूल नहीं हैं। हिर्सुतम ताशकंद (भूरा) और अरकंसास हरा किस्मों का बीजकोष वजन अधिक होता है। इसके अलावा, रंग विकास कई पर्यावरणीय कारकों, विशेष रूप से सूर्य के प्रकाश, मिट्टी के पोषण और मिट्टी के प्रकार से भी प्रभावित होता है। धारवाड़ के वैज्ञानिक रंग निर्माण के समय और तंत्र का अध्ययन कर रहे हैं। उनके अध्ययन से पता चलता है कि तंतुओं में रंग का विकास बीजकोष बनने के 30 से 40 दिनों के बीच होता है। बीजकोष बनने के 30 दिन तक रेशे सफेद थे। 40 दिन पुराने बीजकोषों में रंगीन रेशे दिखाई दिए। विलायक निष्कर्षण प्रयोगों से पता चला है कि वर्णक फ्लेवोनोइड समूह से संबंधित हो सकता है। जीन क्रिया के बुनियादी पहलू, अन्य विशेषताओं के साथ उनका जुड़ाव और अंतःक्रिया रंग उत्पादन में पर्यावरणीय मापदंडों का गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया जाना चाहिए, तकनीकी कोण से, 'देसी' प्रकार के कुछ रंगीन सूती कपड़े हमारे देश के मूल निवासी हैं। इनमें से कुछ अभी भी आंध्र प्रदेश के येरापट्टी जैसे आंतरिक क्षेत्रों में अलग-अलग इलाकों में उगाए जा रहे हैं और स्थानीय लोगों द्वारा हाथ से कताई और बुनाई हेतु उपयोग किया जाता है। ये किस्में छोटे स्टेपल वाली हैं और मिल प्रसंस्करण के लिए बिल्कुल उपयुक्त नहीं हैं। रंगीन कॉटन के विकास और विपणन में फॉक्स फाइबर इंक. और नेचुरल कॉटन कलर इंक. यूएसए की सुश्री सैली फॉक्स द्वारा हासिल की गई सफलता को देखते हुए, हमारे देश में अच्छी गुणवत्ता वाले रंगीन कपास के विकास हेतु नए सिरे से रुचि पैदा हुई है।

निष्कर्ष

जैसा कि उपरोक्त स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास में रुचि केवल जिज्ञासा नहीं है, बल्कि स्पष्ट रूप से और रचनात्मक रूप से इस भूली हुई विरासत को सामने लाने की दिशा में निर्देशित है और इसका उद्देश्य पर्यावरण के प्रति जागरूक 'हरित-दिमाग वाले' उपभोक्ता को एक विशिष्ट उत्पाद प्रदान करना है। प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास का आंदोलन अभी शुरू हुआ है और चीन के नेतृत्वकर्ता के रूप में गति पकड़ रहा है और उसके बाद भारत सहित अन्य देश भी इसका नेतृत्व कर रहे हैं। वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए नीति निर्माताओं, किसानों और शोधकर्ताओं के सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता होगी। इस संबंध में भारतीय कपास परिषद ने अनुसंधान परियोजनाओं को वित्त पोषित किया है और रंगीन कपास की सुरक्षित, व्यवहार्य और लाभदायक खेती के लिए कुछ नीतियों और विधायी उपायों का भी सुझाव दिया है। डीएनए इंजीनियरिंग और क्लोनिंग तकनीक के अनुप्रयोग से उपलब्ध रंग पैलेट और फाइबर गुणों को बेहतर बनाने में मदद मिलेगी। रेशों के पर्यावरण अनुकूल पहलुओं और गुणों जैसे 'नोफेड', उच्च ज्वलनशीलता आदि के बारे में उपभोक्ता शिक्षा से प्राकृतिक रूप से रंगीन सूती वस्त्रों के सफल विपणन को बढ़ावा मिलेगा।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता: चीनोर रोड, छीमक, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

04/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास: कपड़ा उद्योग में एक गेम-चेंजर

अंकिता यादव वस्त्र एवं परिधान विभाग
चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ. प्र.)

परिचय

कपास का उपयोग पूरी दुनिया में किया जाता है और वर्तमान में यह दुनिया का सबसे अधिक उपयोग किया जाने वाला फाइबर है जिसे 'कपड़ा फाइबर का राजा' भी कहा जाता है। हमारी अलमारी में अधिकांश कपड़ों में उनकी उच्च मांग के कारण कुछ प्रतिशत कपास होता है। यह एक रोएंदार, मुलायम सेल्युलोसिक स्टेपल फाइबर है।

आमतौर पर, फाइबर को सूत या धागे में पिरोया जाता है और नरम, सांस लेने योग्य और लंबे समय तक चलने वाले कपड़े का उत्पादन करने के लिए उपयोग किया जाता है। सूती वस्त्र प्रमुख रूप से अपने आरामदायक पहनावे, नमी सोखने की क्षमता और अपनी नवीकरणीय क्षमता के साथ प्राकृतिक स्वरूप के लिए जाने जाते हैं। कच्चे कपास के रेशे का वैश्विक उत्पादन 25 मिलियन टन या 110 मिलियन गांठ प्रति वर्ष होने का अनुमान है, जो दुनिया की कृषि भूमि का 2.5% है।

पारंपरिक 'सफ़ेद' कपास के रेशों के प्रतिकूल प्रभाव

कपड़ा सामग्री में कपास के रेशों (स्कोरिंग, ब्लीचिंग, रंगाई, छपाई, आदि) के प्रसंस्करण के लिए बहुत सारे पानी, रंगों, रसायनों, ऊर्जा और अन्य संसाधनों के उपयोग की आवश्यकता होती है। रासायनिक कपड़ा रंगों और सहायक वस्तुओं के उपयोग के कारण, रंगाई कार्य पर्यावरण को प्रदूषित कर सकते हैं।

यूनाइटेड स्टेट ऑफ़ एनवायर्नमेंटल प्रोटेक्शन एजेंसी (SEPA) (1996) के अनुसार, गीले प्रसंस्करण (ब्लीचिंग, रंगाई और छपाई) में सूती कपड़ा सामग्री की औसत पानी की खपत 360 m^3/टन है। पूर्व-उपचार प्रक्रियाओं या रंगाई के लिए आवश्यक गर्म स्नान या भाप को बनाए रखने के मामले में, साथ ही बाद में रंगे सूती कपड़े को धोने के लिए ऊर्जा की खपत अधिक होती है। ऐसा माना जाता है कि उद्योगों में लगभग 10,000 विभिन्न रंगों और पिगमेंट का उपयोग किया जाता है और दुनिया भर में हर साल सात लाख टन से अधिक सिंथेटिक रंगों का निर्माण किया जाता है।

निष्कर्ष

बढ़ती उपभोक्ता माँगों और पर्यावरणीय प्रभावों के परिणाम स्वरूप टिकाऊ कपड़ा सामग्री के बारे में जागरूकता में वृद्धि हुई है। इसलिए, खेती, प्रसंस्करण, और प्राकृतिक रूप से उपलब्ध, पुन-प्रयोज्य, बायोडिग्रेडेबल, टिकाऊ, पर्यावरण और आर्थिक रूप से अनुकूल विकल्पों के परिणामस्वरूप प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास के रेशों को अपनाना निकट भविष्य में कपड़ा उद्योग में गेम-चेंजर की भूमिका निभाएगा। इसके अतिरिक्त, यह पानी के उपयोग को कम करने और इसके नुकसान से बचने में योगदान दे सकता है। प्रदूषण। प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास उगाने को अधिक महत्व देने से रंगाई पर होने वाला अतिरिक्त खर्च कम हो जाएगा। वर्तमान में, प्राकृतिक रूप से कपास के रेशे की उपज अक्सर कम होती है और रेशा कमजोर और छोटा होता है, फिर भी अधिक आसानी से उपलब्ध सफेद-सूती रेशे की तुलना में इसकी पकड़ नरम होती है। यह महत्वपूर्ण सफलता सूती कपड़ा उद्योग को प्राकृतिक रंग के कपास की मांग में तेजी ला सकती है जिससे उत्पादन के अधिक क्षेत्रों को कवर किया जा सकेगा और इसके परिणामस्वरूप किसानों की आय में वृद्धि होगी।

शिवहरे किसान सेवा केन्द्र डबरा
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाईयों के खेरिज विक्रेता
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती है

प्रो. ओमप्रकाश शिवहरे
82248-44542
78282-60543
पंजाब नेशनल बैंक के सामने, भितरवार रोड, डबरा
10/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

फसल चक्रण रणनीतियां: पोषक तत्व चक्रण और कीट प्रबंधन को संतुलित करना

संदीप कुमार यादव, पीयूष यादव
ओम प्रकाश, सचिन कुमार (परास्नातक छात्र)
कृषि विभाग, इन्टीग्रल विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)
डॉ. अभिनीत सिंह सहायक प्रोफेसर-सह-जूनियर वैज्ञानिक (शस्य विज्ञान) इन्टीग्रल विश्वविद्यालय, लखनऊ

फसल चक्रण एक महत्वपूर्ण कृषि रणनीति है जो उत्पादकता और वातावरण संरक्षण को संतुलित रखने हेतु पोषक तत्व चक्रण और कीट प्रबंधन को संभालती है। यह एक प्रक्रिया है जिसमें पोषक तत्व और कीट प्रबंधन के बीच संतुलन को बनाए रखने हेतु विभिन्न कृषि प्रविधियों का उपयोग किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य उत्पादकता को बढ़ाना होता है और साथ ही पर्यावरण को हानि पहुंचाने से बचाना है। इस लेख में, हम फसल चक्रण रणनीतियों की चर्चा करेंगे जो पोषक तत्व चक्रण और कीट प्रबंधन को संतुलित बनाने में मदद करती हैं।

भूमिका: फसल चक्रण एक प्रभावी कृषि तकनीक है जो पोषक तत्व चक्रण और कीट प्रबंधन को संतुलित करती है। इसका मुख्य उद्देश्य है फसलों की उत्पादकता को बढ़ाना और पर्यावरण को संरक्षित रखना। इस लेख में, हम फसल चक्रण की महत्वपूर्ण रणनीतियों पर ध्यान केंद्रित करेंगे जो पोषक तत्व चक्रण और कीट प्रबंधन को संतुलित बनाती हैं।

फसल चक्रण रणनीतियां

सांचे बुनाई की तकनीक: बुनाई के लिए सांचे का चयन करते समय, उत्तम बीज, बुआई की तकनीक, और सांचे के अंतर्गत फसलों के संयोजन का ध्यान देना चाहिए। इससे फसल का संरक्षण होता है और पोषक तत्व चक्रण को संतुलित रखने में मदद मिलती है।

पोषक तत्वों का उपयोग: पोषक तत्व चक्रण का अध्ययन और प्रयोग कृषि विज्ञान, उपजा विज्ञान, और पर्यावरण विज्ञान में किया जाता है। इसका उदाहरण अन्नदाता सहायक योजनाओं, जैसे कि उर्वरक प्रबंधन, जल संसाधन प्रबंधन, और कृषि विज्ञान के तथ्यों पर आधारित है। पोषक तत्व चक्रण एक प्रक्रिया है जिसमें प्राकृतिक या कृषि प्रणालियों में पोषक तत्वों का परिवर्तन होता है, जो पौधों की उत्पत्ति, विकास, और वृद्धि के लिए आवश्यक हैं। यह चक्रण जमीन, पानी, हवा, और जैविक तत्वों के बीच अदालत करता है। इसमें मुख्य पोषक तत्व हैं जैसे कि नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम, कैल्शियम, और मैग्नीशियम।

• उत्पादकता को बढ़ाने के लिए, पोषक तत्वों का उपयोग किया जाता है जो फसलों के लिए आवश्यक हैं। सही मात्रा में पोषक तत्वों का उपयोग करना, पोषक तत्व चक्रण को संतुलित रखता है और फसलों को स्वस्थ बनाए रखने में मदद करता है। • पौधों द्वारा पोषक तत्वों को अपनाने की प्रक्रिया। प्राकृतिक तत्वों को पौधों द्वारा आवश्यक और प्रयोगी रूप में परिवर्तित किया जाता है। • पौधों द्वारा उपयोगित पोषक तत्वों का मृत्तिका या अन्य उपयोगित अंशों के साथ मिलकर जमीन में प्रसार। • जमीन में संश्लेषित या निकट तत्वों का पुनः पौधों के द्वारा आपात से उपयोग किया जाना।

कीट प्रबंधन: कीट प्रबंधन एक महत्वपूर्ण कृषि प्रणाली है जो नुकसानकारी कीटों को नियंत्रित करने और फसलों की सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए उपायों का अनुमोदन करती है। इसमें प्राकृतिक और सांस्कृतिक उपाय शामिल होते हैं जो कीटों के प्रकोप को नियंत्रित करने के लिए प्रयोग किए जाते हैं। इसमें प्राकृतिक और रसायनिक उपाय शामिल होते हैं।

• कीट प्रबंधन उपाय फसलों की सुरक्षा और उत्पादकता को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। • इसका मुख्य उद्देश्य होता है कीट प्रकोप को नियंत्रित करके फसलों को हानि से बचाना। • समृद्ध कीट प्रबंधन उपायों का उपयोग कृषि उत्पादकता को बढ़ाने और उत्पादन को सुरक्षित बनाए रखने में मदद करता है।

प्रमुख कीट प्रबंधन उपाय

बायोगैस्टिक्स नियंत्रण: प्राकृतिक शत्रु जैसे कि लेडीबग्स, पैरासिटिक वॉस्प, और प्रेडेटरी माइट्स का उपयोग करके कीटों को नियंत्रित किया जाता है।

रसायनिक कीटनाशकों का उपयोग: कुछ समय रसायनिक कीटनाशकों का उपयोग अनिवार्य हो सकता है जब कीट प्रकोप अत्यधिक हो जाता है। हालांकि, इसका अधिक प्रयोग किया जाना चाहिए क्योंकि यह पर्यावरण को हानि पहुंचा सकता है।

पौधों की प्रतिरक्षा: कुछ पौधों ने स्वतंत्र रूप से कीटों के खिलाफ प्रतिरक्षा प्रणाली विकसित की है जो कीट प्रकोप को कम करने में मदद करती हैं।

बागवानी संरक्षण: कीट प्रबंधन में प्रत्येक फसल के लिए विशेष बागवानी संरक्षण के उपाय विकसित किए जाते हैं, जैसे कि पेचकुटियाँ, जाल, और नेट्स।

जल्दबाजी स्थितियाँ : कीट प्रकोप को नियंत्रित करने हेतु, कीटनाशक उपायों को समय पर लागू किया जाना चाहिए। जल्दबाजी उपाय हेतु नियंत्रण की जाती है ताकि कीट प्रकोप फैलने से पहले ही उसका संभावित प्रभाव कम हो सके।

सिंचाई प्रबंधन: सिंचाई प्रबंधन एक महत्वपूर्ण कृषि प्रणाली है जो पानी के उपयोग को संवेदनशील और प्रभावी ढंग से प्रबंधित करती है। इसका मुख्य उद्देश्य है फसलों को सही समय पर सही मात्रा में पानी प्रदान करना ताकि उत्पादकता बढ़े और पानी की बर्बादी को कम किया जा सके। सही समय पर सिंचाई करना फसलों के लिए आवश्यक है। सही सिंचाई प्रबंधन से पोषक तत्व चक्रण को संतुलित रखा जा सकता है और पानी की बर्बादी से बचा जा सकता है।

• पानी की सही मात्रा में प्रदान करने के लिए सिंचाई का अनुसूचना बनाया जाता है। यह विभिन्न प्राकृतिक पारिस्थितियों, फसल की आयु, और मिट्टी की नमी को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। • पानी के नियंत्रण और व्यवस्थापन के लिए धारिता का बेहतरीन प्रबंधन किया जाता है ताकि पानी की बर्बादी को कम किया जा सके और फसलों को अधिक निर्भरता से बचाया जा सके। • उपयुक्त सिंचाई तंतु जैसे कि स्प्रिंकलर, ड्रिप इरिगेशन, और ट्रांसफर्मिशन लाइन का उपयोग किया जाता है ताकि पानी का नियमित और बराबर प्रदान किया जा सके। • जल संचयन की प्रक्रिया जिसमें वर्षा जल को संचित किया जाता है और इसे बाद में उपयोग हेतु भंडारित किया जाता है, सिंचाई हेतु एक महत्वपूर्ण स्रोत प्रदान करती है। • सिंचाई की प्रक्रिया को मॉनिटर करने हेतु विभिन्न तकनीकों का उपयोग किया जाता है ताकि पानी का नियमित और सही मात्रा में प्रदान किया जा सके।

महत्व

• सिंचाई प्रबंधन फसलों की सही उत्पादन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। • यह पानी की बर्बादी को कम करके पानी की संरक्षा को बढ़ाता है और उत्पादकता को बढ़ाता है। • सही सिंचाई प्रबंधन उपायों का उपयोग करने से पर्यावरण को भी हानि पहुंचाने से बचाया जा सकता है।

बीमा और वित्तीय संरक्षण : बीमा और वित्तीय संरक्षण कृषि क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण उपाय है जो किसानों को अनिश्चितता से बचाने और उनकी आर्थिक सुरक्षा को सुनिश्चित करने में मदद करता है। यह कृषि उत्पादों के नुकसान, प्राकृतिक आपदाओं, या अन्य अनियंत्रित परिस्थितियों के खिलाफ संरक्षण प्रदान करता है।

प्रमुख बीमा और वित्तीय संरक्षण योजनाएं

कृषि बीमा: कृषि बीमा योजनाएँ किसानों को विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं जैसे कि बारिश कमी, बाढ़, बर्फबारी, और अत्यधिक गर्मी के खिलाफ संरक्षण प्रदान करती हैं। यह किसानों को नुकसान का मुआवजा प्राप्त करने में मदद करती है और उनकी आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करती है।

किसान क्रेडिट कार्ड : किसानों को कृषि उत्पादन के लिए आवश्यक वित्तीय संसाधनों के लिए क्रेडिट प्राप्त करने में मदद करने के लिए किसान क्रेडिट कार्ड योजनाएँ शुरू की गई हैं। इससे किसानों को अधिक आर्थिक स्वतंत्रता मिलती है और उनकी विकास क्षमता बढ़ती है।

किसान बाजार संरक्षण योजनाएँ : इन योजनाओं के तहत, किसानों को वित्तीय संरक्षण प्राप्त करने की सुविधा प्रदान की जाती है जब बाजार में उत्पादन की मूल्य नियंत्रित नहीं होता है या बाजार में मूल्य में अचानक परिवर्तन होता है।

बाजार की कटौती योजनाएं: किसानों को बाजार में अनियामितता और मूल्य में कटौतियों के खिलाफ संरक्षण प्रदान करने हेतु बाजार की कटौती योजनाएँ शुरू की जाती हैं। फसल चक्रण रणनीतियाँ पोषक तत्व चक्रण और कीट प्रबंधन को संतुलित बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये रणनीतियाँ किसानों को उत्पादकता बढ़ाने और पर्यावरण को संरक्षित रखने में मदद करती हैं। इसलिए, इन रणनीतियों का अनुसरण करके कृषि क्षेत्र में सुधार किया जा सकता है। पोषक तत्व चक्रण और कीट प्रबंधन के संतुलित संयोजन से किसानों की आर्थिक सुरक्षा और फसलों की उत्पादकता में वृद्धि होती है। सही रणनीतियों का अनुसरण करने से किसान अपनी फसलों को कीटों के हमलों से बचा सकते हैं और पोषक तत्वों के आवश्यक स्तर को बनाए रख सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

स्वास्थ्य हेतु पोषण संबंधी शिक्षा और पाक कौशल

नेहा कन्नौजिया कृषि विस्तार एवं संचार विभाग
चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर

पोषण संबंधी आवश्यकताएं

समग्र स्वास्थ्य में पोषण के महत्व: पोषण समग्र स्वास्थ्य और कल्याण के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हम जो भोजन खाते हैं, वह ऊर्जा उत्पादन, ऊतकों का मरम्मत, प्रतिरक्षा कार्य और विकास सहित विभिन्न शारीरिक कार्यों के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है। खराब पोषण से कुपोषण, मोटापा, हृदय रोग, मधुमेह और अन्य पुरानी स्थितियों सहित कई स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं। इसलिए, अच्छे स्वास्थ्य को बढ़ावा देने और बीमारियों को रोकने के लिए पोषण के महत्व को समझना मौलिक है।

आवश्यक पोषक तत्वों की व्याख्या: आवश्यक पोषक तत्व वे पदार्थ हैं जिनकी शरीर को उचित कार्यप्रणाली के लिए आवश्यकता होती है जिन्हें शरीर द्वारा पर्याप्त मात्रा में संश्लेषित नहीं किया जा सकता है और उन्हें आहार से प्राप्त किया जाना चाहिए। **इसमें शामिल हैं:**

पोषण के आवश्यक तत्व

प्रोटीन: ऊतकों के निर्माण और मरम्मत के साथ-साथ एंजाइम और हार्मोन उत्पादन के लिए आवश्यक है।

कार्बोहाइड्रेट: शरीर की ऊर्जा का प्राथमिक स्रोत, शारीरिक गतिविधि हेतु ईंधन प्रदान करता है। और अंग कार्य

वसा: ऊर्जा भंडारण, इन्सुलेशन और वसा में घुलनशील विटामिन के अवशोषण के लिए महत्वपूर्ण है।

विटामिन: कार्बनिक यौगिक जो विभिन्न शारीरिक प्रक्रियाओं, जैसे चयापचय, प्रतिरक्षा कार्य और कोशिका वृद्धि को नियंत्रित करते हैं।

खनिज: हड्डियों के स्वास्थ्य, द्रव संतुलन, तंत्रिका कार्य और मांसपेशियों के संकुचन हेतु आवश्यक अकार्बनिक तत्व।

आहार संबंधी दिशानिर्देश और अनुशंसित दैनिक भत्ते

आहार संबंधी दिशानिर्देश: ये दिशानिर्देश समग्र स्वास्थ्य को बढ़ावा देने और पुरानी बीमारियों के जोखिम को कम करने के लिए स्वस्थ खाने के पैटर्न और भोजन विकल्पों पर सिफारिशें प्रदान करते हैं।

अनुशंसित दैनिक भत्ते (आरडीए): विशिष्ट पोषक तत्व सेवन स्तर हैं जिन्हें अधिकांश स्वस्थ व्यक्तियों की जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त माना जाता है।

व्यक्तिगत पोषण संबंधी आवश्यकताएं-व्यक्तिगत पोषण संबंधी आवश्यकताएं कारकों के आधार पर भिन्न-भिन्न होती हैं। जैसे कि उम्र, लिंग, शरीर का आकार, चयापचय, गतिविधि स्तर और स्वास्थ्य स्थिति। उदाहरण के लिए, बढ़ते बच्चों और किशोरों को वृद्धि और विकास में सहायता के लिए उच्च ऊर्जा और पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है, जबकि बड़े वयस्कों को हड्डियों के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए कम कैलोरी लेकिन कैल्शियम और विटामिन डी जैसे कुछ पोषक तत्वों के उच्च स्तर की आवश्यकता हो सकती है। इसके अतिरिक्त, एथलीटों और कुछ चिकित्सीय स्थितियों वाले व्यक्तियों में अद्वितीय पोषण संबंधी आवश्यकताएं हो सकती हैं जिन्हें वैयक्तिकृत आहार योजनाओं के माध्यम से संबोधित किया जाना चाहिए।

विशिष्ट पोषण संबंधी आवश्यकताएं को पूरा करने और स्वास्थ्य परिणामों को अनुकूलित करने के लिए आहार संबंधी सिफारिशों को तैयार करने के लिए इन व्यक्तिगत अंतरों को समझना आवश्यक है।

पाककला कौशल की मूल बातें

बुनियादी खाना पकाने की तकनीकें: बुनियादी खाना पकाने की तकनीकें पाक कौशल की नींव बनाती हैं और विभिन्न प्रकार के व्यंजन तैयार करने के लिए आवश्यक हैं। इन तकनीकों में शामिल हैं:

1. **काटना:** सामग्री को खुरदरे, अनियमित टुकड़ों में काटना।
2. **टुकड़ा करना:** सामग्री को पतले, एक समान टुकड़ों में काटना।
3. **डाइसिंग:** सामग्री को छोटे, समान क्यूब्स में काटना।
4. **मिनसिंग:** सामग्री को छोटे-छोटे टुकड़ों में बारीक काटना।

इन तकनीकों में महारत हासिल करने से रसोइयों को खाना पकाने, बढ़ाने के लिए सामग्री को कुशलतापूर्वक तैयार करने की अनुमति मिलती है। ये तकनीकें समान रूप से खाना पकाने को सुनिश्चित करती हैं, और व्यंजनों की बनावट और स्वाद को बढ़ाती हैं।

खाना पकाने के तरीके: खाना पकाने के विभिन्न तरीकों को समझने से रसोइया के प्रदर्शन का विस्तार होता है और भोजन की तैयारी में बहुमुखी प्रतिभा की अनुमति देता है। सामान्य खाना पकाने के तरीकों में शामिल हैं:

1.**उबालना:** भोजन को पूरी तरह पकने तक उबलते पानी या शोरबा में पकाना।

2.**भाप देना:** भोजन को उबलते पानी की भाप के संपर्क में लाकर पकाना, जो बनाए रखने में मदद करता है।

3.**भूनना:** तेज़ आंच पर थोड़ी मात्रा में तेल या वसा में भोजन को जल्दी से पकाना, अक्सर इस्तेमाल किया जाता है सब्जियों और मांस के लिए।

4.**भूनना:** सूखी गर्मी का उपयोग करके ओवन में खाना पकाना, जिससे बाहरी भाग कारमेलाइज़्ड हो जाता है, कोमल आंतरिक।

5.**ग्रिलिंग:** कुकिंग फोकस करने के लिए, खाना को उच्च तापमान पर खा जाता है।

6.**झुलसा हुआ रूप:** खाना को लिफाफे में पकाने की प्रक्रिया, जो उसके अंदर नमी बनाए रखती है।

प्रत्येक यूनिकिंग विधि अद्वितीय स्वाद है और स्वाद और स्वाद प्रोफाइल के लिए उपयुक्त हो सकती है।

रसोई उपकरण और उपकरण आवश्यक: रसोई को नमक उपकरणों से सुसज्जित करना आसान और बिक्री के लिए आसान है। शेफ की निली चॉपिंग और डाइसिंग के लिए बहुमुखी और अपरिहार्य कटिंग हाउंड का उपयोग किया जा सकता है, और बर्तन और पाम जैसे वेन्स और योर बेरिलिंग, सॉउंग, और प्रवेश कार्यों के लिए आवश्यक हैं। ओवन और स्टोवटॉप खाना पकाने के विभिन्न तरीकों के लिए व्यंजनों की एक विस्तृत श्रृंखला के लिए आवश्यक होते हैं।

खाना पकाने की प्रक्रिया में स्वच्छता और भोजन सुरक्षा

खाना पकाने के दौरान स्वच्छता और भोजन सुरक्षा को बनाए रखना महत्वपूर्ण है। इसके लिए निम्नलिखित अभ्यास शामिल हैं:

1.**हाथ धोना:** भोजन को संभालने से पहले हमेशा हाथ धोना।

2.**उपकरणों को साफ और स्वच्छ रखना:** काम के मेफ़ेस और अननुइल्स को साफ़ और स्वच्छ रखना, खाना पकाने की प्रक्रिया में संक्रमण को रोकने में मदद करता है।

3.**सिंगिंग पेडाहले का उपयोग:** खाना पकाने के दौरान बचाव के लिए सिंगिंग पेडाहले का उपयोग करना अत्यंत महत्वपूर्ण है।

4.**उचित तापमान पर पकाना:** भोजन को मुख्यतः अधिक तापमान पर पकाना खराब हो सकता है।

5.**खाद्य सुरक्षा के लिए अलग रखना:** कच्चे और पके हुए खाद्य को अलग रखना, यह क्रॉस-संदूषण से बचाव करता है।

6.**भोजन योजना और विकल्पों का विकास:** स्वास्थ्य और पोषण के लिए सही भोजन पिसानिंग का विकल्प चुनना महत्वपूर्ण है।

7.**विविधता को शामिल करना:** सभी खाद्य समूहों के सेवन से विविध खाद्य पदार्थों को शामिल करना महत्वपूर्ण है।

8.**भाग नियंत्रण:** सही भागों का पालन करके हेल्थी वजन का बनाए रखना।

9.**योजना शेड:** साप्ताहिक भोजन योजना बनाने से समय और पैसा बचाया जा सकता है।

10.**लचीलापन:** लचीलेपन और अनुकूलन के लिए विभिन्न आहार संबंधी योजनाओं का अनुसरण करना महत्वपूर्ण है।

विभिन्न खाद्य समूहों से संतुलित भोजन की अव्यवस्थित विविधता

1.**आसियान मात्स, प्रोटीन, और डेयरी उत्पाद:** यह खाद्य समूह विभिन्न प्रकार की मसालेदार और स्वादिष्ट व्यंजनों को शामिल करता है जो अधिकतर मसालेदार और प्रोटीन से भरपूर होते हैं।

2.**कार्बोहाइड्रेट साबुत अनाज, फल, सब्जियाँ:** ये खाद्य समूह ऊर्जा को प्रदान करते हैं और मस्तिष्क को ऊर्जा संदर्भ के लिए ऊर्जित करते हैं।

3.**स्वस्थ** फैट्सः नमकीन और मसालेदार फैट्सी विकल्प जैसे कि नम्स, सीट्स, और ऑलिव, हृदय स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण होते हैं।

4.**फाइबर और एन्टिऑक्सीडेंट्स:** सब्जियाँ, फल, और साबुत अनाज में फाइबर और एंटीऑक्सीडेंट्स होते हैं जो सामान्य रोगों के खिलाफ संरक्षा प्रदान करते हैं।

5.**प्रोटीन:** मांस, त्वचा रहित मुर्गे, और पौधों पर आधारित प्रोटीन विकल्प स्वस्थ बच्चों के लिए उत्तम होते हैं।

6.**पोषण का विकास:** यह संतुलित भोजन विविधता और अच्छे पोषण को बढ़ावा देता है, जो स्वस्थ और बलशाली जीवनशैली के लिए महत्वपूर्ण है।

विभिन्न आहार संबंधी समस्याओं के लिए स्वादिष्ट रेसिपी

1. **प्रतिबंध:** नवीनता के लिए शाकाहारी और शाकाहारी व्यंजनः इसमें नए और आत्मनिर्भरता भरे शाकाहारी और शाकाहारी व्यंजनों के लिए योजना-आधारित सामग्री का उपयोग किया जा सकता है।

2.**आहेमेटिव ग्राम और दही का उपयोग करना:** ये खाद्य समूह डेयरी-मधुमक्खी आहेमेटिव्स को प्रोमोट करते हैं

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

बुंदेलखंड में उन्नत सरसों उत्पादन कैसे करें किसान

विवेक कुमार यादव, विकास कुमार
(परास्नातक छात्र)
जगन्नाथ पाठक (प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष)
दीपक प्रजापति शोध छात्र, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय बांदा

सामान्य परिचयः सरसों रबी की तिलहनी फसलो में एक प्रमुख फसल है और यह ब्रैसीकेसी कुल का द्विबीजपत्री, एकवर्षीय शाक जातीय पौधा है जिसका वैज्ञानिक नाम ब्रेसिका कम्प्रेसटिस है। इसके पौधे की ऊँचाई 160-180 सें.मी. होती है, तने में शाखा-प्रशाखा होते हैं, पीले रंग के फूल लगते हैं जो तने और शाखाओं के ऊपरी भाग में स्थित होते है, प्रत्येक फली में 8-10 बीज होते हैं एवं बीज काले अथवा पीले रंग के होते हैं। सरसों के तेल में चरपराहट होने की वजह आइसोथायो सायनेट होता है। भारत में सरसों की खेती मूख्य तौर से पंजाब, राजस्थान, उ.प्र., बिहार, पश्चिम बंगाल और गुजरात में होती है।

सरसों का महत्वः सरसों के बीज से तेल निकाल कर उसका उपयोग विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थ बनाने और शरीर में लगाने में किया जाता है। इसका तेल अचार, साबुन तथा ग्लिसराल बनाने के भी काम में आता है। तेल निकाले जाने के बाद प्राप्त खली मवेशियों को खिलाने से उनकी रोग प्रतिरोधी क्षमता भी बढ़ जाती है। अगर खली का उपयोग उर्वरक के रूप में करना हो तो मिट्टी या पानी के साथ सरसों की खली को 10:1 के अनुपात में मिलाकर इस्तेमाल करना चाहिए। इसका सूखा डंठल जलावन के काम में आता है। मसाले बनाने में भी इसके बीजों का उपयोग किया जाता है। इसका तेल आयुर्वेद की दृष्टि से भी बहुत महत्वपूर्ण है तथा सभी चर्म रोगों से रक्षा करता है। सरसों तेल चरपरा, स्निग्ध, कड़वा, तीखा, गर्म, कफ तथा वातनाशक, रक्तपित्त और अग्निवर्द्धक, खुजली, पेट के कृमि आदि नाशक है और अनेक घरेलू नुस्खों में काम आता है। सरसों के साग का सेवन स्वाद के मामले में लजिज होने के साथ-साथ सेहत से जुड़े कई फायदों से भी भरा है। इसके साग में एंटीऑक्सीडेंट्स भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं, जो शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में मदद करते हैं तथा कैल्शियम हड्डियों के विकास में मदद करता है।

बुन्देलखण्ड के लिए सरसों क्यों है उत्तमः बुंदेलखंड के कुछ क्षेत्रों में पानी की कमी है ऐसे में सरसों की खेती करने से कम पानी में भी अच्छा उत्पादन पाया जा सकता हैं। बुन्देलखण्ड में गाय जब दूध देना बंद कर देती है तो उन्हें छोड़ देना आम बात है। इस प्रणाली को स्थानीय लोग अन्ना प्रथा कहते हैं। और इस प्रथा के चलते कई जानवर आवारा रूप से घूमते रहते हैं जो अन्य फसलो को खा कर खासा नुकसान पहुंचाते हैं लेकिन सरसों की फसल को नही खाते हैं और इसी वजह से बुंदेलखंड के किसानों के लिए सरसों की फसल उपयुक्त है। इसके साथ ही सरसों की फसल को जंगली जानवरों से बचाने की भी चुनौती नहीं होती है क्योंकि ना तो इसे नीलगाय खाती है और ना ही इसे जंगली सुअर अधिक प्रभावित करते है।

किसानों को सरसों की खेती से यदि अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करना है तो उन्हे निश्चित रूप से इसकी खेती में यहाँ उल्लेखित उन्नत तकनीको को अपनाना चाहिए।

सरसों की उन्नत किस्मेंः बीज एक महंगा आदान हैं इसलिए किसानों को हर साल बीज खरीदने के स्थान पर जो बीज उन्होने पिछले वर्ष बोया था यदि उसका उत्पादन अच्छा रहा हो तो उस बीज की सफाई और ग्रेडिंग करके उसमे से रोगमुक्त दानों को अलग करने के बाद बीजोपचार करके बुवाई करना चाहिए, लेकिन जिन किसान भाइयों के पास ऐसा बीज नहीं है वो दिए गये निम्न किस्मों के बीज की बुवाई कर सकते हैं।

आरएच-406 और एनआरसीएचबी-101: बुंदेलखंड की मिट्टी और वातावरण के लिए ये दोनो प्रजातियां बेहद उपयुक्त हैं। ये कम सिंचाई में भी 15 से 20 क्विंटल प्रति हे. तक उत्पादन दे सकती हैं।

आर एच 30: सिंचित व असिंचित दोनों ही स्थितियों में यह किस्म अच्छा उत्पादन देती है। इस किस्म को गेहूं, चना या फिर जौ के साथ भी बो सकते हैं।

टी 59 (वरूणा): इसकी उपज असिंचित स्थितियों में 15 से 18 क्विं. प्रति हे. होती है। इसके बीज में 36% तेल की मात्रा होती है।

आर्शिवाद (आर. के. 01 से 03): देरी से बुवाई (25 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक) करने पर इस किस्म को उपयुक्त पाया गया है।

एनआरसी डीआर 2: इस किस्म का उत्पादन 22-26 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक दर्ज किया गया है।

आरएच-749: इसका उत्पादन 24-26 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक दर्ज किया गया है।

गिरिराज

नई किस्म में फली और दाने अधिकः कई वर्षो से लगातार बुंदेलखंड के किसान सरसों की सालों पुरानी लोकल किस्म के बीज की बुवाई करते आ रहे हैं जोकि बीज न होकर अनाज बन गया है तथा बुवाई से इसमे कीट एवं व्याधि भी अधिक आते हैं। नई किस्मो की बुवाई करने पर उत्पादन बढता है परिणाम स्वरुप तेल उत्पादन भी बढ जाता है। उन्नत खेती के लिए नई किस्में भी विकसित हो रही हैं। इसी कड़ी में राजस्थान में सरसों की उन्नत किस्म गिरिराज को विकसित किया गया था, जो की अब बुंदेलखंड में सरसों की खेती को एक नई दिशा देने का काम कर रही है।

फसल चक्रः फसल चक्र अपनाने से खरपतवार नियंत्रण होता है, अधिक पैदावार प्राप्त होती है, मिट्टी की उर्वरता बनाये रखने, रोग और कीट के रोकथाम में बहुत फायदा होता है। एक वर्षीय फसल चक्र जैसे मूँग-सरसों, ग्वार-सरसों, बाजरा-सरसों तथा दो वर्षीय फसल चक्र जैसे बाजरा-सरसों-मूँग/ ग्वार-सरसों को फसल चक्र में अपनाना बेहद लाभकारी साबित होता है। ऐसे असिंचित क्षेत्र जहाँ केवल रबी के मौसम में फसल ली जाती हो वहाँ सरसों के बाद चना उगाना बेहतर साबित होता है।

सरसों की खेती के लिए सही समय और मिट्टीः सरसों की खेती रबी में की जाती है। 15 से 25 डिग्री सेल्सियस तापमान वाले क्षेत्रों में इसका उत्पादन अच्छा होता है। वैसे तो इसकी खेती सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है लेकिन बलुई दोमट मृदा सर्वाधिक उपयुक्त होती है। फसल मृदा की हल्की क्षारीयता को सहन कर सकती है लेकिन मृदा अम्लीय होने पर इसका उत्पादन घट जाता है।

खेत की तैयारीः सरसों के छोटे-छोटे बीजों का जमाव भुर-भुरी मिट्टी में बेहतर तरीके से होता है। इसके लिए खरीफ फसल की कटाई के बाद अगर खेत में नमी ना हो तो खेत में पलेवा करने के 2 से 3 दिन बाद एक गहरी जुताई प्लाऊ से करनी चाहिए और इसके बाद तीन चार बार देशी हल से जुताई करना लाभप्रद होता है। जमीन में नमी होने से बीज जल्दी अंकुरित होता है और पूरा अंकुरण एक साथ होता है। उत्पादन बढ़ाने के लिए 2 से 3 किलोग्राम एजोटोबेक्टर व पी.एस.बी कल्चर को 50 किलोग्राम पकी हुई गोबर की खाद या वर्मीकम्पोस्ट में मिलाकर अंतिम जुताई से पूर्व मिला देना चाहिए।

सरसों की बुवाई का समय और तरीकाः सरसों की बुवाई के लिए उपयुक्त तापमान 25 से 26 सेल्सियस तक रहता है। बुन्देलखंड में सरसों बोने का उपयुक्त समय सितम्बर का अंतिम सप्ताह तथा शेष क्षेत्रों में अक्टूबर का प्रथम पखवारा है। देरी से बुआई करने पर माहूँ का प्रकोप तथा अन्य कीटों एवं बीमारियों की होने की सम्भावना बढ़ जाती है। सरसों की बुवाई कतारो में करने से उत्पादन अधिक मिलता है, फिर भी भारत में 80-90 फीसदी लोग छिड़काव विधि से ही सरसों की बुवाई करते है। कतार से कतार की दूरी 45 सें.मी. और पौधों से पौधें की दूरी 20 से.मी. रखनी चाहिए। बीज बोने की गहराई सिंचित क्षेत्रों में 5 से.मी. तक रखी जाती है तथा सीडड्रिल से बेहतर बुवाई की जा सकती है।

बीज दर एवं बीज शोधन : बुवाई के लिए शुष्?क क्षेत्र में 4 से 5 किग्रा और सिंचित क्षेत्र में 3 से 4 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। बीज जनित रोगों से सरसों की फसल को बचाने के लिए 2 से 5 ग्राम थीरम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करके बुवाई करना चाहिए।

फसल सुरक्षाः कीटों और बीमारियों से रबी की तिलहनी फसलों को एक ही साल में 15-20% तक नुकसान पहुँचता है। कभी-कभार ये कीट उग्र रूप धारण करके फसलों को अत्यधिक हानि पहुँचा देते हैं। इस वजह से सरसों या तिलहनी फसलों को कीटों और बीमारियों से बचाना बेहद जरूरी हो जाता है।

(क) प्रमुख कीटः सरसों में अलग-अलग तरह के कीटो का आक्रमण होता रहता हैं -

माहूः यह पंखहीन तथा पंख युक्त हल्के सिलेटी या हरे रंग का कीट होता है। यह सरसो के पौधो पर मधुस्राव करते है जिस पर काली फफूँद उग आती है जिससे प्रकाश संश्लेषण में बाधा उत्पन्न होती है। इसके रोकथाम के लिए डाईमेथोएट 30 ई.सी. या फेंटोथियान 50 ईसी की 1 लीटर मात्रा को 700 से 800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। क्राइसोपरला कार्निया (परभक्षी कीट) को 50,000 की संख्या में प्रति हेक्टेयर की दर से पूरे खेत में छोड़ना भी बेहद लाभकारी साबित होता है।

आरा मक्खीः यह काले रंग व घरेलु मक्खी से छोटी होती है। इसे आरा मक्खी इसलिए कहते हैं क्योंकि इसके मादा का अंडा रोपण आरी के आकार का होता है। इसके अधिक आक्रमण करने पर पूरा पौधा पत्ती विहीन हो जाता है। इस कीट की रोकथाम के लिए क्यूनालफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. की 600 मिली. मात्रा को 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर दुबारा छिड़काव कर सकते है।

पेन्टेड बग या चितकबरा कीटः कीट का रंग काले होने के साथ दृ साथ इस पर नारंगी रंग के धब्बे पाए जाते हैं। इसके शिशु तथा वयस्क दोनों ही पत्तियों, टहनियों तथा फलियों का रस चूसते हैं। इस कीट के आक्रमण से बीज का वजन घट जाता है और बिजो

में तेल की मात्रा भी कम हो जाती है। इस कीट का नियंत्रण करने के लिए डाइमेथोएट 30 ई.सी. की 625 मि.ली. मात्रा को 600-700 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

दीमक: इसके नियंत्रण के लिए अन्तिम जुताई के समय क्लोरपायरीफॉस (4) मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में मिला देना चाहिए और यदि खड़ी फसल में इसका प्रकोप दिखायी दे तो सिंचाई के साथ 1 लीटर क्लोरपायरीफॉस प्रति हेक्टेयर को पानी के साथ देना चाहिए।

(ख) प्रमुख रोग: सरसों की फसल में प्रमुख रोग जैसे आल्टरनेरिया, पत्ती झुलसा रोग, सफेद किट्ट रोग, चूर्णिल आसिता रोग तथा तुलासिता रोग लगते हैं।

अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा: पत्तियों तथा फलियों पर गहरे कत्थई रंग के धब्बे बन जाते है जो गोल छल्ले के रूप में पत्तियों पर स्पष्ट दिखाई देते है। तीव्र प्रकोप की दशा में धब्बे आपस में मिल जाते है जिससे पूरी पत्ती झुलस जाती है। इस रोग से बचने के लिए थीरम 75% डब्लू.एस. की 2.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुआई करना चाहिए।

सफेद रतुवा या श्वेत किट्ट: इस रोग में पत्तियों की निचली सतह पर सफेद फफोले बनते है जिससे पत्तिया पीली होकर सूखने लगती है। फूल आने की अवस्था में पुष्पक्रम विकृत हो जाता है जिससे कोई भी फली नहीं बनती है इस रोग के नियंत्रण के लिए 15-15 दिन के अन्तर पर मैन्कोजेब (फफूँदनाशी) के 0.2% घोल का छिड़काव करना चाहिए।

चूर्णिल आसिता: पुरानी पत्तियों की ऊपरी सतह पर छोटे-छोटे धब्बे तथा पत्तियो की निचली सतह पर इन धब्बों के नीचे सफेद रोयेदार फफूंदी उग आती है और कुछ समय बाद पूरी पत्ती पीली होकर सूख जाती है। रोग के लक्षण दिखाई देने पर घुलनशील सल्फर (0.2) की वांछित मात्रा का घोल बनाकर पर छिड़काव करना चाहिए।

तना गलन: फूल आने के समय दो बार 20 दिन के अन्तराल पर (बुआई के 50 वें और 70 वें दिन) कार्बेन्डाजिम (0.1) फफूंदीनाशक का छिड़काव करने से रोग का बचाव किया जा सकता है।

जड़ सड़न रोग: बीज को बुवाई करने से पहले फफूंदनाशक वीटावैक्स, कैपटान, थीरम मे से कोई एक 3 से 5 ग्राम दवा प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

भूमि उपचार: भूमि जनित एवं बीज जनित रोगों के रोकथाम के लिए बायोपेस्टीसाइड ट्राईकोडरमा विरिडी (1) डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हे. 60-75 किग्रा. पकी हुए गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8-10 दिन तक छाया में रखने के बाद बुआई के पहले आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से सरसों के बीज एवं भूमि जनित रोगों के प्रबन्धन में सहायक होता है।

खाद उर्वरक प्रबन्धन: सरसों की खेती के लिए 60 क्विंटल गोबर की पकी हुई खाद बुवाई से एक महिने पहले खेत में मिला देना चाहिए। सिंचित दशा में 120 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फॉस्फोरस तथा 60 किग्रा. पोटाश तत्व के रूप में प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करते हैं। इनमे से नत्रजन की आधी मात्रा, फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पहले (अंतिम जुताई के समय) खेत में मिला देना चाहिए और शेष आधी नत्रजन की मात्रा बुवाई के 25 से 30 दिन बाद टाप ड्रेसिंग (खडी फसल पर) के रूप में प्रयोग करना चाहिए। तिलहनी फसलो में सल्फर युक्त खाद का इस्तेमाल करने से लागत कम और बीजो में तेल की मात्रा बढ जाती है इसलिए नत्रजन

की पूर्ति हेतु अमोनियम सल्फेट, फॉस्फोरस हेतु सिंगिल सुपर फास्फेट का उपयोग करना चाहिए क्योंकि इसमें सल्फर भी उपलब्ध रहता है। और यदि डी.ए.पी. खाद का प्रयोग किया जाता है तो इसके साथ बुआई के समय 200 किग्रा. जिप्सम प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना फसल के लिए लाभदायक साबित होता है। सरसों की फसल से अधिक उपज प्राप्त करने में सूक्ष्म पोषक तत्वों का बहुत अधिक महत्व होता है। जिंक की कमी वाली मृदा में बुआई से पहले 25 किलो ग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर अकेले या जैविक खाद के साथ प्रयोग करना चाहिए। इससे पैदावार में वृद्धि होती है। खड़ी फसल में जिंक की कमी के लक्षण दिखाई देने पर 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट (200 लीटर पानी में 1 किलोग्राम जिंक सल्फेट) का घोल बनाकर पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। बोरान फसल में पराग की क्रियाशीलता एवं परागण को बढ़ाता है इसके होने से सरसो में फूलो का विकास बेहतर होता है। इसलिए बोरोन की कमी वाली मृदाओं में बुआई के पूर्व 10 किलो ग्राम बोरेक्स प्रति हेक्टेयर की दर से मृदा में मिला दें।

थायो यूरिया का प्रयोग: थायो युरिया के प्रयोग से सरसों की उपज को 15 से 20% तक बढाया जा सकता है। थायो युरिया में उपस्थित सल्फर के कारण पौधें की आन्तरिक कार्यिकी में सुधार होता है। सरसों की फसल में 0.1 प्रतिशत थायो युरिया (500 लीटर पानी में 500 ग्राम थायो युरिया) के दो पर्णीय छिड़काव उपयुक्त पाये गये हैं। पहला फूल आने के समय (बुआई के 50 दिन बाद) एवं दूसरा छिड़काव फलियां बनते समय करना चाहिए।

पौधे का विरलीकरण: खेत में पौधें का उचित संरक्षण और समान बढ़वार के लिए बुआई के 15-20 दिन बाद पौधें का विरलीकरण आवश्यक रूप से कर देना चाहिए। विरलीकरण द्वारा पौधें से पौधें की दूरी 20 से.मी. कर देनी चाहिए जिससे फसल की उचित बढ़वार हो सकें।

जल प्रबंधन: पहली सिंचाई फूल आने के समय तथा दूसरी सिंचाई फलियो में दाने भरने की अवस्था में करना चाहिए। अगर फसल अवधि में वर्षा हो जाए तो दूसरी सिंचाई न करने पर भी उपज अच्छी प्राप्त हो जाती है। ऐसे क्षेत्र जहाँ पानी की कमी हो वहाँ सिर्फ एक ही सिंचाई करना ठीक रहता है। कम पानी वाले क्षेत्रों में सरसों का अच्छा उत्पादन पाने के लिए मानसून के दौरान खेत की अच्छी तरह दो-तीन बार जुताई करके उसमे गोबर की खाद को मिला दे, जिससे की मृदा की जल धारण क्षमता में वृद्धि हो जाती है। वाष्पीकरण द्वारा मृदा की नमी में होने वाली हानि को रोकने के लिए अन्तः सस्य क्रियायें एवं मृदा की सतह पर पलवार का प्रयोग करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण: अनेक प्रकार के खरपतवार सरसों के साथ उग आते है जैसे गोयला, चील, मोरया, सत्यानाशी, कृष्णनील, मकोई और प्याजी। खरपतवार फसल के साथ पोषक तत्व, नमी, स्थान एवं प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा करके सरसों के उत्पादन एवं तेल प्रतिशत में कमी ला देते है। सत्यानाशी नामक खरपतवार का बीज सरसों के बीज के साथ मिलकर तेल की गुणवत्ता को प्रभावित कर देता है जिसके खाने में प्रयोग से "ड्राप्सी" नामक जानलेवा बीमारी के होने की संभावना बढ जाती है इसलिए प्रभावी खरपतवार नियंत्रण होना बहुत जरुरी है। खरपतवार नियंत्रण हेतु बुवाई के तीसरे सप्ताह के बाद से 2 से 3 बार नियमित अन्तराल पर निराई-गुड़ाई करते रहना चाहिए। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए बुवाई के तुरंत बाद अंकुरण होने से पहले पेंडीमेथालीन 30 ई सी की 3.3 लीटर मात्रा को प्रति हे. की दर से 800-1000 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। सरसों की फसल में ओरोबंकी नामक परजीवी खरपतवार पौधों की जड़ों पर उगकर उनसे सारे पोषक तत्व खींच लेता है जिससे फसल के पौधे कमजोर रह जाते हैं। इसकी रोकथाम हेतु इसके पौधों को बीज बनने से पहले ही उखाड़ देना चाहिए।

फसल कटाई, मड़ाई और भण्डारण: फसल अधिक पकने पर फलियों के चटकने की संभावना बढ़ जाती है इसलिए जब पौधे पीले पड़ने लगे और 75 फलियाँ सुनहरे भूरे रंग की हो जाए, तब फसल को काटकर, सुखाकर और मड़ाई करके बीज अलग कर लेना चाहिए। फसल की मड़ाई थ्रेसर से ही करना चाहिए क्योंकि इससे बीज और भूसा अलग-अलग निकल जाने के साथ - साथ एक ही दिन में काफी मात्रा में सरसों की मड़ाई हो जाती है। बीज निकलने के बाद उनको साफ करके बोरियो में भरकर 8-10% नमी की अवस्था में सूखे स्थान पर भण्डारण कर देना चाहिए।

उत्पादन: सरसो की फसल 125-130 दिनो में पककर तैयार हो जाती है। अगर जलवायु अच्छी हो, फसल बुवाई से लेकर कटाई तक रोग, कीट एवं खरपतवार से मुक्त रहे और पूर्णतया वैज्ञानिक दिशा निर्देशों के साथ किसान खेती करें तो 25-30 क्विं. प्रति हे. तक उत्पादन लिया जा सकता है।

कितनी लागत पर कितना मुनाफा ? सरसों की खेती में प्रति हेक्टेयर करीब 30 हजार रुपये की लागत लगाकर औसतन 22-25 क्विंटल तक का उत्पादन आसानी से मिल जाता है। 2024-25 के लिए सरसों की एमएसपी 5650 रुपये निर्धारित की गयी है। मतलब किसान एमएसपी के दाम पर सरसो बेचकर एक हे. से करीब 1.24-1.41 लाख रुपये तक की कमाई कर सकता है जिसमे करीब 94 हजार से 1.11 लाख रुपये तक का मुनाफा मिल सकता है। इस तरह सरसों की खेती में किसान को महज 4 महीने में ही लागत का तीन गुना मुनाफा हो सकता है।

लाभ-हानि का मूल्यांकन: 1 क्विंटल सरसों से लगभग 35-40 लीटर तेल और 60 किलो खली निकलती है यानि 25 क्विंटल सरसों से करीब 1000 लीटर तेल के साथ 1500 किलो खली भी निकलेगी। खुदरा में सरसों के तेल का दाम प्रति लीटर 160-180 रुपये है तो किसान भाई आसानी से तेल को 140-150 रुपये लीटर के हिसाब से बेच सकते हैं। मतलब 1000 लीटर तेल बेचने पर 1.4-1.5 लाख रुपये की कमाई होगी। अब अगर लागत में हम तेल निकलवाने का खर्च 6000 रुपये भी जोड़ दें तो कुल लागत 41000 रुपये हो जाती है। इस तरह भी किसान भाइयो को 99 हजार से 1.1 लाख रुपये का मुनाफा होगा। तेल के साथ-साथ अगर 1500 किलो खली भी सिर्फ 30 रुपये प्रति किलो के हिसाब से बेची जाए तो 45 हजार रुपये खली बेचने से भी मिल जायेंगे। मतलब किसान की पूरी लागत केवल खली बेचने से ही निकल आएगी और 1.03-1.13 लाख रुपये तक किसान का मुनाफा होगा और इस तरह किसान भाई एक हेक्टेयर सरसों की खेती करके करीब 3-4 गुना से भी अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

एकीकृत कृषि प्रणाली : किसानों की आय बढ़ाने का एक विकल्प

पवन कुमार गुप्ता, शिवम सिंह
(शोध छात्र) कृषि प्रसार शिक्षा विभाग
अनुज मिश्रा (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग
अभिनव यादव (शोध छात्र) शस्य विज्ञान विभाग
अपूर्वा सिंह, प्रिया सिंह (शोध छात्रा)
प्रसार शिक्षा एवं संचार प्रबंधन विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर

भारत विश्व में सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश बनने वाला है। दिन-प्रतिदिन बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए 2030 तक 1370 मिलियन लोग हमारे देश में होंगे, और 2050 तक यह संख्या 1600 मिलियन तक पहुँचने की संभावना है। भारत में लगभग 160 मिलियन हेक्टेयर खेती योग्य भूमि है, जिसका 80% वितरण छोटे या सीमान्त किसानो के रूप में है। देश की वर्तमान स्थिति के अनुसार, 2030 तक खेती योग्य भूमि में और कमी आने की सम्भावना है। एकीकृत कृषि प्रणाली एक समग्र दृष्टिकोण है जिसमें खेती के विभिन्न उद्यमों का सहयोगात्मक तरीके से उपयोग कर खेती की जाती है, ताकि एक उद्यम का अपशिष्ट उत्पादन दूसरे के लिए निवेश के रूप में कार्य करे। एकीकृत कृषि प्रणाली एक मिश्रित कृषि प्रणाली है जिसमें पशुपालन, मछली, मुर्गी पालन और अन्य लाभकारी उद्यम जैसे विभिन्न उद्यम कम जोखिम के साथ अधिक लाभ देते हैं, जो गंभीर जलवायु परिस्थितियों के मामले में फसलों के नुकसान को कम करने में सहायक होते है। एकीकृत कृषि प्रणाली से विभिन्न उद्यमों के कुशल उपयोग से सीमान्त किसानों के जीवन स्तर को बढ़ाया जा सकता है।

प्राकृतिक प्रणालियों के विविधीकरण की आवश्यकता : भोजन की बढ़ती मांग के साथ-साथ कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण को बनाए रखने के लिए मौजूदा फसल कृषि प्रणालियों को पुनर्संतुलित करने की आवश्यकता है। यह एकीकृत कृषि प्रणाली के माध्यम से संभव है, जिसमें पूरक कृषि उद्यमों का उपयुक्त संयोजन जैसे कि फसल प्रणाली, पशुधन, मत्स्य पालन, वन और मुर्गी पालन इत्यादि शामिल है। व्यापक और नवीन कृषि प्रणालियाँ कृषक परिवार की आय और रोजगार के अवसरों को बढ़ाने के लिए शक्तिशाली उपकरण प्रतीत होती हैं। एक समग्र दृष्टिकोण व्यक्तिगत घटकों की समग्र उत्पादकता बढ़ाने पर केंद्रित है, जबकि एक अभिनव दृष्टिकोण अंतिम उपयोगकर्ता की धारणाओं के आधार पर नए घटकों को पेश करके स्थापित कृषि प्रणालियों की लाभप्रदता बढ़ाने पर केंद्रित है।

एकीकृत कृषि प्रणाली के घटक: एकीकृत कृषि प्रणाली के महत्वपूर्ण घटकों में कृषि से संबंधित सभी उद्यम जैसे कृषि, मशरूम की खेती, मछली पालन, बागवानी, रेशम उत्पादन, बत्तख पालन, बीज उत्पादन, सब्जी उत्पादन, चारा उत्पादन, मुर्गी पालन, खरगोश पालन, एजोला खेती, मूल्यवर्धन, नर्सरी, बकरी - भेड़ पालन, मधुमक्खी पालन और कबूतर पालन आदि शामिल हैं।

एकीकृत कृषि प्रणाली के उद्देश्य: एकीकृत कृषि प्रणाली का प्राथमिक लक्ष्य साल भर स्थिर और सुसंगत आय बनाए रखना है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य उद्देश्य निम्नलिखित है- • एकीकृत कृषि प्रणाली के माध्यम से उत्पादकता की बहाली या सुधार से कृषि-पारिस्थितिकी संतुलन सुनिश्चित करना। • प्राकृतिक फसल प्रणाली प्रबंधन के माध्यम से कीट-पतंगों, बीमारियों और खरपतवार की आबादी को दूर रखना और उन्हें तीव्रता के निम्न स्तर पर रखना। • समाज को स्वस्थ भोजन और स्वच्छ वातावरण प्रदान करने के लिए रसायनों के उपयोग को कम करना। • वर्तमान समय में होने वाली अधिक मांग के अनुसार जैविक खाद्य पदार्थों का उत्पादन।

एकीकृत कृषि प्रणाली का दृष्टिकोण: एकीकृत कृषि प्रणाली के दृष्टिकोण को ''कृषि आय, पारिवारिक पोषण और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के टिकाऊ और पर्यावरण अनुकूल सुधार के लक्ष्य के साथ उन्नत कृषि प्रबंधन उपकरणों के साथ न्यूनतम प्रतिस्पर्धा और अधिकतम पूरकता के कार्डिनल सिद्धांतों का उपयोग करके दो या दो से अधिक घटकों का विवेकपूर्ण मिश्रण'' के रूप में वर्णित किया जा सकता है। एकीकृत कृषि प्रणाली एक ऐसी प्रणाली है जिसमें निम्नलिखित लक्ष्य अपनाए जाते हैं:-

• भारत के कृषि क्षेत्र में उभर रहे मुद्दों और समस्याओं से निपटने के लिए एक एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता है। विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों के लिए खेती के तरीकों की लाभप्रदता बढ़ाने के लिए सबसे प्रभावी उपकरण एकीकृत कृषि प्रणाली है। वास्तव में, हमारे पिछले अनुभव से पता चला है कि फसल से होने वाली कमाई ही उत्पादकों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है। • दूर दराज के क्षेत्रों में बढ़ते उपभोक्ता खर्च के परिणाम स्वरूप अपने जीवन स्तर को ऊपर उठाने के लिए किसानों की नकदी की जरूरतों में सुधार हुआ है। किसानों को अपनी आय और भोजन की जरूरतों को पूरा करने के लिए पशुधन, फल, फूल और औषधीय पौधों की खेती, मधुमक्खी पालन और मत्स्य पालन जैसे माध्यमिक और तृतीयक उद्यमों को अपनाना पड़ा है। लेकिन इन एकीकृत कृषि प्रणालियों को इस तरह से तैयार और डिजाइन करना होगा जिससे खेत पर ऊर्जा दक्षता में पर्याप्त सुधार हो और करीबी चक्रों के माध्यम से तालमेल को अधिकतम किया जा सके। • पोषण संबंधी सुधार के अलावा कृषक परिवारों की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करना। • उपलब्ध संसाधनों का सबसे कुशल उपयोग करके और कचरे का उचित तरीके से पुनर्चक्रण करके परिवार की आय में वृद्धि करना।

वर्तमान कृषि की समस्याएं • कृषि की विकास दर स्थिर या घटती रहती है। • तेजी से शहरीकरण के कारण शुद्ध कृषि योग्य क्षेत्र में कमी। • पर्यावरण प्रदूषण और ग्रीनहाउस गैसों का बढ़ना। • अंधाधुंध उपयोग के कारण भूजल स्तर में गिरावट। • बढ़ती जनसंख्या के कारण भूमि जोत में कमी। • चारे की कमी के कारण उत्पादन लागत में वृद्धि। • पारंपरिक प्रथाओं के कारण कम आय वाले खेत। • एकल कृषि प्रणाली अपनाने के कारण बेरोजगारी में बढ़ोत्तरी। • बड़े पैमाने पर प्रवासन।

एकीकृत कृषि प्रणाली के लाभ: सामान्य तौर पर, एकीकृत कृषि प्रणाली किसानों के जीवन स्तर को बढ़ाकर उन्हें लाभान्वित करता है और उनकी सामाजिक आर्थिक उन्नति में योगदान देता है। एकीकृत कृषि प्रणाली के अन्य लाभ निम्नलिखित है - • खेत की उत्पादकता में वृद्धि के परिणामस्वरूप प्रत्येक इकाई क्षेत्र के लिए प्रति समय आर्थिक उपज बढ़ जाती है। • कचरे के पुनर्चक्रण के कारण उत्पादन लागत में कमी आई जिससे लाभप्रदता में सुधार हुआ। • अधिक आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण घटकों को कृषि उत्पादन में एकीकृत कर शामिल किया जा रहा है, जिसके परिणाम स्वरूप स्थिरता में सुधार हुआ है। • विभिन्न कृषि घटकों का एकीकरण कुपोषण की समस्या को हल करने का अवसर प्रदान करता है क्योंकि विभिन्न प्रकार के खाद्य उत्पादों का उत्पादन किया जाता है। • किसानों को विविध खाद्य पदार्थों तक आसान पहुंच है। • उत्पादन के लिए कृषि अपशिष्टों का पुनर्चक्रण बेहतर अपशिष्ट प्रबंधन में मदद करता है और पर्यावरण प्रदूषण को रोकता है। • एकीकृत कृषि प्रणाली में किसान के पास पूरे वर्ष नकदी प्रवाह रहने से संसाधनहीन किसान समाज में स्थापित हो जाते हैं। • जैविक कचरे के पुनर्चक्रण से रासायनिक उर्वरक के प्रयोग को कम किया जा सकता है जिससे मिट्टी के स्वास्थ्य में भी सुधार होगा। • कृषि प्रणाली में चारे, चारागाह और वृक्ष प्रजातियों को शामिल करके पशुधन के लिए चारे के संकट को कुछ हद तक हल किया जा सकता है। • वनवर्धन-घटक ईंधन और लकड़ी के स्रोत के रूप में कार्य करता है। • लकड़ी के उत्पादन में वृद्धि से वन संसाधनों पर दबाव कम हो जाता है।

निष्कर्ष: भारतीय परिदृश्य में एकीकृत कृषि प्रणाली की लाभप्रदता और व्यवहार्यता पर किए गए विभिन्न अध्ययनों ने युवा पीढ़ी के लिए स्थिरता, रोजगार सृजन और उद्यमशीलता योग्यता के प्रति एक आशाजनक परिप्रेक्ष्य प्रदर्शित किया है। दुनिया भर में किसानों द्वारा एकीकृत दृष्टिकोण की सफलता विकासशील देशों के छोटे और सीमांत किसानों को उनकी अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने और उन्हें स्थानीय और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम बनाने की एक दूरदर्शी आशा देती है। एकीकृत कृषि प्रणाली के परिणामस्वरूप काम के अवसरों में वृद्धि और कृषि संसाधनों के कुशल उपयोग से कृषक परिवारों के लिए उत्पादकता में वृद्धि हुई है। कृषि उत्पादन प्रणाली की दीर्घकालिक व्यवहार्यता और लाभप्रदता सुनिश्चित करने के लिए एकीकृत कृषि प्रणाली आवश्यक है। किसी पौधे की लगभग 90 प्रतिशत से 95 प्रतिशत पोषण संबंधी जरूरतें संसाधनों के पुनर्चक्रण से पूरी होती हैं, जिससे खेती की लागत कम हो जाती है और लाभप्रदता बढ़ जाती है। एकीकृत कृषि प्रणाली विभिन्न कृषि उद्यमों के लिए कम लागत प्रदान करता है जिससे बेहतर लाभ और कृषि आय में वृद्धि होती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कृषि पर जलवायु परिवर्तन प्रभाव और उनका समाधान

राजा भैया, सोनाली श्रीवास्तव
आनमिश त्यागी, जैनेन्द्र प्रताप
जावेद, अमन श्रीवास्तव

पीएचडी रिसर्च स्कॉलर, अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन
विभाग आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्यौगिकी
विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

परिचय: संयुक्त राष्ट्र की जलवायु रिपोर्ट में बताया गया है कि जलवायु परिवर्तन का पर्यावरण के सभी पहलुओं के साथ-साथ वैश्विक आबादी के स्वास्थ्य और कल्याण पर व्यापक प्रभाव पड़ रहा है। जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ता तापमान हिम गलन में तेजी ला रहा है, जिससे समुद्र का जल स्तर बढ़ रहा है और बाढ़ एवं कटाव की घटनाओं में वृद्धि हो रही है। विश्व मौसम विज्ञान संगठन की अगुवाई में तैयार रिपोर्ट में जलवायु परिवर्तन के भौतिक संकेतों जैसे भूमि और समुद्र के तापमान में वृद्धि, समुद्र के जल स्तर में वृद्धि और बर्फ के पिघलने के अलावा सामाजिक-आर्थिक विकास, मानव स्वास्थ्य, प्रवास और विस्थापन, खाद्य सुरक्षा और भूमि तथा समुद्र के पारिस्थितिक तंत्र पर प्रभाव का दस्तावेजीकरण किया गया है। जीवाश्म ईंधन के दहन से ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन होता है जो पृथ्वी के चारों ओर लिपटे एक आवरण की तरह काम करता है। यह सूर्य की ऊष्मा को जब्त करता है और तापमान बढ़ाता है।

जलवायु परिवर्तन से कृषि पर प्रभाव: जलवायु परिवर्तन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से एक पारिस्थितिकी तंत्र को भी प्रभावित करता है। जलवायु में परिवर्तन भूजल पुनर्भरण, जल चक्र, मिट्टी की नमी, पशुधन और जलीय प्रजातियों को प्रभावित करेगा। जलवायु में परिवर्तन से कीटों और रोगों की घटनाओं में वृद्धि होती है, जिससे फसल उत्पादन में भारी नुकसान होता है। **जलवायु परिवर्तन के कारण कृषि क्षेत्र और भी कई तरह से प्रभावित हो सकता है, जैसे कि:**

■ मृदा में होने वाली प्रक्रियाओं एवं मृदा-जल के संतुलन को जलवायु परिवर्तन प्रभावित करता है। मृदा-जल के संतुलन में अभाव आने के कारणवश सूखी मिट्टी और शुष्क होती जाएगी, जिससे सिंचाई के लिये पानी की माँग बढ़ जाएगी। ■ जलीय-चक्रण को प्रभावित करने के परिणामस्वरूप कहीं अकाल तो कहीं बाढ़ का खतरा बढ़ जाता है, जिससे फसलों को भारी तादाद में नुकसान पहुँचता है। ■ कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा 450 पीपीएम (पार्ट्स पर मिलियन) तक पहुँच गई है। कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि कुछ फसलों जैसे कि गेहूँ तथा चावल, जिनमें प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया सी- 3 माध्यम से होती है, के लिये लाभदायक है, क्योंकि ये प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया को तीव्र करती है एवं वाष्पीकरण के द्वारा होने वाली हानियों को कम करती है। परंतु इसके बावजूद कुछ मुख्य खाद्यान्न फसलों जैसे गेहूँ की उपज में महत्वपूर्ण गिरावट पाई गई है, जिसका कारण है तापमान में वृद्धि। उच्च तापमान फसलों के वृद्धि की अवधि को कम करता है, श्वसन क्रिया को तीव्र करता है तथा वर्षा में कमी लाता है। ■ अनियमित वर्षा, बाढ़, अकाल, उच्च तापमान, चक्रवात आदि की संख्या में बढ़ोतरी, कृषि जैव विविधता के लिये भी संकट पैदा कर रहा है। ■ बागवानी फसलें अन्य फसलों की अपेक्षा जलवायु परिवर्तन के प्रति अतिसंवेदनशील होती हैं। ■ उच्च तापमान सब्जियों की पैदावार को भी प्रभावित करता है। ■ जलवायु परिवर्तन अप्रत्यक्ष रूप से भी कृषि को प्रभावित करता है जैसे खरपतवार को बढ़ाकर, फसलों और खरपतवार के बीच स्पर्द्धा को तीव्र करना, कीट-पतंगों तथा रोगजनकों की श्रेणी का विस्तार करना इत्यादि।

समाधान

■ वन्यजीव विरासत शहरों पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिये। साथ ही राष्ट्रीय उद्यानों और अभयारण्यों के निकट स्थित सवाई माधोपुर, भरतपुर, चिकमगलूर और जबलपुर आदि जैसे शहरों को उन्नत अपशिष्ट पुनर्चक्रण प्रक्रियाओं के साथ ग्रीन स्मार्ट शहरों में परिवर्तित कर किया जा सकता है। ■ कृषि अनुसंधान कार्यक्रमों के तहत शुष्क भूमि अनुसंधान पर पुनः ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। इसके तहत ऐसे बीजों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये जो सूखे जैसी स्थिति में फसल उत्पादन जोखिम को 50% तक कम कर सकते हैं। ■ गेहूँ की फसल रोपण के समय में कुछ फेरबदल करने पर विचार किया जाना चाहिये। एक अनुमान के अनुसार, ऐसा करने से जलवायु परिवर्तन से होने वाली क्षति को 60-75% तक कम किया जा सकता है। ■ किसानों को मिलने वाले फसल बीमा कवरेज और उन्हें दिये जाने वाले कर्ज की मात्रा बढ़ाने की आवश्यकता है। सभी फसलों को बीमा कवरेज देने के लिये इस योजना का विस्तार किया जाना चाहिये। फसल बीमा के लिये ग्रामीण बीमा विकास कोष का दायरा बढ़ाया जाना चाहिये। कर्ज पर लिये जाने वाले ब्याज पर किसानों को मिलने वाली सब्सिडी को सरकार की सहायता से बढ़ाया जाना चाहिये। इस संबंध में सरकार द्वारा हाल ही में लघु और सीमांत किसानों को प्रतिमाह दी जाने वाली सहायता राशि एक स्वागत योग्य कदम है। ■ वन धन योजना को जिस प्रकार राजस्थान में राज्य सरकार द्वारा अपनाया गया है, इसे ठीक उसी तरह गैर-संरक्षित (मौजूदा राष्ट्रीय उद्यानों और अभयारण्यों के बाहर) वनों को बचाने हेतु एक ग्रीन मिशन की तरह अपनाया जा सकता है। ■ सार्वजनिक-निजी भागीदारी के तहत वन्यजीव पर्यटन को भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिये। इससे पिछड़े जिलों में अंतर करते हुए संरक्षित क्षेत्रों को बढ़ाने में मदद मिलेगी। ■ जलवायु परिवर्तन का प्रभाव भारत की खाद्य सुरक्षा को प्रभावित करेगा और इससे हमारे पशुधन के लिये चारे की आपूर्ति में भी कमी आएगी। ■ विवेकपूर्ण निवेश और नीतिगत सुधार भारत को जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीला बनाने में मदद कर सकते हैं।

जलवायु स्मार्ट कृषि: जलवायु-स्मार्ट कृषि विकसित करने की ठोस पहल देश में की गई है और इसके लिये राष्ट्रीय स्तर की परियोजना भी लागू की गई है। यह एक एकीकृत दृष्टिकोण है, जिसमें फसली भूमि, पशुधन, वन और मत्स्य पालन के प्रबंधन का प्रावधान होता है। यह परियोजना खाद्य सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन की परस्पर चुनौतियों का सामना करने के लिये बनाई गई है।

तीन परिणामों पर आधारित

1. **उत्पादकता में वृद्धि:** खाद्य और पोषण सुरक्षा में सुधार के लिये खाद्यान्नों का अधिक उत्पादन और दुनिया के 75% गरीबों की आय को बढ़ाना जो ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं और मुख्य रूप से आजीविका के लिये कृषि पर निर्भर हैं।

2. **लचीलेपन में वृद्धि:** सूखा, फसल कीट, बीमारी और अन्य किसी प्रकार के खतरे की चपेट में कमी लाने के साथ कम अवधि वाले मौसम और अनिश्चित मौसम पैटर्न जैसे दीर्घकालिक खतरों के प्रति अनुकूलन क्षमता में सुधार।

3. **कम उत्सर्जन:** उत्पादित प्रत्येक कैलोरी भोजन के लिये कम उत्सर्जन, कृषि हेतु वनों की कटाई न करना और वातावरण से कार्बन अवशोषण के तरीकों की पहचान करना।

शून्य जुताई प्रौद्योगिकी और लेजर भूमि स्तर: परंपरागत खेती की तुलना में शून्य जुताई और लेजर भूमि स्तर के मामले में तकनीकी दक्षता अधिक पाई जाती है। लेजर भूमि स्तर और शून्य जुताई प्रौद्योगिकी पारंपरिक जुताई की तुलना में अधिक टिकाऊ पाई गई है। यह देखने को मिला है कि यदि किसान जलवायु स्मार्ट कृषि प्रौद्योगिकियों को अपनाता है तो उसके जोखिम स्तर में कमी के साथ अपेक्षित आय में वृद्धि होगी। लेकिन जलवायु स्मार्ट कृषि प्रौद्योगिकियों से प्राप्त कई प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लाभों के बावजूद यह अभी तक भारत में लोकप्रिय नहीं हो पाई है। वर्तमान में चल रहे जलवायु परिवर्तन के किसी भी प्रकार के रूपांतरण के लिये जलवायु न्याय की आवश्यकता होगी, जिसमें नीतिगत सुधार शामिल हैं और जो भारत को जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीला बनाने में मदद कर सकते हैं। इस काम को पश्चिम में ग्रीन शहरों के साथ भारत के उभरते स्मार्ट शहरों को जोड़कर संयुक्त अनुसंधान और विकास साझेदारी के विस्तार से अंजाम दिया जा सकता है। जैसे अमेरिका और चीन ने मिलकर स्वच्छ ऊर्जा अनुसंधान केंद्र की स्थापना की है।

यूरोपीय आयोग संयुक्त अनुसंधान केंद्र की रिपोर्ट: दुनिया की आबादी जिस रफ्तार से बढ़ रही है, उस हिसाब से खाद्यान्न उत्पादन नहीं बढ़ रहा। इसके साथ-साथ कृषि भूमि के उपजाऊपन में भी कमी आ रही है। यूरोपीय आयोग के संयुक्त अनुसंधान केंद्र की रिपोर्ट वर्ल्ड एटलस ऑफ डेजर्टीफिकेशन के आँकड़ों के अनुसार आने वाले दो-तीन दशकों में दुनियाभर में खाद्यान्न की कमी हो सकती है। भारत, चीन और उप-सहारा अफ्रीकी देशों में स्थिति सबसे गंभीर होगी। रिपोर्ट के अनुसार, जलवायु परिवर्तन की वजह से प्रदूषण, भू-क्षरण और सूखा पड़ने से पृथ्वी की तीन- चौथाई भूमि क्षेत्र की गुणवत्ता कम हो गई है। यदि ऐसे ही भूमि की गुणवत्ता कम होती रही तो इससे कृषि उपज को नुकसान होगा और वर्ष 2050 तक वैश्विक अनाज उत्पादन में काफी कमी आ सकती है। दुनिया की आबादी 2050 में लगभग नौ अरब हो जाएगी और इसके लिये मौजूदा खाद्यान्न उत्पादन से दोगुने की जरूरत पड़ेगी। भारत जैसे कृषि प्रधान देशों को इसके लिये अभी से नए उपाय करने होंगे। इसके साथ ही अपनी आबादी पर भी लगाम लगानी होगी।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

श्री अन्न बीज उत्पादन तकनीक

जय सिंह बीज विज्ञान और तकनीकी विभाग
शोध छात्र, चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प.)

परिचय

श्री अन्न हम उन्हे कहते है जिनमे शरीर के लिए आवश्यक सभी प्रकार के पोषक तत्वों से भरपूर होते है, जो मनुष्य को रोगों से लड़ने मे सक्षम बनाते हैंद्ध श्री अन्न मे मुख्य रूप से ज्वार, बाजरा, रागी, आदि आते हैं। भारत में मोटे अनाजों के पौधों का प्रमाण सर्वप्रथम सिंधु घाटी सभ्यता से मिला था ज्वार बाजरे का सेवन प्राचीन काल में हमारे पूर्वजों द्वारा किया जाता था, लेकिन धीरे-धीरे इन्हें खाने का चलन बदल गया, जिसके बाद इंसानों का स्वास्थ्य भी कमजोर होने लगा। इसलिए हमें वापस से मिलेट्स को अपनी थाली में जगह देनी चाहिए, और इसे अपने भोजन में शामिल करना चाहिए । श्री अन्न को अब व्यक्ति इम्यूनिटी बूस्टर के रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं, और इसे सुपर फूड के नाम से भी जाना जाता है। कम पोषक मृदा दशाओं में भी उगाए जा सकते हैं। यह उन्हें अप्रत्याशित मौसम पैटर्न और जल की कमी वाले क्षेत्रों के लिये एक उपयुक्त खाद्य फसल बनाता है। भारत, नाइजीरिया और चीन दुनिया में मोटे अनाज के सबसे बड़े उत्पादक देश हैं, जो वैश्विक उत्पादन में संयुक्त रूप से 55% से अधिक की हिस्सेदारी रखते हैं। भारत श्री अन्न का सबसे बड़ा उत्पादक है एवं दूसरा सबसे बड़ा निर्यातक है। एक रिपोर्ट के अनुसार भारत के सात राज्य 85% मिलेट्स का उत्पादन करते है। राजस्थान में सबसे ज्यादा श्रीअन्न उगाया जाता है। क्योंकि मिलेट्स की खेती करने हेतु अन्य फैसलों के मुकाबले कम पानी लगता है। भारत में कर्नाटक, हरियाणा, महाराष्ट्र, हरियाणा, गुजरात और मध्यप्रदेश आदि राज्यों में श्री अन्न का उत्पादन किया जाता है।

जलवायु

- भारत में श्री अन्न को खरीफ मे उगाया जाता है।
- 27-32 डिग्री तापमान में श्रीअन्न अच्छे से उत्पादित किए जाते है
- 50-100 सेंटीमीटर वर्षा श्रीअन्न की खेती के लिए पर्याप्त होती है
- श्री अन्न की खेती शुष्क क्षेत्रों, उष्णकटिबंधीय एवम उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में की जाती है। मोटे अनाज सूखा प्रतिरोधी (drought-resistant) होते हैं, कम जल की आवश्यकता रखते हैं।

खेत का चयन

दोमट अथवा कम उपजाऊ जलोढ़ भूमि श्री अन्न की खेती व बीज उत्पादन अच्छी के लिए मानी जाती है 7 जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

बीज का चयन एवं मात्रा

बीज किसी प्रमाणित संस्था से उच्च गुणवत्ता का लेना चाहिए। रागी के लिए 12-15 किलो, बाजरा हेतु 3-4 किलो, ज्वार के लिए 8-10 किलो, कोदो, कुटकी, कँगनी

और चीना के लिए 12-15 किलो बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है बीज को कतारों मे बोना चाहिए जिससे निराई गुड़ाई करने मे आसानी रहती है।

प्रथक्करण दूरी: बाजरा के लिए 400 मीटर आधारीय बीज व 200 मीटर प्रमाणीकृत बीज, ज्वार के लिए 200 मीटर आधारीय बीज व 100 मीटर प्रमाणीकृत बीज, कुटकी, कोदो, चीना, कँगनी, सांवा 3 मीटर आधारीय बीज व 3 मीटर प्रमाणीकृत बीज प्रथक्करण दूरी रखते है।

खाद और उर्वरक: श्री अन्न कम उर्वर मृदा मे अच्छे से उगाए जा सकते है, 40:20:20 अनुपात में N:P:K उपयोग करने से उपज बदती है।

सिंचाई: फसल की मांग के अनुसार 4-5 सिंचाई समय-समय पर की जानी चाहिए।

रोगिंग: खेत मे मुख्य फसल प्रजाति के अतिरिक्त अन्य प्रजाति के पौधों को खेत से हटा देते है जिससे प्रजाति की गुणवत्ता बनी रहे 7

बीजों की कटाई, गहाई, सफाई और भंडारण

बीजों को फसल की दैहिक परिपक्वता पर काटा जाना चाहिए। फसल की कटाई के उपरांत गहाई कर बीजों की सफाई कर लेनी चाहिए।

भंडारण

बीजों को स्वच्छ नमी मुक्त स्थान पर भंडारित करते हैं। बीजों को कीटों से बचाने हेतु भंडारणगृह को उचित रसायन का छिड़काव कर कीट मुक्त कर लेते हैं

श्री अन्न के गुण

- श्री अन्न कमजोर भूमि मे उत्पन्न होने मे सक्षम होते हैं
- श्री अन्न तापमानप्रभावी होते हैं
- श्री अन्न को ग्लूटीन मुक्त माना जाता है
- श्री अन्न को कम पानी की आवश्यकता होती है जिसे हम जहां बारिश कम होती है वहां इसे उगाया जा सकता है

श्रीअन्न के सेवन से लाभ

- यह ब्लड शुगर को काम करता है, इसके अलावा ब्लड प्रेशर कंट्रोल करता है।
- डायरिया, कब्ज, अपच पेट के रोग, अल्सर जैसी समस्याओं से छुटकारा दिलाता है। साथ ही साथ इसमें कैंसर जैसी खतरनाक बीमारियों से लड़ने वाले पोषक तत्व पाए जाते हैं।
- श्रीअन्न अनाज को अपनी डाइट में शामिल करने से आपके शरीर को कम मात्रा में अधिक पोषण मिल जाते हैं।
- श्री अन्न अनाजों में फाइबर, पोटैशियम, मैग्नीशियम, आयरन कैल्शियम जैसे अनेकों तत्व भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं, जो हमारे शरीर को मजबूत और हमारे शरीर के आंतरिक अंगों को स्वस्थ रखते हैं।
- इन मोटे अनाजों के उपयोग से शरीर का वजन संतुलित रहता है। इसके अलावा इनमें मौजूद एंटीऑक्सीडेंट गुण शरीर के अंदर से विषैला पदार्थ को बाहर निकलते हैं।

भविष्य मे संभावनाएं

श्रीअन्न मे उपलब्ध पोषक तत्व और रोगरोधक गुणों के कारण भारत मे लगातार मांग बढ़ रही है। श्री अन्न की उच्च गुणवत्ता के कारण पूरे विश्व में इनकी मांग लगातार बढ़ रही है भारत श्री अन्न के निर्यात मे दूसरे स्थान पर आता है भारत से श्री अन्न का निर्यात अमेरिका, सयुक्त अरब अमीरात, ओमान, लीबिया, ब्रिटेन, यमन, ट्यूनीशिया, नेपाल आदि देशों मे होता है श्री अन्न से अनेक प्रकार के व्यंजन जैसे मिलेट मठरी, भोग का खीर, मिलेट चीला, मिलेट इडली, उपमा आदि बनाये जाते है जिसकी मांग लगातार बढ़ रही है।

श्री अन्न के प्रकार

यह मुख्यतः दो प्रकार के होते है-• बड़े दाने वाले-ज्वार, बाजरा, रागी • छोटे दाने वाले-कुटकी, कंगनी, सांवा, कोदो, चेना आदि।

श्रीअन्न का पोषक मान

फसल/पोषक तत्व	ज्वार	बाजरा	रागी	सांवा	कोदो	कँगनी	चेना	कुटकी
प्रोटीन (ग्राम)	70.7-72.6	11.6	7.7	11.2	8.3	12.3	12.5	7.7
शर्करा (ग्राम)	1.9	67	72	65.5	65.9	60.9	70.4	67
वसा (ग्राम)	1.6	4.8-5.0	1.8	3.9	1.4	4	2.9	4.7
रेशा (ग्राम)	-	11.3	15-22	10.1	9.0	8	2.2	7.6
मिनरल (ग्राम)	4.1	2.2	2.7	4.4	2.6	3.3	1.9	1.5
आयरन (मिलीग्राम)	25	8	3.3-1.4	15.2	0.5	2.8	0.8	-
कैल्शियम (मिली ग्राम)	329	42	39.8	11	27	31	14	17
ऊर्जा (किलोकैलोरी)	70.7-72.6	17	15.8	342	309	473	353	341

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

पीएम विश्वकर्मा योजना की पात्रता और लाभ

गौरव कुमार, गौरव कुमार, अरविन्द कुमार शोध छात्र (प्रसार शिक्षा), आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ.प्र.)

योजना

पीएम विश्वकर्मा योजना भारत सरकार द्वारा पारंपरिक कारीगरों और शिल्पकारों को सशक्त बनाने के लिए शुरू की गई है.पीएम विश्वकर्म योजना के तहत पारंपरिक कामगारों को ट्रेनिंग दी जाती है और हर महीने में 500 रुपए की आर्थिक मदद भी मिलती है. इस योजना के तहत कारीगरों को 5-7 दिनों की ट्रेनिंग दी जाती है. इसके लिए स्किल ट्रेनिंग की शुरुआत में ई-वाउचर के तौर पर 15,000 रुपये तक का टूलकिट भी दिया जाता है. इस योजना के अंतर्गत हितग्राहियों को अपना व्यवसाय आगे बढ़ाने के लिए 3 लाख तक का लोन दिया जाता है. पात्रता की उम्र 18 साल या उससे ज्यादा होनी चाहिए। पीएम विश्वकर्मा योजना भारत सरकार द्वारा पारंपरिक कारीगरों और शिल्पकारों को सशक्त बनाने के लिए शुरू की गई है. यह योजना से उन्हें आर्थिक सहायता, प्रशिक्षण और मार्केटिंग में लाभ मिलेगा. पीएम विश्वकर्मा योजना पात्रता मानदंड विश्वकर्मा के अन्तर्गत पांच जातियां गिनी जाती हैं- पांचाल ,बढ़ई, लोहार,शिल्पकार,करमकार । इन जातियों के लोग विश्वकर्मा को अपना इष्टदेवता मानते हैं। वास्तव में विश्वकर्मा एक हिन्दू देवता हैं और उन्हीं के नाम पर विभिन्न प्रकार के शिल्प कार्य करने वाली जातियाँ अपने को 'विश्वकर्म' कहती हैं।

पीएम विश्वकर्मा योजना की पात्रता

- जो लोग अस्त्रकार या मूर्तिकार हैं • अगर आप राजमिस्त्री हैं • जो लोग नाव निर्माता हैं, लोहार हैं
- जो पत्थर तोड़ने वाले हैं • मोची/जूता बनाने वाले कारीगर हैं और दर्जी हैं • अगर आप गुड़िया और खिलौना निर्माता हैं • जो लोग नाई हैं • जो हथौड़ा और टूलकिट निर्माता हैं • जो लोग सुनार हैं • जो लोग ताला बनाने वाले हैं • मालाकार और धोबी हैं
- पत्थर तराशने वाले, फिशिंग नेट निर्माता और टोकरी/चटाई/झाड़ू बनाने वाले लोग आदि।

पीएम विश्वकर्मा योजना का आवश्यक दस्तावेज

- आधार कार्ड • राशन कार्ड • निवास प्रमाण पत्र
- जाति प्रमाण पत्र • बैंक खाता विवरण
- पासपोर्ट साइज फोटो • मोबाइलनंबर • ईमेल आईडी

पीएम विश्वकर्मा योजना का मुख्य उद्देश्य

विश्वकर्मा योजना का मुख्य उद्देश्य देश में कारीगरों को आर्थिक सहायता प्रदान करना है। साथ ही उन सभी कारीगरों 15000 तक के प्रोत्साहन राशि प्रदान करना है। इसके साथ उन सभी कारीगरों को 5: की ब्याज दर पर 300000 तक का लोन देखकर दो किस्तों के माध्यम से उन सभी कारीगरों को आत्मनिर्भर बनाना है। ताकि वे सभी कारीगर अपने जीवन स्तर से आत्मनिर्भर बन सके।

पीएम विश्वकर्मा योजना के लाभ

- कौशल ट्रेनिंग दी जाती है, जिसके बदलै 500 रुपये रोजाना दिए जाते हैं
- 15 हजार रुपये टूलिकट खरीदने के लिए
- कामगारों को 3 लाख तक का लोन दिया जाता है.
- इसेंटिव देने का प्रावधान है
- बिना गारंटी और सस्ती ब्याज दर पर लोन की सुविधा दी जाता है.
- कामगार को सर्टिफिकेट ट्रेनिंग सर्टिफिकेट और आईडी भी दी जाता है.
- कामगार को सर्टिफिकेट ट्रेनिंग सर्टिफिकेट और आईडी भी जाता है. जाता है.
- लोहार, कुम्हार, नाई, मछली पकड़ने वाले, धोबी, मोची, दर्जी सभी कारीगर लाभ लेंगे।
- इस स्कीम का लाभ पारंपरिक कौशल रखने वाले कारीगर जैसे सुनार, लोहार, नाई आदि को मिलता है।
- इस योजना के जरिये एक नया बिजनेस को शुरू करने में आर्थिक मदद मिलती है तो दूसरी तरफ यह कारीगरों और शिल्पकारों की आर्थिक मदद करता है।

निर्माणाधीन झील के भूमि पूजन में कृषि राज्यमंत्री औलख बोले, कहा-

पूरे यूपी में नहीं होगी बिलासपुर जैसी झील, इसकी भव्यता और सुंदरता ही ऐतिहासिक होगी

बिलासपुर में कृषि राज्यमंत्री औलख ने कहा कि नगर में करीब छह करोड़ रुपए की लागत से निर्माण कराई जा रही झील पूरे उत्तरप्रदेश में सबसे बड़ी झील होगी। इसकी सुंदरता ही आकर्षण बनकर ऐतिहासिक होगी। रामपुर जिले के बिलासपुर में शुक्रवार की दोपहर कृषि राज्यमंत्री व क्षेत्रीय विधायक बलदेव सिंह औलख अमृत-2.0 में योजनान्तर्गत नगर के मुख्य चौराहे के समीप निर्माण हो रही झील के भूमि पूजन के दौरान आयोजित

किए गए कार्यक्रम में जनता को संबोधित कर रहे थें। इस दौरान उन्होंने कहा कि नागरिकों को पार्क की सौगात देने के बाद भव्य झील भी बनवाना उनका सपना था और यह सपना भी साकार होते दिखाई दे रहा है।कहा कि यह झील इतनी बड़ी होगी कि पूरे उत्तरप्रदेश में ऐतिहासिक मानी जाएगी।इसके निर्माण होने से नैनीताल व गूलरभोज जाने वाले सैलानियों के लिए भी एक पिकनिक स्पॉट होगा। उन्होंने कहा इस झील की भव्यता और सुंदरता में कोई कसर नही आने दी जाएगी चाहें बजट बढ़ाने का कार्य क्यों नही करना पड़ें। उन्होंने कहा उन्होंने जाम से निबटने के लिए पार्किंग स्थल जनता को समर्पित किया। जिसका लाभ भी मिलता दिखाई दे रहा है। इससे पूर्व उनके द्वारा निर्माण कराए गए अंबेडकर पार्क में आज महिलाएं,बच्चे व बुजुर्ग मॉर्निंग वॉक और इवनिंग वॉक का आनंद ले रहे हैं इससे उन्हें बहुत खुशी मिलती है।उन्होंने कहा जब हम बने थे तो, क्षेत्र की स्थिति चिंताजनक जैसी दिखाई देती थी और अब परिणाम आपके सामने है। बहुत जल्द ही रोडवेज बनकर भी तैयार हो जाएगा जो जनता को समर्पित करना है। इससे पूर्व राज्यमंत्री औलख ने निर्माणाधीन झील के कार्य का संयुक्त रूप से भूमि पूजन में शामिल होकर नींव में ईंट रखकर कार्य को हरी झंडी दी। इस दौरान झील के प्रोजेक्ट मैनेजर दीपक शर्मा ने बताया कि इस कार्य को पूर्ण करने का अक्टूबर तक का लक्ष्य है, मगर छह से सात महीने में पूर्ण होने की संभावना है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

ड्रोन की कृषि में बढ़ती उपयोगिता

जावेद, आनमिश त्यागी, जैनेन्द्र प्रताप
अमन श्रीवास्तव, सोनाली श्रीवास्तव
राजा भैया (पीएचडी रिसर्च स्कॉलर) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

वर्ष 2019 में, कृषि क्षेत्र ने लगभग रु. 19 लाख करोड़ (265 बिलियन अमेरिकी डॉलर) का व्यवसाय किया, जो भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का 18% है और इससे भारत की आधी से अधिक आबादी के लिए रोजगार का सृजन हुआ. हालांकि इस क्षेत्र में कम उत्पादकता (लगभग 3 टन/हेक्टेयर), लाभहीन भूमि (<2 एकड़), उच्चतम गुणवत्ता वाली सामग्री का कम उपयोग, उच्च जैविक नुकसान और मशीनीकरण के निम्न स्तर सहित संरचनात्मक चुनौतियां भी हैं। ड्रोन एक ऐसी ही तकनीक है, जिसमें कृषि क्षेत्र में क्रांति लाने की क्षमता है. इस तकनीक से जरूरत के अनुसार फसल उर्वरकों की सटीक मात्रा एवं सही प्रयोग के बारे में जानकारी मिलती है. इससे सीधे सामग्री के उपयोग की दक्षता में वृद्धि होती है एवं किसान भी सुरक्षित रहते हैं, साथ ही खेती की कुल लागत भी कम होती है। चीन, जापान, आसियान, संयुक्त राज्य अमेरिका और ब्राजील जैसे कई कृषि प्रधान देशों ने कृषि कार्य में ड्रोन का उपयोग करने के लिए तेजी से कदम उठा रहे हैं और कृत्रिम बुद्धिमता (एआई) द्वारा संचालित ड्रोन तकनीक के उपयोग में तेजी लाने के लिए नियामक और संरचनात्मक, दोनों स्तरों पर आवश्यक विकास को प्राथमिकता दे रहे हैं. उदाहरण के लिए, चीन में ड्रोन तकनीक से कृषि क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन हो रहा है. एक्सएजी के शोध के अनुसार ''चीन में फसल प्रबंधन के लिए ड्रोन की तकनीक के उपयोग के बाद उपज में 17-20 प्रतिशत की वृद्धि हुई है. चीन का ड्रोन बाजार 13.8 प्रतिशत की सीएजीआर (चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर) से बढ़ रहा है. इसलिए, चीन की कृषि भूमि पर हर दिन 1.2 मिलियन से अधिक ड्रोन 42,000 ड्रोन उड़ रहे हैं।

ड्रोन और खेती के उचित तरीके: उचित खेती वह तरीका है, जिसके तहत किसान पानी, उर्वरकों और कीटनाशकों की दक्षता को अधिकतम करके कुल उत्पादकता, गुणवत्ता और उपज में सुधार करते हैं. जिन समस्याओं को नीचे से पहचाना नहीं जा सकता है, उन्हें ड्रोन के इस्तेमाल से साफ देखा जा सकता है।

कृषि चुनौतियों के समाधान में ड्रोन कई प्रकार से किसानों की मदद करते हैं:

फसल निगरानी: ड्रोन फसलों पर लगातार निगरानी कर सकते हैं, जिससे फसलों में आने वाली कई जैविक और अजैविक समस्याओं के प्रभाव को न्यूनतम करने में मदद मिल सकती है. ऐसी निगरानी से प्राप्त जानकारी, स्थान-विशेष कृषि और बीज, उर्वरकों आदि के अनुकूल प्रयोग में मदद कर सकती है, जिससे कृषि में स्थायित्व को बढ़ावा मिलेगा।

मिट्टी और कृषि योग्य भूमि के लिए योजना: ड्रोन का उपयोग करके पोषण स्तरों, नमी की मात्रा और अपक्षरण की जांच की जा सकती है, साथ ही इसकी सहायता से सिंचाई, उर्वरक और रोपण कार्यों के लिए मिट्टी और कृषि योग्य भूमि का विश्लेषण भी किया जा सकता है।

खरपतवार, कीट और रोगों से फसलों की सुरक्षा: ड्रोन कीट, खरपतवार और रोग नियंत्रण उत्पादों की सटीक मात्रा में इस प्रकार छिड़काव कर सकते हैं कि फसलों को उनकी सही खुराक मिलती है. उनके प्रयोग के दौरान किसानों के साथ होने वाले जोखिम कम होते हैं और उत्पादों की कुल प्रभावशीलता बढ़ती है, जिससे किसानों को अच्छी उपज प्राप्त होती है।

उत्पादकता: ड्रोन कीटनाशकों और उर्वरकों के छिड़काव जैसे कृषि कार्यों में लगने वाली इंसानी मेहनत को काफी हद तक कम कर सकते हैं, साथ ही वे प्रतिदिन फसलों के बड़े क्षेत्र के लिए उपयोग किए जा सकते हैं. इसके प्रयोग से किसान आसानी से खेती कर सकेंगे, जैविक चुनौतियों से शीघ्रता से निपट सकेंगे और बचे हुए समय में अन्य कार्य कर सकेंगे।

नए सेवा मॉडल: डेटा एकत्र करने और कृषि उत्पादों के प्रयोग में ड्रोन के उपयोग से नए सेवा मॉडल के विकसित होने की संभावना है, जिसमें उर्वरक/दवाएं आदि जैसे फसल उत्पाद बनाने वाली कम्पनियां, ड्रोन संचालकों और अन्य मूल्य श्रृंखला हितधारकों के साथ साझेदारी करके, किसानों को फसल सुरक्षा/पोषण जैसी सेवाएं दे सकती हैं एवं इसके बदले में उनसे शुल्क ले सकती हैं।

ड्रोन के माध्यम से रोजगार के अवसर: ड्रोन के संचालन के लिए विशेष कौशल का होना आवश्यक है, इसलिए प्रशिक्षण के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन की अपार संभावनाएं हैं. यह अनुमान लगाया गया है कि नए जमाने की इन तकनीकों से ग्रामीण क्षेत्रों में 2.1 मिलियन रोजगार उत्पन्न होंगे।

भारत में उपलब्ध टॉप कृषि ड्रोन : ड्रोन मार्केट के जानकारों के मुताबिक, भारत में कृषि ड्रोन का प्रयोग खेती में किसानों द्वारा खूब किया जा रहा है। पिछले कुछ सालों में किसानों की डिपेंडेंसी ड्रोन पर बनी है। खेती में तेजी से ड्रोन की बढ़ती उपयोगिता को देखते हुए आज भारत के मार्केट में बहुत से प्रमुख कृषि ड्रोन उपलब्ध हैं, जो काम की सहूलियत के अनुसार काफी किफायती कीमत रेंज में किसानों को मिल जाते हैं।

मार्केट में उपलब्ध कृषि ड्रोन : मोड 2 कार्बन फाइबर कृषि ड्रोन- इस कृषि ड्रोन के मॉडल का नाम केसीआई हेक्साकॉप्टर है। इसमें एनालॉग कैमरे की तकनीक है, इस कृषि ड्रोन की कीमत 3.6 लाख रूपए है। यह एक बार में 10 लीटर तक खाद एवं कीटनाशक का भार लेकर उड़ सकता है।

एस 550 स्पीकर ड्रोन इसकी ड्रोन: इस कृषि ड्रोन की वजन उठाने की क्षमता 10 लीटर तक है। यह लगभग 10 मिनट के अंदर एक एकड़ भूमि पर खाद और कीटनाशकों का छिड़काव कर सकता है। यह ड्रोन वाटर प्रूफ होता है, जिसकी वहज से इसका इस्तेमाल बारिश के मौसम में भी किया जा सकता है। इसमें जीपीएस और अलर्ट सेंसर सुविधा है। मार्केट में इस कृषि ड्रोन की कीमत 4.5 से 5 लाख के बीच है।

केटी-डॉन ड्रोन: इस कृषि ड्रोन की वजन उठाने क्षमता 10 से लेकर 100 लीटर तक है। इसमें क्लाउड इंटेलिजेंट मैनेजमेंट है। इस कृषि ड्रोन को मैप प्लानिंग फंक्शन और हैंडहेल्ड स्टेशन के साथ डिजाइन किया गया है। बाजार में इस कृषि ड्रोन की कीमत लगभग 3 लाख रुपए से स्टार्ट होती है।

आईजी ड्रोन एग्री: इस कृषि ड्रोन की मार्केट में कीमत लगभग 4 लाख रुपए है। यह ड्रोन काफी तेज गति से उड़ता है। इस ड्रोन की मदद से लगभग 5 से 20 लीटर भार तक का कीटनाशक छिड़काव एक साथ कर सकते हैं।

ड्रोन को प्रभावी रूप से अपनाने के लिए मौजूदा चुनौतियों से निपटना

ड्रोन को प्रभावी रूप से अपनाने के लिए कई चुनौतियों से निपटना आवश्यक है।

नियामक तंत्र: ड्रोन संचालन की निगरानी के लिए नियामक तंत्र अभी भी निर्माणाधीन अवस्था में है. अनुमोदित कीटनाशकों (जो ड्रोन के माध्यम से उपयोग किया जा सकता है) के मामले में, अनुमोदित लेबल के विस्तार की अनुमति देने के लिए दिशानिर्देशों को तेजी से निर्धारित करना आवश्यक है, ताकि किसान खेतों में कीटनाशकों को वितरित करने के लिए ड्रोन को तेजी से अपना सकें।

उड़ान का सीमित समय और सीमित दूरी: लाभों के अलावा, कृषि उद्देश्यों के लिए ड्रोन के उपयोग की कुछ सीमाएं भी हैं. अधिक भार होने के कारण ड्रोन की उड़ान आमतौर पर 20-60 मिनट की होती है. इससे एक बार चार्ज करने पर खेतों के एक सीमित हिस्से पर ही इसका उपयोग हो पाता है, जिसके कारण ड्रोन के संचालन की लागत बढ़ती है. कृषि क्षेत्र में ड्रोन के उपयोग को बढ़ाने के लिए, सरकारी सहायता से सबसे कम वजन वाली उच्च श्रेणी की बैटरी बनाने के लिए चल रहे शोध को तेज किया जाना चाहिए।

प्रभावी वाणिज्यिक मॉडल: ड्रोन खरीदने की शुरुआती लागत, कनेक्टिविटी सुनिश्चित करने, और संचालन की लागत और छोटी जोतों में उसके उपयोग संबंधी कारक को ध्यान में रखते हुए, सरकारी प्रोत्साहनों द्वारा समर्थित एक प्रभावी तंत्र विकसित करने की आवश्यकता है, जो पायलटों को प्रशिक्षित करने के अलावा हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर के क्षेत्र में निवेश आदि करने के लिए प्रोत्साहित करेगी.

ग्रामीण भारत के लिए आगे क्या किया जाना चाहिए?: ड्रोन में किसानों को उनकी फसल की भूमि और संसाधनों को बेहतर और अधिक स्थिर रूप से प्रबंधित करने में मदद करके, भारतीय कृषि प्रणाली को बदलने की काफी क्षमता है. कृषि क्षेत्र में ड्रोन के उपयोग को प्रोत्साहित करने के लिए, ड्रोन निर्माताओं को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है, ताकि कृषि उत्पाद उद्योग के साथ संचालन, प्रशिक्षण केंद्रों और परिचालन का गठजोड़ इस तरह से लागू हो, जिससे अनुपालन की लागत कम हो. ड्रोन और संबंधित सेवाओं की खरीद के लिए सीधे किसानों को भी सब्सिडी दी जा सकती है। ड्रोन को अपनाने के साथ जीवन को आसान और सुरक्षित बनाने के लिए, उत्पाद पंजीकरण, प्राप्ति और संचालन से संबंधित कई समस्याओं का समाधान आवश्यक है। हालांकि यह अभी शुरुआती चरण में है, लेकिन सही सुधारों के साथ, भारत ड्रोन के द्वारा प्रदान की जा रही आधुनिक कृषि क्रांति से मिलने वाले लाभों को प्राप्त करने के लिए तैयार है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

आम फसल में लगने वाले कीट एवं रोग का प्रबंधन

डॉ. रिंकी कुमारी चंद्रजीतभाई चौहान विषय वस्तु विशेषज्ञ
(कीट विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, हैदरगढ़ (बाराबंकी) (उ.प्र.)

परिचय

आम को सभी फलों का राजा कहा जाता है और इसकी खेती भारत में पुराने समय से की जाती है। आम से हमें विटामिन ए और सी काफी मात्रा में मिलते हैं और इसके पत्ते चारे की कमी होने पर चारे के तौर पर और इसकी लकड़ी फर्नीचर बनाने के लिए प्रयोग की जाती है। कच्चे फल चटनी, आचार बनाने के लिए प्रयोग किए जाते हैं और पक्के फल जूस, जैम और जैली आदि बनाने के लिए प्रयोग किए जाते हैं।

हानिकारक कीट ओर रोकथाम

फल की मक्खी

यह आम की एक गंभीर मक्खी है। मादा मक्खियां फल के ऊपरले छिल्के पर अंडे देती हैं। बाद में यह कीड़े फलों के गुद्दे को खाते हैं जिससे फल सड़ना शुरू हो जाता है और झड़ जाता है।

प्रबंधन

प्रभावित फलों को खेत से दूर ले जाकर नष्ट कर दें। 10-18 ट्रैप/हेक्टेयर की दर से मिथाइल युजिनोल ट्रैप लगाएं।

तनाछेदक कीट

इस कीट की इल्लियां पौधों के तने के अंदर ही अंदर घुसकर खाती रहती हैं और अनियमित सुरंग बनती रहती है। इससे पौधा आंशिक या पूर्णरूप से सूख जाता है। यह कीट तनों पर बुने हुए जालों में फंसे उनके मल की मौजूदगी से पहचाना जा सकता है।

प्रबंधन

इस कीट के नियंत्रण हेतु मिटटी का तेल या पेट्रोल या एलुमिनियम फोसफाईड तने में किए छिद्र में डालकर छेद को गीली मिट्टी में बंद कर देना चाहिए।

आम का भुनगा

इसका हम ला ज्यादातर फरवरी-मार्च के महीने में, जब फूल निकलने शुरू हो जाएं तब होता है। यह फलों और पत्तों का रस चूसते हैं। प्रभावित फूल चिपचिपे हो जाते हैं और प्रभावित हिस्सों पर काले रंग की फफूंदी दिखाई देती है।

प्रबंधन

यदि इसका हमला दिखे तो बुप्रोफेज़िन 25 ईसी 1-2 प्रति लीटर पानी डाइमेथोएट 30 इसी 1.6 से 2.0 मिली प्रति लीटर पानी में में मिलाकर पूरे वृक्ष पर स्प्रे करें।

मिली बग

यह फल, पत्ते, शाखाओं और तने का रस चूसकर फसल को नुकसान पहुंचाता है। इसका हमला आमतौर पर जनवरी से अप्रैल के महीने में देखा जाता है। प्रभावित हिस्से सूखे और फफूंदी से भरे दिखते हैं।

प्रबंधन

इसे रोकने के लिए, 25 सेंमी. चौड़ी पॉलीथीन (400 गेज) शीट तने के आस पास लपेट दें ताकि नवंबर और दिसंबर के महीने में मिली बग के नए बच्चों को अंडों में से बाहर निकलने से रोका जा सके। यदि इसका हमला दिखे तो डाइमेथोएट 30 इसी 1.6 से 2.0 मिली प्रति लीटर पानी में में मिलाकर पूरे वृक्ष पर स्प्रे करें।

खर्रा रोग/ पाउडरी मिल्डीऊ

यह रोग ओडीयम मैंजीफेरी नाम फफूंदी से उत्पन्न होता है। फलों और फूलों के भागों पर सफेद पाउडर जैसे धब्बों का हमला देखा जा सकता है। ज्यादा गंभीर हालातों में फल या फूल झड़ने शुरू हो जाते हैं। इसके साथ साथ फल, शाखाओं और फूल के भाग शिखर से सूखने के लक्षण भी नजर आने लगते हैं।

प्रबंधन

फूल निकलने से पहले, फूल निकलने के समय और फलों के गुच्छे बनने के बाद, फफूंदनाशक सल्फर 80 प्रतिशत 2p अथवा मेन्कोजेब 75 प्रतिशत 2p 2-2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से स्प्रे करें।

एंथ्राक्नोस

शाखाओं पर गहरे-भूरे या काले धब्बे नज़र आते हैं। फलों पर भी छोटे, उभरे हुए, गहरे दाग दिखाई देते हैं।

प्रबंधन

1. इसकी रोकथाम के लिए प्रभावित हिस्सों को काट दें और कटे हिस्से पर बोर्डो पेस्ट लगाएं।
2. बोर्डिऑक्स मिश्रण 10 ग्राम प्रति लीटर पानी की स्प्रे करें।
3. एज़ोक्सीस्ट्रोबिन 23 प्रतिशत SC 1 मिली प्रति लीटर पानी की दर से स्प्रे करें।

उत्तर प्रदेश में की जा रही गन्ने की खेती एवं नवाचार प्रक्रिया को समझा फिजी के गन्ना किसानों ने

लखनऊ। फिजी देश के 16 प्रगतिशील गन्ना किसानों ने गन्ना विकास विभाग, मुख्यालय के वरिष्ठ अधिकारियों के साथ आज लाल बहादुर शास्त्री गन्ना किसान संस्थान, उत्तर प्रदेश, लखनऊ के सभागार में बैठक की। फिजी से आये प्रतिनिधि मंडल के साथ आयोजित इस बैठक की अध्यक्षता श्री प्रणय सिंह, अपर गन्ना आयुक्त(प्रशासन) द्वारा की गई।

प्रतिनिधि मंडल को सम्बोधित करते हुए श्री प्रणय सिंह ने कहा कि गन्ना विकास विभाग द्वारा अपने हितधारकों के पक्ष में निरन्तर कड़ी मेहनत की गई जिसका प्रतिफल है कि विभाग द्वारा गन्ना उत्पादन, गन्ना पेराई, चीनी उत्पादन, चीनी परता एवं गन्ना मूल्य भुगतान आदि के क्षेत्र में ऐतिहासिक रिकार्ड दर्ज किये हैं। उन्होंने एस्क्रो एकाउन्ट, स्मार्ट गन्ना किसान(एस.जी.के.) आदि के क्षेत्र में हुए क्रांतिकारी परिवर्तनों से प्रतिनिधि मंडल को अवगत कराया तथा फिजी देश में गन्ना विकास एवं चीनी उद्योग के विषय में प्रतिनिधि मंडल से विस्तृत संवाद किया। बैठक में प्रतिनिधि मंडल के सदस्यों द्वारा फिजी देश में चीनी उद्योग के समक्ष आ रही कठिनाईयों, तकनीकी चुनौतियों, प्रायोगिक ज्ञान की सीमाओं, अनुसंधान प्रविधि, गन्ना आपूर्ति इत्यादि विभिन्न मुद्दों पर चर्चा की गई। प्रतिनिधि मंडल ने गन्ना विकास, राज्य परामर्शित गन्ना मूल्य निर्धारण प्रक्रिया, सहकारी गन्ना विकास समितियों की कार्य प्रणाली, ई-गन्ना ऐप, गन्ना शोध आदि के बारे में विस्तृत विचार-विमर्श कर जानकारी ली। फिजी से आये 16 प्रगतिशील गन्ना किसानों, 02 परिषद सदस्यों एवं जनरल मैनेजर ऑपरेशन्स श्री सुनील देव चौधरी (टीम लीडर) के साथ राष्ट्रीय शर्करा संस्थान, कानपुर के नोडल अधिकारी श्री बृजेश सिंह, टेक्निकल ऑफिसर द्वारा बैठक में प्रतिभाग किया गया। इस बैठक में श्री वी.के. शुक्ल, अपर गन्ना आयुक्त(विकास) ने गन्ना विकास की प्रक्रिया यथा-जिला योजना, राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन, पंचामृत योजना, महिला स्वयं सहायता समूह एवं गन्ना प्रजाति के बारे में विस्तृत चर्चा की। इसी क्रम में श्री विश्वेश कनौजिया, अपर गन्ना आयुक्त(क्रय) द्वारा उ.प्र. गन्ना (पूर्ति एवं खरीद विनियमन) अधिनियम, 1953 से सम्बन्धित नियमावली 1954, गन्ना सर्वेक्षण, चीनी मिलों की पेराई क्षमता, गन्ना एवं चीनी उत्पादन, ऐस्क्रो एकाउन्ट मैकेनिज्म, जले गन्ने की आपूर्ति एवं गन्ना मूल्य भुगतान की प्रक्रिया के संबंध में फिजी के किसानों के साथ नियम संगत प्रस्तुतीकरण किया। श्री आर.डी. द्विवेदी, उप गन्ना आयुक्त(समिति) ने स्मार्ट गन्ना किसान(एस.जी.के.), ई-गन्ना ऐप पोर्टल के माध्यम से पर्ची निर्गमन एवं गन्ना आपूर्ति की व्यवस्था पर विस्तृत प्रकाश भी डाला।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

नेहा कन्नौजिया कृषि विस्तार एवं संचार विभाग
चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर

एलोबेरा की खेती से किसानों की आय में हो सकती है वृद्धि

- Botanical name: Aloe barbadensis mill.
- Family:Aloeaceae
- एलो मुख्य रूप से दक्षिणी अफ्रीका के शुष्क क्षेत्रों व दक्षिणी यूरोप के भूमध्य सागरीय क्षेत्र और कैनरी द्वीप समूह के मूल निवासी के बीच पाया जाता है!
- दुनिया भर में एलोवेरा की 250 से 350 प्रजातियां है! एलोवेरा को कम से कम शताब्दी (BC) के बाद से महत्व दिया गया है!जब की अरस्तू ने सिकंदर महान से हिंद महासागर में सोकोट्र को जीतने का अनुरोध किया था!
- क्योंकि यहां कई प्रजातियां उगती है!
- मुसब्बर को "औषधीय पौधा" के रूप में जाना जाता है क्योंकि पतियों के अंदर का जेल कई त्वचा रोगों के इलाज के लिए बाहरी रूप से उपयोग किया जाता है! लेकिन अगर आपको औषधीय गुणों के कारण इस पौधे की कभी जरूरत नहीं पड़ी तो भी आप इसके सजावटी गुणों की सराहना करते है! यह रसीला पौधा अपने त्वचा उपचार गुणों के लिए दुनिया भर में उगाया जाता है!

Botanical Description

- ऐलोवेरा एक उथली जड़ प्रणाली वाला एक छोटा, तना रहित, शाकाहारी बारहमासी पौधा है!
- एलो एलोएसी परिवार की एक मोटी दिखने वाला, जेरोफाइटिक,रसीली,बारहमासी जड़ी बूटी है!जो दुनिया के कई हिस्सों में पाई जाती हैं! हालाकि,इस जींस को तथा कथित अमेरिकन एलो के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए जो की एगेव जींस से संबंधित है! रसीली पतियां अपने तनों के शीर्ष पर एकत्रित होती है! भूरे हरे रंग की और चमकीली फैली हुई है! युवा होने पर धब्बेदार 20 से 50 सेमी लंबी होती है! 3 से 5 सेमी चौड़ा, नुकीला सिरा धीरे धीरे पतला होता हुआ 1 से 2.5 सेमी मोटा,अंदर कांटेदार उभार और कड़वा लेटेक्स होता है!
- फूल 5 से 100 सेंमी ऊंचे केंद्रीय फूल के डंठल पर बेलनाकार टर्मिनल रेसमेम्स में लगते है! पीला पेरिंथ बिखरे हुए ब्रेकेट्स के साथ लगभग 25ष्द्ध लंबे छह पालियों में विभाजित है!
- प्रत्येक फूल में छह उभरे हुए पुंकेसर और लीन लंबी शैली वाले अंडाशय कहलाते है!
- इस प्रजाति के सब पतियों के आकार और टावरों के रंग में भिन्न होते है!एलो बारबेडेंसिस की प्रजाति पर अधिकतर पीले से नारंगी रंग के फूल पाए जाते है!

Species:- प्रजातियां भारत में लगभग चार प्रजातियां पेश की गई है, जिनमें से एलो बारबोडेंसिस नाम देश के लगभग सभी हिस्से में प्राकृतिक रूप से विकसित हो गई है! अन्य तीन प्रजातिया भी कुछ स्थानों पर जंगली रूप से विकसित हो रही है! ए. बारबडेंसीस, वेर, चिनेसिस,मराष्ट्र, कामताका,तमिलनाडु,केरल में आम है! आंध्र प्रदेश, और मध्य प्रदेश एक बरबोडेंसीस संस्करण है! लेटेरोलिस तमिलनाडु में सिंगल समुंद्र तट से लेकर रामेश्वरम तक पाया जाता है!

- एलोबेरा की सभी प्रजातियां रसीले और ऑर्नेमेंटल

पौधो के बीच काफी लोकप्रिय है, और उनकी तीव्र कठोर और ऊबड़ व खाबड़ आदत के कारण उन्हें विभिन्न प्रकार की जलवायु और मिट्टी की स्थितियों में उगाया जा सकता है!

- किसान अपनी बंजर भूमि व अन्य बंजर भूमि में उगा सकते है! और न्यूनतम इनपुट लागत के साथ अपनी आय बढ़ा सकते है!
- आज कल एलोवेरा अपने सुस्थापित औषधीय उपयोगो के अलावा कास्मेटिक उदेश्यो के लिए भी तेजी से महत्वपूर्ण होता जा रहा है!

Major constituents

- एलोइन, एलोसिस ए, बी,एलोसिन,ग्लैकोसिन, बार्बलियन, आइसोबार्बलियन,एन्थाकिवनो, ग्लैकोसाइड्स, इमोडीन,1-8 डाईहाईड्राक्सी, आंथ्रेसीन डेरिवेटिव!
- Medicinal uses:इसका उपयोग कड़वा,रेचक, कि कीटनाशक,वैकल्पिक,कामोतेजक,कृमिनाशक,रक्त शोधक,के रूप में किया जाता है! पत्ती के गुद्दे का उपयोग!
- उपयोग यकृत विकार,गठिया,त्वचा विकार, आंतो के किंडो के इलाज के लिए किया जाता हैं!
- इसका उपयोग वोक्टिनल ऑपरेशन के बाद गूदा विदर की उपस्थिति में निकासी उपचार के लिए किया जाता है!
- ताजा एलोवेरा जेल अपने घरेलू औषधीय महत्व के लिए जाना जाता है!
- इस कारण से एलोवेरा के जलन,प्राथमिक उपचार या औषधि पौधा भी कहा जाता हैं!
- पत्तो का ताजा रस वातशमक और शीतल होता है
- इसका उपयोग आखों की समस्याओं,प्लीहा और यकृत रोगों में किया जाता है!
- एलोइन का उपयोग मोटापा रोधी तैयारियों में भी किया जाता है!
- एलो जेल और कभी कभी दवा एलो का उपयोग मैश्चराइज इमोलिएंट या घाव के रूप में किया जाता है!
- विभिन्न सौंदर्य प्रसाधनों और फार्मास्यूटिकल फरमुलेशन में उपचारक है!
- एलो या एलोइन के अर्क का उपयोग संस्क्रीन, एक्स-रे वर्न त्वचा रोग में किया जाता है! और अन्य कास्मेटिक तैयारी में उपयोगी है! भोजन के रूप में मुसब्बर के अर्क का उपयोग मुख्य रूप से अल्कोहलिक और गैर अल्कोहलिक पेय पदार्थो में और कैंडी में कड़वा स्वाद देने के लिए स्वाद बढ़ाने वाले घटक के रूप में किया जाता है!
- इसे स्प्रिट में घोला जाता है,इसका उपयोग बालों के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए हेयर डाई के रूप में किया जाता है!
- पत्तो के रस में थोड़ा सा ओमप्रोम मिलाकर माथे पर लगाने से आराम मिलता है,सिरदर्द में!
- कहा जाता है कि पत्तों के रस का लेप ट्यूमर के लिए लोप उपचार है! जिसका उपयोग कांडिलोमाटा, भस्मो और अन्य आसामान्य त्वचा वृद्धि और कैंसर या होंठ,गूदा, स्तन,स्वर्मत्र,यकृत,नाक,पेट,गर्भाशय के ट्यूमर के लिए भी किया जाता है!

- Climate
- ऐलोवेरा विभिन्न प्रकार की जलवायु परस्थितियों में पनप सकता है!
- इस पौधे में व्यापक अनुकूलन क्षमता है, और इसे पूरे देश में बढ़ते हुए देखा जा सकता है!
- इसे गर्म, आर्द या शुष्क जलवायु में उगाया जा सकता है लेकिन इसे ठंड और कोहरे से बचाने की जरूरत होता है!
- Soil
- एलो एक द्रढ पौधा है और यह विभिन्न प्रकार की मिट्टी पर उगता हैं!
- यह 8.5 पीएच तक के पीएच वाले मैदानी इलाकों की रेतीली, रेतीली तटीय से दोमट मिट्टी में अच्छी तरह से उगता है! जल भराव की स्थिति इसकी खेती हेतु उपयुक्ता नहीं है!

Land preparation

- भूमि की तैयारी के दौरान गहरी जुताई की कोई आवश्यकता नहीं है क्यूंकि जड़ प्राणली 20ष्द्ध स्तर से नीचे नही घुसती है!
- खेती से पहले भूमि की दो बार जुताई करनी चाहिए और खेत को अच्छी तरह से खरपतवार से साफ करना चाहिए!
- Improved cultivars:- IC 111 279, IC 111 267, IC 111 272 और IC 111 227.
- Nursery Raising:-
- ऐलोवेरा के पौधा को बीज, जड़ चूमने वाले और प्रकंद से नर्सरी में उगाया जा सकता है!
- 30cm की दूरी पर लगाया जाता है!
- जब वे 3 से 5 पत्ती की अवस्था में होते है तब..!
- Propagation:-
- वानस्पतिक प्रसार द्वारा विशेष रूप से जड़ चूसने वाले या प्रकंद या कटिंग द्वारा प्रचारित किया जा सकता है!
- रोपाई दूरी
- पौधो को 60×30 cm या 60×45cm के अंतर पर उगाया जाता है!
- N P K के 150kg/ha

Irrigation

- मिट्टी की नमी के अनुसार सिंचाई करनी चाहिए!
- आम तौर पर प्रति वर्ष 4 से 5 सिंचाई की जरूरत है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

गन्ने की उत्पादन और इथेनॉल : स्वच्छ ऊर्जा का एक नया पहलू

डॉ. रणधीर यादव टीचिंग एसोसिएट (गेस्ट फैकल्टी) कृशि अर्थशास्त्र विभाग, कृषि महाविद्यालय जमुनाबाद कैम्पस लखीमपुर खीरी, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

सचिन कमार वर्मा एवं आदित्य भूषण श्रीवास्तव शोध छात्र कृषि अर्थशास्त्र विभाग आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय अयोध्या (उ.प्र.)

गन्ना जो भारत में प्रमुख खाद्य और उद्योगिक उत्पाद बनता है। न केवल विभिन्न परिर्वतनों का एक अभिन्न हिस्सा है बल्कि इसका उपयोग ऊर्जा उत्पादन के क्षेत्र में भी किया जा रहा है। गन्ने से प्राप्त होने वाला एक और महत्वपूर्ण उत्पाद है इथेनॉल, जो स्वच्छ, पुनर्नवीनी और सुस्त ऊर्जा स्रोत के रूप में उत्कृष्ट है।

गन्ने की उत्पादन प्रक्रिया

गन्ने की उत्पादन प्रक्रिया एक सुगंधित और सर्दीय फसल की प्रक्रिया है जो विभिन्न भागों में प्रदेशों में किया जाता है। गन्ने की खेती विभिन्न परिस्थितियों के लिए अनुकूल है और यह उच्च उत्पादन वाली फसलों में से एक है। गन्ने की पैदावार उच्च गुणवत्ता वाले चीनी और पौष्टिक पारदर्शिता के लिए अपनी पहचान बना रखती है। गन्ने को काटने के बाद, यहां तक कि उसकी पत्तियां और कच्चा गन्ना भी उपयोग किया जाता है। इसके बाद, गन्ने का रस निकाला जाता है जिसमें शुगर एवं अन्य ऊर्जा उत्पादक तत्व होते हैं।

इथेनॉल का उत्पादन

गन्ने से निकाले गए रस में शुगर को निकालने के बाद शेष बची हुई चीनी और पुल्प को आगे की प्रक्रिया के लिए उपयोग किया जाता है। इस विशेष प्रक्रिया को कमीज्मेंटेशन कहा जाता है जिसमें बैक्टीरिया या एंजाइम का उपयोग होता है। इस प्रक्रिया द्वारा इथेनॉल और कार्बन डाइऑक्साइड उत्पन्न होता है। यह प्रक्रिया एक स्वच्छ और प्रदूषणमुक्त प्रक्रिया है, जो वातावरण को हानि पहुंचाने में कमी करती है।

इथेनॉल के लाभ

स्वच्छ ऊर्जा स्रोत • इथेनॉल गैसोलीन के स्थान पर एक स्वच्छ ऊर्जा स्रोत है जो पेट्रोलियम के उपयोग को कम करने में मदद करता है। • यह उत्पन्न होने में पेट्रोलियम के समान ऊर्जा प्रदान करता है लेकिन इसका उपयोग करने से प्रदूषण कम होता है।

पर्यावरण में कमी

इथेनॉल का उपयोग करने से असामान्य प्रदूषण नहीं होता जिससे हम प्रदूषण को कम करने में मदद करते हैं। गन्ने से इथेनॉल बनाने की प्रक्रिया में पानी का उपयोग होता है जो इसे और भी प्रदूषणमुक्त बनाता है।

ऊर्जा स्वावलंबन

इथेनॉल एक पुनर्नवीनी ऊर्जा स्रोत है जो गन्ने की तेजी से बढ़ती हुई फसलों के साथ मिलता है। यह सुनिश्चित करता है कि इथेनॉल की सप्लाई में कोई कमी नहीं होती जिससे हम स्थिरता बनाए रख सकते हैं।

कृषि सेक्टर का समर्थन

- गन्ने के उत्पादन में वृद्धि होने से किसानों को अधिक आय मिलती है जिससे उनकी स्थिति में सुधार होता है।
- इथेनॉल के उपयोग से कृषि सेक्टर में एक सस्ता और सुस्त ऊर्जा स्रोत मिलता है।

भविष्य की दिशा

गन्ने से इथेनॉल का उत्पादन एक सशक्त और सुस्त ऊर्जा स्रोत की दिशा में एक कदम है। इसका उपयोग गैसोलीन के स्थान पर होने से प्रदूषण को कम करने में मदद करेगा और ऊर्जा स्वावलंबन की दिशा में हमें आगे बढ़ावा देगा। इस समय जब ऊर्जा संकटों का सामना करना हमारी प्राथमिकता है। गन्ने से इथेनॉल का उत्पादन एक विशेषता से भरा हुआ उपाय है।

निष्कर्ष

समाप्त करते हुए हम कह सकते हैं कि गन्ने से इथेनॉल का उत्पादन एक सुरक्षितए स्वच्छ और सुस्त ऊर्जा स्रोत की दिशा में एक उत्कृष्ट कदम है। यह अनेक क्षेत्रों में सुधार लाता है। शांतिपूर्ण वातावरण बनाए रखने में मदद करता है और आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित और स्वस्थ ऊर्जा स्रोतों की सुरक्षित आपूर्ति सुनिश्चित करता है। इस दिशा में हमारे प्रयासों से हम विश्व में एक ऊर्जा स्वावलंबी और सुस्त भविष्य की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम बढ़ा रहे हैं।

बढ़ेगी आय: अब सौर ऊर्जा से चलेंगे नलकूप, बिजली बेचकर मालामाल होंगे यूपी के किसान

यूपी में जल्द ही किसानों के निजी नलकूप सोलर से चलते नजर आएंगे। सरकार की इस योजना से जहां किसानों को बिजली की समस्या से नहीं जूझना पड़ेगा, वहीं अतिरिक्त बिजली बेचकर आय भी बढ़ाएंगे। सोलर पंप लगाने के लिए सरकार ने लागत पर 60 प्रतिशत अनुदान देने का भी निर्णय लिया है। पहले चरण में जिले से 145 किसानों का चयन किया जाना है। आवेदन की प्रक्रिया पूरी हो चुकी है। शीघ्र ही चयनित किसानों के नामों की सूची जारी होगी। अभी तक बिजली से किसानों के निजी नलकूप चलते हैं। खासकर गर्मियों के दिनों में विद्युत आपूर्ति की खपत बढ़ जाती है, जिसके कारण बिजली आपूर्ति भी प्रभावित होती है। उधर, बिजली की कमी का भी रोना रोया जाता है। कई बार विद्युत आपूर्ति प्रभावित होने पर फसलों को भी नुकसान पहुंचता है। सरकार ने किसानों की आय दोगुनी करने और पर्याप्त बिजली मुहैया कराने के लिए सोलर पंप योजना संचालित की है। इस योजना के तहत किसानों को 2 हॉर्स पावर क्षमता से लेकर 10 हॉर्स पावर तक की क्षमता वाले नौ प्रकार के सोलर पंप मिलेंगे। किसानों को सोलर पंप की बाजार कीमत पर 60 प्रतिशत अनुदान दिया जाएगा।

दो एचपी से 10 एचपी के सोलर पंप योजना में शामिल

2 एचपी का तालाब या कुएं की मुंडेर पर रखकर पानी फेंकने वाला सोलर पंप, जिसकी बाजार में कीमत 1,71,716 रुपये है। इस पर किसान को अनुदान के रूप में 63,686 रुपये मिलेंगे। 2 एचपी एसी और डीसी सबमर्सिबल पंप की बाजार कीमत 1,74,073 रुपये है। इस पर 64,816 रुपये सब्सिडी मिलेगी। बाजार में तीन एचपी एसी एवं डीसी सबमर्सिबल पंप की कीमत 2.32 लाख रुपये है। इस पर 88 हजार रुपये अनुदान मिलेगा। इसी प्रकार पांच एचपी एसी पंप जिसकी कीमत लगभग सवा तीन लाख रुपये है। जिस पर सवा लाख रुपये सब्सिडी मिलेगी। 7.5 एचपी एसी पंप की बाजार में कीमत 4.44 लाख रुपये है तो उस पर 1.72 लाख रुपये सब्सिडी मिलेगी। 10 एचपी एसी पंप की कीमत बाजार में साढ़े पांच लाख रुपये है तो उस पर 2.86 लाख रुपये की सब्सिडी मिलेगी।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

मानव जीवन पर विटामिन का महत्व एवं होने वाले लाभ

डॉ. शिवेंद्र विश्वकर्मा (सहायक प्राद्यापक)
कृषि जीव रसायन विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ. प्र.)

ऋषभ गुप्ता (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ. प्र.)

किसी व्यक्ति के जीवन में विटामिन की भूमिका के बारे में बात करने लायक नहीं है। हर कोई यह पहले से ही जानता है। विटामिन की आवश्यकता विशेष रूप से तब बढ़ जाती है जब कोई व्यक्ति लगातार तनाव के संपर्क में रहता है और जब वह अत्यधिक शारीरिक परिश्रम के साथ अपने शरीर को थकावट देता है। यह कोई रहस्य नहीं है कि विटामिन के मुख्य स्रोत फल, सब्जियां, डेयरी उत्पाद आदि हैं। लेकिन, दुर्भाग्य से, हर कोई नहीं जानता (और कोई जानता है, लेकिन किसी कारण से इस नियम का पालन नहीं करता है) खाद्य पदार्थ, अधिकांश पोषक तत्व मर जाते हैं। **और वास्तव में, एक व्यक्ति 'डमी' खाता है, अर्थात बिना किसी मूल्य के भोजन। इस स्थिति से बाहर निकलने के लिए 2 विकल्प हैं-**

1. ज्यादा देर तक बिना रखे ताजा खाना खाएं। और जितना संभव हो उतना कम गर्मी और यांत्रिक उपचार के लिए उन्हें उजागर करने का प्रयास करें।

2. अपने मुख्य आहार में विटामिन कॉम्प्लेक्स शामिल करें। खेल पोषण में, आप बहुत सारे पोषक तत्वों की खुराक पा सकते हैं जो एक एथलीट और किसी भी व्यक्ति के शरीर को आवश्यक विटामिन और सूक्ष्म तत्वों के साथ सक्रिय जीवन शैली का नेतृत्व कर सकते हैं।

अब हम उन विटामिनों के बारे में बात करेंगे जिनकी मुख्य रूप से एक एथलीट को जरूरत होती है। हम उन सभी को सूचीबद्ध नहीं करेंगे - इसमें बहुत अधिक समय लगेगा। सबसे पहले विटामिन सी है। यह सर्वविदित है कि यह शरीर की सुरक्षा को बढ़ाता है और कई वायरल रोगों से बचाता है। बॉडीबिल्डर्स के लिए इस विटामिन का लाभ इस तथ्य में भी निहित है कि शरीर द्वारा प्रोटीन का अवशोषण और मांसपेशियों में इसका संश्लेषण इस पर निर्भर करता है। एथलीट के लिए विटामिन डी भी आवश्यक है। इसके बिना, शरीर कैल्शियम और फास्फोरस को खराब तरीके से अवशोषित करता है, जो मांसपेशियों के संकुचन के लिए आवश्यक हैं। यह विटामिन मछली के तेल से प्राप्त किया जा सकता है, साथ ही धूप में थोड़े समय के बाद, यानी एक साधारण सैर को विटामिन डी की सैर में बदलना समझ में आता है। विटामिन बी3 कई चयापचय प्रक्रियाओं में शामिल होता है। पहले, बहुत बार प्रतियोगिता से पहले, एथलीटों ने इस विटामिन को लिया-इससे अतिरिक्त ऊर्जा निकालने में मदद मिली। विटामिन बी 2 प्रोटीन चयापचय में भाग लेता है। एक बॉडी बिल्डर जो इस विटामिन की उपेक्षा करता है उसे बाद में पछताना पड़ सकता है, क्योंकि इसके बिना मांसपेशियों का निर्माण करना बेहद मुश्किल है। यह भी याद रखना चाहिए कि कठिन प्रशिक्षण के साथ, विटामिन जल्दी से शरीर से बाहर निकल जाता है और तदनुसार, इसकी कमी को समय पर पूरा किया जाना चाहिए। इसी समूह का एक और विटामिन, बी12, एक बॉडी बिल्डर के लिए भी लगभग विटामिन स 1 होता है। आखिरकार, यह उस पर है कि मांसपेशियों में वृद्धि निर्भर करती है। वैसे, विटामिन एच के बारे में भी यही कहा जा सकता है। विटामिन की कमी को पूरा करके, एथलीट गहन प्रशिक्षण के बाद बहुत तेजी से ठीक हो जाता है, जो उसे लंबे समय तक रुकने के बिना इच्छित लक्ष्य की ओर बढना जारी रखने की अनुमति देता है।

जानिए....कुछ जरूरी विटामिन्स और उसके लाभ

1. विटामिन सी: विटामिन सी परिचित विटामिनों में से एक है. यह विभिन्न खाद्य पदार्थों में पाया जाने वाला विटामिन है और एक एंटीऑक्सीडेंट भी है. अगर शरीर का विटामिन सी अपर्याप्त है, तो यह स्कर्वी का कारण बन सकता है. विटामिन सी ऊतक की मरम्मत में शामिल एक महत्वपूर्ण घटक है, त्वचा कोशिका प्रसार में मदद करता है, और कोलेजन के उत्पादन का समर्थन करता है, जो घाव भरने में मदद करता है और झुर्रियों को कम करता है।

2. विटामिन डी: हड्डियों के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए विटामिन डी और कैल्शियम दोनों महत्वपूर्ण तत्व हैं. विटामिन डी मानव शरीर में कैल्शियम के संतुलन और चयापचय को बढ़ावा दे सकता है और रिकेट्स और ऑस्टियोमलेशिया को रोकने में मदद कर सकता है. इसके अलावा, विटामिन डी न्यूरोमस्कुलर फ़ंक्शन में भी मदद करता है, सूजन को कम करता है, और कोशिकाओं की संख्या को प्रभावित करता है. चर्बी घटाकर पेट को स्लिम बनाने के लिए अद्भुत है ये बिना उपकरण वाला फैट बर्नर वर्कआउट

3. विटामिन ए: विटामिन ए ऊतकों, त्वचा, श्लेष्मा झिल्ली, इम्यूनिटी और प्रजनन कार्यों का समर्थन करने के लिए जाना जाता है. विटामिन ए आंखों की रोशनी के लिए अच्छा है, और यह आंख के रेटिना का एक महत्वपूर्ण घटक है. इसके अलावा, गर्भवती महिलाओं को भी भ्रूण के विकास के लिए उचित मात्रा में विटामिन ए के पूरक की जरूरत होती है।

4. विटामिन बी: 8 प्रकार के विटामिन बी बी1, बी2, बी3, बी5, बी6, बी7, बी9, बी12 हैं. विटामिन बी कॉम्प्लेक्स कोशिका मेटाबॉलिज्म और रेड ब्लड सेल्स के संश्लेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है. प्रत्येक प्रकार का विटामिन बी मेटाबॉलिज्म प्रक्रिया में शामिल एक सहकारक है. वे मेटाबॉलिज्म को विनियमित करने, त्वचा और मांसपेशियों के स्वास्थ्य को बनाए रखने और इम्यून सिस्टम और तंत्रिका तंत्र के कार्यों को बढ़ाने में मदद करते हैं।

5. विटामिन के: विटामिन के सामान्य रक्त के थक्के बनने की प्रक्रिया का समर्थन करने की कुंजी है. यह प्रोटीन से संबंधित है जो रक्त के थक्के को नियंत्रित करता है. विटामिन 'के' के बिना, रक्त का थक्का जमना गंभीर रूप से प्रभावित होगा, और अनियंत्रित रक्तस्राव होगा. अध्ययनों से यह भी पता चला है कि विटामिन के का संबंध हड्डियों के स्वास्थ्य से है. विटामिन के की कमी हड्डियों को कमजोर कर सकती है और संभावित रूप से ऑस्टियोपोरोसिस का कारण बन सकती है.

6. विटामिन ई: विटामिन ई एक महत्वपूर्ण एंटीऑक्सीडेंट है. यह इम्यून फंक्शन और हृदय स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद है और कोशिका झिल्ली को प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों के नुकसान को कम कर सकता है. विटामिन ई को टोकोफेरोल के नाम से भी जाना जाता है. हार्मोन स्राव को बढ़ावा देने, प्रजनन क्षमता में सुधार करने और गर्भपात को रोकने के लिए विटामिन ई की कमी के बाद इसे पूरक किया जा सकता है।

दरअसल संतुलित आहार वह आहार है जिसमें सभी पोषक तत्व जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन, खनिज-लवण और जल शारीरिक जरूरत के हिसाब से उचित मात्रा में मौजूद हो। संतुलित आहार न केवल शरीर को स्वस्थ रखता है बल्कि लंबी उम्र भी प्रदान करता है। यह व्यक्ति के वजन को संतुलित रखने के साथ ही उत्तम स्वास्थ को बनाए रखने में काफी मददगार होता है। इसके इस्तेमाल से शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमताओं का विकास होता है। संतुलित आहार के लिए जरूरी है कि खाने में सभी खाद्य समूहों जैसे अनाज, दालें, हरी सब्जियां, फल, डेयरी प्रोडक्ट, अंडा, मांस, मछली, वसा, मौसम में उपलब्ध फल और सब्जियों का सेवन पर्याप्त मात्रा में किया जाए। आमतौर पर किसी भोजन को संतुलित तभी माना जाता है जब उस से प्रतिदिन शरीर को प्राप्त होने वाली कुल ऊर्जा का 50 से 60% भाग कार्बोहाइड्रेट के जरिए, 10 से 15% भाग प्रोटीन के जरिए और 20 से 30% भाग वसा के जरिए प्राप्त हो। एक बात जिस पर सभी को ध्यान देना चाहिए कि आहार में संतुलन के लिए अत्यधिक मात्रा में भोजन बिलकुल जरूरी नहीं है। अधिक भोजन हमेशा गंभीर बीमारियों और मोटापे का कारण होता है। दरअसल हर व्यक्ति को उसकी शारीरिक आवश्यकताओं, आयु, लिंग के आधार पर संतुलित आहार की जरूरत होती है। जैसे ज्यादा शारीरिक कार्य करने वाले व्यक्ति को भोजन में ज्यादा मात्रा में कार्बोहाइड्रेट लेना चाहिए। बच्चों की शारीरिक वृद्धि के लिए प्रोटीन जरूरी है। इसी तरह स्त्रियों के लिए लौह तत्व और कैल्शियम की जरूरत होती है। इसलिए यह जरूरी है कि शरीर की जरूरत और उम्र के हिसाब से संतुलित आहार लिया जाए। संतुलित आहार में मौजूद पोषक तत्वों की बात करें तो इसमें शामिल प्रोटीन मांसपेशियों को मजबूत करने के साथ ही शरीर के संपूर्ण विकास के लिए जरूरी है। प्रोटीन न मिले तो गठिया, हृदय रोग, गंजापन जैसी तमाम बीमारियां हो जाए। प्रोटीन को प्रोटीन मिले इसके लिए मीट, अंडा, सी फूड, दूध, दही, सूखे मेवे खाना चाहिए जो प्रोटीन के अच्छे स्रोत हैं।वहीं कार्बोहाइड्रेट लेने से शरीर को ऊर्जा मिलती है। यह कई बीमारियों को रोकने में सहायक है। साबुत अनाज, ब्राउन राइस, दाल, फलियां, आलू, केला इसके मुख्य स्रोत हैं। संतुलित आहार के एक नहीं अनेक फायदे हैं। इससे व्यक्ति के शरीर में उन सभी पोषक तत्वों की पूर्ति होती है जो उसे स्वस्थ और तंदुरुस्त रहने के लिए जरूरी है। संतुलित आहार अनेक रोगों और संक्रमण को रोकने में सहायक होता है। इसमें मौजूद पोषक तत्व रोगों से लडने की शक्ति प्रदान करते हैं। यह मनुष्य के मानसिक क्षमताओं और स्मरण शक्ति में भी वृद्धि करता है। संतुलित आहार आयु और लंबाई के मुताबिक उचित शारीरिक वजन को बनाए रखने में भी काफी सहायक होता है। कम आहार ग्रहण करने से मनुष्य अल्पपोषण का शिकार हो जाता है जबकि अधिक आहार ग्रहण करने से मोटापा और अन्य बीमारियां घर बना लेती हैं। ऐसे में संतुलित आहार इन सब विकारों को दूर करने का काम करता है। स्वस्थ और संतुलित भोजन से मधुमेह, कैंसर और हृदय रोग जैसी गंभीर बीमारियों के विकास को रोका जा सकता है। यह उच्च रक्तचाप के इलाज में भी सहायक है। संतुलित आहार से शरीर को रेशा और एंटीऑक्सीडेंट जैसे विटामिन सी, विटामिन ई, बीटा-कैरोटीन, राइबोफ्लेविन और सिलेनियम जैसे तत्वों की प्राप्ति होती है। इसमें फाइटोकेमिकल्स जैसे फ्लोवेन्स और पॉलिफिनॉल्स भी मौजूद होते हैं। एंटीऑक्सीडेंट्स और पॉलिफिनॉल्स शरीर को अनेक प्रकार की क्षति और कई रोगों से सुरक्षा प्रदान करते हैं। संतुलित आहार में मौजूद पोषक तत्वों की बात करें तो इसमें शामिल प्रोटीन मांसपेशियों को मजबूत करने के साथ ही शरीर के संपूर्ण विकास के लिए जरूरी है। प्रोटीन न मिले तो गठिया, हृदय रोग, गंजापन जैसी तमाम बीमारियां हो जाए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

जायफल एवं इसके औषधीय गुण

शंकर राजपूत (शोध छात्र) पी.एच.डी. फसलोत्तर प्रौद्योगिकी, बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय बाँदा (उ.प्र.)

डॉ. विज्ञा मिश्रा (सहायक प्राध्यपक) फसलोत्तर प्रौद्योगिक, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

उदयभान निषाद (शोध छात्र) पी.एच.डी. उद्यान विभाग, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)

परिचय: यह एक मसाला है जो आमतौर पर विभिन्न व्यंजनों की तैयारी में उपयोग किया जाता है, एवं इसकी मीठी सुगंध के लिए भी महत्व दिया जाता हैं। इसका मूल उत्पति स्थान इंडोनेशिया माना जाता है, यह सदाबहार पेड़ो की क्षेणी मे आता है इसका वानस्पतिक नाम मिरिस्टिका फेग्रेन्स और कुल मिरिस्टिकेसी है। और अब यह मलेशिया, कैरेबियन और दक्षिणी भारत में भी उगता हैं। यह दुनिया का एकमात्र उष्णकटिबंधीय पेड़ है जिसे दो अलग-अलग मसाले - जायफल और जावित्री - देता है। जावित्री बीज का लाल, आवरण है, जो अपने हल्के स्वाद और नारंगी रंग के लिए जाना जाता हैं।

यह मसाला होने के अलावा, कामोत्तेजक की श्रेणी में भी रखा जाता है, और खाना पकाने में, केवल छोटी मात्रा - जैसे कि एक चुटकी पिसा हुआ पाउडर - का उपयोग सूप, मांस ग्रेवी, इत्यादि बनाने मे किया जाता है। भारत में, यह आमतौर पर केरल में देखा जाता है, संभवतः छठी शताब्दी ईस्वी के दौरान, जायफल और जावित्री अरब व्यापारियों द्वारा आयात किए गए थे स्थानीय लोग इसका उपयोग मांस करी और मिठाइयों का स्वाद बढ़ाने के लिए करते हैं, जबकि फल का गूदा अचार, चटनी और अन्य मसाले बनाने में उपयोग किया जाता हैं। जायफल के पेड़ को इसके औषधीय गुणों के लिए भी महत्व दिया जाता है। पेड़ की पत्तियों और अन्य भागों का उपयोग आवश्यक तेल के साथ-साथ जायफल मक्खन निकालने में किया जाता है, जिसका उपयोग सौंदर्य के उद्देश्य से किया जाता है और इसके अन्य स्वास्थ्य लाभ भी होते हैं। यह पोषक तत्वों से भरपूर है जैसे कि -

थियामिन: यह हृदय प्रणाली और तंत्रिका तंत्र दोनों के समुचित कार्य में मदद करता है। तथा इसका प्राथमिक कार्य प्रोटीन और वसा को तोड़कर ऊर्जा जारी करना हैं।

पाइरिडोक्सिन: यह कई स्वास्थ्य लाभों में मदद करता है जैसे एनीमिया में मदद करना, रक्त वाहिकाओं को मजबूत करना, आंखों की रोशनी में सुधार करना, गठिया को नियंत्रित

करना और यहां तक कि अवसाद को ठीक करना।

फोलेट: इसे विटामिन बी9 के रूप में भी जाना जाता हैं। यह ऊतक निर्माण, कैंसर के खतरों को कम करने, कोशिका निर्माण, डीएनए संश्लेषण और मरम्मत में मदद करता हैं।

मैग्नीशियम: यह रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में, अनिद्रा के इलाज मे, चिंता से राहत दिलाने मे, ऊर्जा जारी करने में मदद करता है और हृदय संबंधी कार्यों में सुधार करता हैं।

मैंगनीज: यह ऊतक पुनर्जनन जैसे कई स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है। हार्मोनल संतुलन, रक्तचाप को नियंत्रित करना, कैल्शियम अवशोषण और चयापचय को बढ़ावा देना।

तांबा: यह लीवर और किडनी के कार्यों को बेहतर बनाने तथा साथ ही साथ ऊर्जा उत्पादन में मदद करता है।

आहारीय फाइबर: यह उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, निम्न रक्तचाप और कई अन्य बीमारियों को ठीक करने में मदद करता है।

जायफल का उपयोग: जायफल को अपने दैनिक जीवन में शामिल करने के कई तरीके हैं। हालाँकि, इनमें से कुछ विधियाँ दूसरों की तुलना में विशिष्ट स्वास्थ्य लाभ पर अधिक ध्यान केंद्रित करते हैं-

जायफल का उपभोग: इसको उपयोग करने का एक आसान तरीका यह है कि इसे पानी में एक चुटकी पाउडर मिलाकर रोजाना पिये और दूसरा तरीका यह है कि इसे खाद्य पदार्थ में थोड़ा सा पाउडर मिलाएं और इसे हर दिन खाये।

जायफल और दूध (बेहतर नींद/शक्तिहीनता के लिए): अच्छी नींद और अपने मस्तिष्क को बेहतर बनाने के लिए एक गिलास गर्म दूध में एक-चौथाई चम्मच जायफल चूर्ण मिला कर पिये।

जायफल मलना (त्वचा उपचार के लिए): औद्योगिक क्षेत्र मे इसका उपयोग सौन्दर्य-प्रसाधन के रूप मे करते है जैसे क्रीम, साबुन और शैंपू। चेहरे मे लगाने से वह की त्वचा कोमल हो जाती है ।

जायफल आवश्यक तेल (एससेंसियल ऑइल) (दर्द निवारक के उपचार)

इसके आवश्यक तेल (एससेंसियल ऑइल) का उपयोग दवा के रूप मे करते है-

दर्द से राहत के लिए: जायफल में कई आवश्यक वाष्पशील(वॉलटाइल) तेल होते हैं जैसे मिरिस्टिसिन, एलेमिसिन, यूजेनॉल और सेफ्रोल। इस तेल में सूजन-रोधी गुण होते हैं जो इसे जोड़ों और मांसपेशियों के दर्द के इलाज के लिए उपयोगी बनाते हैं। प्रभावित जगह पर तेल की कुछ बूँदें सूजन, जोड़ों के दर्द, मांसपेशियों में दर्द और घावों का इलाज कर सकती हैं।

पाचन में मदद : जायफल आवश्यक तेल(एससेंसियल ऑइल) हमारे तंत्र पर बेहतर प्रभाव डालते हैं। इसलिए यदि आप दस्त, कब्ज, सूजन या गैस जैसी पाचन समस्याओं से पीड़ित हैं, तो खाद पदार्थ में एक चुटकी जायफल को कद्दूकस कर लें और इसका सेवन करें। यह पाचन एंजाइमों के स्राव में मदद करेगा।

मस्तिष्क स्वास्थ्य: जायफल एक कामोत्तेजक है, जो मस्तिष्क में तंत्रिकाओं को उत्तेजित करता है। प्राचीन काल में ग्रीक और रोमन लोगों द्वारा इसे आमतौर पर मस्तिष्क टॉनिक के रूप में उपयोग किया जाता था। यह एक एडाप्टोजेन के रूप में, शरीर की जरूरतों के अनुसार उत्तेजक और पीड़ाहर दोनों हो सकता है। तनाव के समय में, यह रक्तचाप को कम करने में मदद कर सकता हैं। इसके विपरीत, यह आपके मूड को बेहतर कर सकता है और यह एकाग्रता में मदद करने के लिए भी जाना जाता हैं।

सांसों की दुर्गंध का इलाज: सांसों की दुर्गंध आपके तंत्र में विषाक्तता का संकेत हो सकती है। अस्वास्थ्यकर जीवनशैली और अनुचित आहार आपके अंगों में विषाक्त पदार्थों का निर्माण कर सकते हैं। जायफल शरीर को डिटॉक्सीफाई करने, अर्थात लीवर और किडनी से विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालने में मदद करने के लिए जाना जाता है। चूंकि इसके आवश्यक तेलों में एंटी-बैक्टीरियल गुण होते हैं, इसलिए यह मुंह से बैक्टीरिया को हटाने में मदद करता है जो सांसों की दुर्गंध के लिए जिम्मेदार होते हैं। इसका उपयोग आमतौर पर आयुर्वेदिक टूथपेस्ट और गोंद पेस्ट में एक घटक के रूप में किया जाता है। आवश्यक तेल (एससेंसियल ऑइल) यूजेनॉल दांत दर्द से राहत दिलाने में भी मदद करता है।

खूबसूरत त्वचा: जायफल अपने एंटी-माइक्रोबियल और एंटी-इंफ्लेमेटरी गुणों के साथ-साथ मुँहासे और बंद छिद्रों का इलाज करने की क्षमता के कारण त्वचा की देखभाल के लिए एक अच्छा घटक है। एक आम घरेलू उपाय है कि पिसी हुई जायफल और शहद को बराबर मात्रा में मिलाकर पेस्ट बनाएं और इसे मुंहासों पर लगाएं। इसे कुछ मिनट के लिए छोड़ दें और फिर ठंडे गर्म पानी से धो लें।

रक्तचाप और परिसंचरण: इसकी उच्च खनिज सामग्री जायफल को रक्त परिसंचरण और दबाव को विनियमित करने के लिए एक अच्छा घटक बनाती है। इसमें कैल्शियम, आयरन, पोटेशियम, मैंगनीज आदि होते हैं, जो शरीर में विभिन्न कार्यों के लिए आवश्यक हैं। इसके तनाव कम करने वाले गुण हृदय को कुशलतापूर्वक कार्य करते हुए रक्त वाहिकाओं को आराम देने में मदद करते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

आलू का ब्लैक हार्ट विकार रोग के प्रमुख कारण, प्रभाव तथा उसका प्रबंधन

शेफाली चौधरी शोध छात्रा (सब्जी विज्ञान)
उद्यान विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

डॉ. संदीप कुमार सहायक अध्यापक, बुद्ध स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रतसिया कोठी, देवरिया

डॉ. आस्तिक झा सहायक अध्यापक, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

परिचय

आलू का काला दिल, जिसे ब्लैकहर्ट या खोखला दिल भी कहा जाता है, एक शारीरिक विकार है जो आलू के कंदों को प्रभावित करता है। यह कंद के केंद्र में काले, बदरंग क्षेत्रों के रूप में प्रकट होता है, जिससे अक्सर किसानों को आर्थिक नुकसान होता है और उपभोक्ताओं के लिए गुणवत्ता कम हो जाती है। टिकाऊ आलू उत्पादन के लिए ब्लैकहार्ट के कारणों, प्रभावों और प्रबंधन को समझना आवश्यक है।

(A) ब्लैक हार्ट के कारण

आलू में ब्लैकहार्ट के विकास के लिए कई कारक जिम्मेदार हो सकते हैं, जिनमें शामिल हैं–

तापमान में उतार-चढ़ाव

कंद के विकास और भंडारण के दौरान तापमान में तेजी से बदलाव से पौधे पर दबाव पड़ सकता है, जिससे ब्लैकहार्ट का विकास हो सकता है।

नमी का तनाव

मिट्टी में अपर्याप्त या अत्यधिक नमी का स्तर कंद के विकास को प्रभावित कर सकता है और ब्लैकहार्ट बनने की संभावना को बढ़ाता है।

पोषक तत्वों का असंतुलन

मिट्टी के पोषक तत्वों, विशेष रूप से कैल्शियम, मैग्नीशियम और पोटेशियम में असंतुलन, ब्लैकहार्ट की घटना में योगदान करता है।

विभिन्न प्रकार की संवेदनशीलता

आलू की कुछ किस्मों में दूसरों की तुलना में ब्लैकहार्ट विकसित होने का खतरा अधिक होता है, जो विकार के लिए आनुवंशिक प्रवृत्ति का संकेत देता है।

कटाई और रख-रखाव के तरीके

कटाई के दौरान लापरवाही बरतने और भंडारण की अनुचित स्थिति के कारण भी आलू में कालापन आता है।

(B) ब्लैकहार्ट का प्रभाव

आलू में ब्लैकहार्ट की उपस्थिति उत्पादकों और उपभोक्ताओं दोनों के लिए महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है जैसे-

आर्थिक नुकसान

ब्लैकहार्ट प्रभावित आलू से जुड़े बाजार मूल्य में कमी और उपज के नुकसान के कारण किसानों को वित्तीय नुकसान होता है।

गुणवत्ता में गिरावट

ब्लैकहार्ट वाले आलू को अक्सर ताजा बाजारों में बिक्री के लिए अनुपयुक्त माना जाता है, जिससे उपभोक्ताओं के लिए गुणवत्ता संबंधी समस्याएं पैदा होती हैं और उत्पादकों की प्रतिष्ठा को नुकसान होता है।

भंडारण चुनौतियां

ब्लैकहार्ट से प्रभावित कंदों के भंडारण के दौरान सड़ने और खराब होने की संभावना अधिक होती है, जिससे कटाई के बाद नुकसान और बढ़ जाता है।

पोषण संबंधी प्रभाव

ब्लैकहार्ट द्वारा आलू के पोषण मूल्य से समझौता किया जा सकता है, क्योंकि प्रभावित क्षेत्रों में अक्सर कम पोषक तत्व होते हैं और कम स्वादिष्ट होते हैं।

ब्लैकहार्ट प्रबंधन

ब्लैकहार्ट के प्रभावी प्रबंधन के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जो रोपण से पहले, खेती और कटाई के बाद की प्रथाओं को संबोधित करता है:

मृदा प्रबंधन

नियमित मिट्टी परीक्षण और पोषक तत्वों के असंतुलन, विशेष रूप से कैल्शियम के स्तर को ठीक करने के लिए संशोधन, ब्लैकहार्ट विकास के जोखिम को कम करने में मदद करते हैं।

सिंचाई प्रबंधन

बढ़ते मौसम के दौरान मिट्टी की नमी के स्तर को लगातार बनाए रखने के लिए उचित सिंचाई प्रथाओं को लागू करने से पौधों पर तनाव कम हो सकता है और ब्लैकहार्ट की घटना कम हो सकती है।

किस्मों का चयन

ब्लैकहार्ट के प्रति कम संवेदनशीलता वाली आलू की किस्मों को चुनने से क्षेत्र में विकार के प्रसार को कम करने में मदद मिल सकती है।

कटाई और रख-रखाव के तरीके

कटाई के दौरान सावधानी से संभालना और पर्याप्त वेंटिलेशन और तापमान नियंत्रण सहित उचित भंडारण की स्थिति, भौतिक क्षति को रोकने और भंडारण के दौरान ब्लैकहार्ट विकास को कम करने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

कटाई के बाद के उपचार

कटाई के बाद के उपचार, जैसे कि कैल्शियम स्प्रे या डिप्स का उपयोग, कोशिका की दीवारों को मजबूत करने और भंडारित आलू में ब्लैकहार्ट की घटनाओं को कम करने में मदद करता है।

फसल चक्र

फसल चक्र प्रथाओं को लागू करने से रोग चक्र को तोड़ने और समग्र मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करने में मदद मिल सकती है, जिससे बाद की आलू की फसलों में ब्लैकहार्ट की संभावना कम हो जाती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कृषि में क्रांतिकारी परिवर्तन लाएगी कृत्रिम बुद्धिमत्ता (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस-एआई)

शुभम तिवारी (शोध छात्र) **पायल व्यास** (शोध छात्रा)
सैम हिग्गिनबॉटम यूनिवर्सिटी ऑफ़ एग्रीकल्चर, टेक्नोलॉजी एंड साइंसेज़ (**SHUATS**)

राहुल कुमार (शोध छात्र) चन्द्रशेखर आजाद
कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

देश की बढ़ती आबादी के साथ दिन प्रतिदिन कृषि योग्य भूमि का का कम होना आज एक बहुत बड़ी समस्या के रूप में देशवासियों के सामने आ रही है। इस समस्या के समाधान हेतु कृषि के क्षेत्र में अधिक कुशल , रचनात्मक और विज्ञान युक्त होने की आवश्यकता है,जिसके तहत कम भूमि के उपयोग से ही फसल की उपज और उत्स्वपादकता को बढ़ाने पर जोर देना होगा। प्रतिदिन बढ़ती वैश्विक आबादी का 2050 तक 9 अरब तक पहुंचने का अनुमान है, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में कृषि उत्पादन में भी उल्लेखनीय वृद्धि की जानी चाहिए। पुरातनकाल से ही विश्व खाद्य पदार्थो की आपूर्ति के लिए भारत से ही उम्मीद करता था और आज भी कर रहा है किन्तु जलवायु परिवर्तनशीलता, भूमि क्षरण, पानी की कमी और घटती श्रम शक्ति जैसे कारक आज हमारे देश में कृषि उपज लक्ष्य को प्राप्त करने में बाधाएँ उत्पन्न करते हैं। इन समस्याओं से निपटने के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता रामबाण साबित हो सकती है। गौरतलब है कि हाल ही में प्रधानमंत्री ने 'सामाजिक सशक्तिकरण के लिये उत्तरदायी कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिखर सम्मेलन-2020' या रेज़-2020 (RAISE 2020) का उद्घाटन करते हुए कृषि, स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा को सशक्त बनाने, अगली पीढ़ी के शहरी बुनियादी ढाँचे के विकास में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence-AI) की महत्त्वपूर्ण भूमिका होने की बात कही थी।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस-एआई)- विज्ञान जगत में कंप्यूटर विज्ञान में कृत्रिम बुद्धिमत्ता या आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का अभिप्राय मनुष्यों के समान बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन किसी कंप्यूटर, रोबोट या अन्य मशीन द्वारा करना है।कृषि में एआई का एकीकरण दशकों के अनुसंधान और तकनीकी प्रगति पर आधारित है। कृषि में प्रारंभिक एआई अनुप्रयोग नियम-आधारित प्रणालियों और विशेषज्ञ प्रणालियों पर केंद्रित थे जो मानव निर्णय लेने की प्रक्रियाओं का अनुकरण करने का प्रयास करते थे। हालाँकि, मशीन लर्निंग, डीप लर्निंग और बिग डेटा एनालिटिक्स में हालिया सफलताओं ने एआई को नई ऊंचाइयों पर पहुंचा दिया है, जिससे यह बड़े पैमाने पर डेटासेट से छिपी हुई अंतर्दृष्टि और पैटर्न को उजागर करने में सक्षम हो गया है उपग्रह इमेजरी, मौसम डेटा, मिट्टी सेंसर और फसल रिकॉर्ड जैसे विभिन्न स्रोतों से बड़ी मात्रा में डेटा की उपलब्धता ने कृषि में एआई के विकास को बढ़ावा दिया है। ये डेटा स्रोत, शक्तिशाली एल्गोरिदम के साथ मिलकर, पूर्वानुमानित मॉडल, रोग पहचान प्रणाली, फसल उपज अनुमानक और स्मार्ट सिंचाई प्रणाली के विकास को सक्षम बनाते हैं। एआई प्रौद्योगिकियों का लाभ उठाकर, किसान डेटा-संचालित निर्णय ले सकते हैं, संसाधन आवंटन को अनुकूलित कर सकते हैं, पर्यावरणीय प्रभाव को कम कर सकते हैं और अंततः अपनी उत्पादकता और लाभप्रदता बढ़ा सकते हैं। आइए कृषि के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस- एआई) के प्रयोग के बारे में जानते हैं ।

मौसम पूर्वानुमान और विश्लेषण: कृषि में एआई के सबसे महत्वपूर्ण अनुप्रयोगों में से एक मौसम पूर्वानुमान है। बदलती

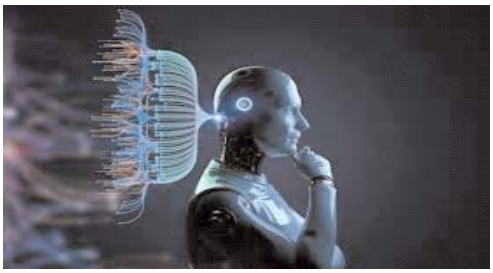

जलवायु और बढ़ते प्रदूषण के कारण, किसानों को बीज बोने का सही समय निर्धारित करने में कठिनाई हो सकती है। एआई मौसम पूर्वानुमान प्रणालियों का उपयोग करके, किसान वास्तविक समय के मौसम डेटा का विश्लेषण कर सकते हैं। इस तरह, वे तय कर सकते हैं कि कौनसी फसल उगानी है और कब बीज बोना है। इस जानकारी के आधार पर, किसान फसल बोने का सबसे अच्छा समय निर्धारित कर सकता है,फसल सिचाई, फसल कटाई,मड़ाई का सटीक समय निर्धारित कर सकता है जिससे प्रतिकूल मौसम की स्थिति के कारण फसल के नुकसान का जोखिम कम हो जाता।

मृदा प्रबंधन (साइल मैनेजमेंट): कृत्रिम बुद्धिमत्ता (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस- एआई) की मदद से, मृदा की स्वास्थ्य जैसे कि मृदा की प्रोफाइलिंग, भूमि की संरचना, मृदा की जल निस्तारण क्षमता, भूमि की पोषक तत्वों की उपलब्धता और उसकी उपयोगिता का आकलन किया जा सकता है । यह आकलन किसानों को मृदा के स्वास्थ्य को समझने सुधारने, मृदा के अनुसार फसलो के चयन की जानकारी देता है जिससे कृषक मृदा के अनुसार फसलो की बुआई कर या मृदा के अनुकूल पोषक तत्वों को प्रदान कर अधिक उत्पादकता प्राप्त कर सकता है जिससे उसकी आय में वृद्धि होती है ।

स्वचलित कृषि उपकरण: कृत्रिम बुद्धिमत्ता (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस- एआई) का उपयोग करके ट्रैक्टर, हार्वेस्टर, और वीडर्स जैसे कृषि उपकरणों को स्वचलित करके खेती के कार्यो को स्वचालित किया जा सकता है। कृषि उपकरण में कृत्रिम बुद्धि और सेंसर्स के उपयोग से कृषि उपकरणों द्वारा फसलों की पहचान की जा सकती हैं, और उपयुक्त कार्रवाई कर सकती हैं, जैसे कि खेत में कीटनाशकों का प्रबंधन, फसलों में सिंचाई आदि ।

फसलों का प्रबंधन : एआई पौधों की त्वरित स्थिति की निगरानी करके फसल की बीमारियों का पता लगा सकता है और भविष्यवाणी कर सकता है, फसलों की खरपतवारों की पहचान कर सकता है और उन्हें हटा सकता है। फसल के कीटों की पहचान कर के उनके प्रभावी उपचार की जानकारी दे सकता है। यह कीटों के लिए सबसे प्रभावी उपचार का सुझाव भी दे सकता है, जिससे उन कीटनाशकों की आवश्यकता कम हो जाती है जो लाभकारी कीड़ों को नुकसान पहुंचाते हैं।

कीट और रोग प्रबंधन: एआई फसलों के दृश्य संकेत, लक्षण विश्लेषण के आधार पर कीटों, बीमारियों और खरपतवारों की पहचान कर उनका वर्गीकरण कर सकता है। कंप्यूटर विज़न तकनीकों और गहन शिक्षण का लाभ उठाकर, एआई सिस्टम फसलों के लिए संभावित खतरों का शीघ्र पता लगा सकता है। यह किसानों को सटीक कीटनाशकों के छिड़काव या अन्य लक्षित निवारक उपाय करने में सक्षम बनाता है, जिससे व्यापक पैमाने पर कीटनाशक अनुप्रयोगों की आवश्यकता कम हो जाती है।

सिंचाई प्रबंधन:एआई-आधारित सिंचाई प्रणालियाँ पानी के उपयोग को अनुकूलित करने हेतु सेंसर, मौसम पूर्वानुमान और मिट्टी की नमी माप से डेटा का उपयोग करती हैं।एआई सिंचाईकी आवश्यकता निर्धारित करने हेतु इन आंकड़ों का विश्लेषण करते हैं, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि फसलों को किस समय कितनी मात्रा में पानी की आवश्यकता है। यह जल संरक्षण को बढ़ावा देता है, पौधों पर पानी का तनाव कम करता है और जल उपयोग दक्षता को बढ़ाता है।

उर्वरक और खाद प्रबंधन: एआई उर्वरक और खाद की आवश्यकता को प्राकृतिक और उत्पादक स्रोतों से मिलाकर खेतों में स्वचालित रूप से प्रबंधित कर सकता है। एआई फसलों की मृदा के आकड़ो पोधो के पोषक तत्वों के आकड़ो के आधार फसल के लिय उपयुक्त उर्वरक और खाद की मात्र की स्टिक जानकारी किसानो को दे सकता है, इससे किसानों को उपयुक्त खाद की मात्रा और प्रकार का निर्णय लेने में मदद मिलती है।

उपज की भविष्यवाणी : फसल के डेटा पर प्रशिक्षित एआई मॉडल, वास्तविक समय के पर्यावरण और फसल डेटा के साथ मिलकर, फसल की पैदावार का सटीक अनुमान लगा सकते हैं। मौसम की स्थिति, मिट्टी के स्वास्थ्य और कृषि संबंधी कारकों पर विचार करके, एआई फसलों की उपज की भविष्यवाणी प्रदान करते हैं। यह जानकारी किसानों को विपणन रणनीतियों को अनुकूलित करने, भंडारण और परिवहन रसद की योजना बनाने और आपूर्ति श्रृंखला संचालन को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने में मदद करती है।

फसल की परिपक्वता का अवलोकन करना: फसल की वृद्धि और परिपक्वता का अनुमान लगाना किसानों के लिए एक कठिन और चुनौतीपूर्ण काम है, लेकिन एआई इस काम को जल्दी और सटीक तरीके से संभाल सकता है। एआई-संचालित हार्डवेयर जैसे कि सेंसर और छवि पहचान उपकरण के माध्यम से, किसान सटीक भविष्यवाणी प्राप्त करने के लिए फसल परिवर्तनों का पता लगा सकते हैं और ट्रैक कर सकते हैं कि फसलें इष्टतम परिपक्वता तक कब पहुंचेंगी। अध्ययनों में पाया गया है कि फसलों की परिपक्वता की भविष्यवाणी करने के लिए एआई का उपयोग करने से मानव पर्यवेक्षकों द्वारा प्राप्त सटीकता दर की तुलना में अधिक सटीकता दर प्राप्त हुई है। यह बढ़ी हुई सटीकता किसानों के लिए महत्वपूर्ण लागत बचत और उच्च मुनाफा ला सकती है।

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुंच गये हैं कि,एआई का प्रयोग कृषकों को फसल प्रबंधन, मौसम पूर्वालोकन, कीट -रोग प्रबंधन, फसल उत्पादन पूर्वालोकन, सिंचाई प्रबंधन के साथ फसल की परिपक्वता का अवलोकन कर के किसानों को खेती करने में तकनिकी सहायता प्रदान कर कृषकों की फसल उत्पादन के नुकसान को अत्यधिक मात्रा में कम करके कृषकों की आय बढ़ाकर क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

बनाएं मशरूम के अनेकों व्यंजन एवं विधि

डॉ. नरेंद्र कुमार उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय प्रयागराज (इलाहाबाद) (उ.प्र.)

प्रो. (डॉ.) वी. एम. प्रसाद उद्यान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय प्रयागराज (इलाहाबाद) (उ.प्र.)

डॉ. बालाजी विक्रम उद्यान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय (बांदा) (उ.प्र.)

संदीप कुमार पाठक उद्यान विभाग सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इलाहाबाद) (उ.प्र.)

परिचय

मशरूम एक प्रकार का फफूंद है। विश्व की बढ़ती आबादी को देखते हुए विश्व कृषि एवं खाद्य संगठन में इसे अन्य अनाजों के बदले उपयोग में लाने का विशेष बल दिया है। मशरूम का व्यंजनों में उपयोग प्राचीनकाल से हमारे पूर्वज करते आ रहे हैं। शादियों व अन्य विशेष अवसरों के भोजन में मशरूम के व्यंजनों को विशेष स्थान प्राप्त है। खुम्ब एक विशिष्ट शाकाहारी भोजन है। खुम्ब उच्च गुणवत्ता की प्रोटीन, विटामिन (विटामिन बी-12 तथा विटामिन डी) एवं रेशा के स्रोत होने के साथ-साथ कॉलेस्ट्रॉल मुक्त होते हैं और इनें बहुत सभी औषधीय गुण भी पाये जाते हैं। मशरूम का ब्यंजनों में उपयोग कई तरीकों से किया जा सकता है। मशरूम को अन्य सब्जियों की तरह छीलने की जरूरत नहीं होती है। केवल इसकी डंडी का आखिरी हिस्सा थोड़ा सा काट दिया जाता है। मशरूम बनाने से पहले इसे खुले पानी में अच्छी तरह से धो ले ताकि इस पर बैठी हुई केसिंग मिट्टी या अन्य अवशेष साफ हो जाएं। यदि एक दो दिन के लिए मशरूम का भंडारण करना हो तो इसे बिना धोए किसी कागज के लिफाफे में डालकर फ्रिज में रख दें। पकाते समय यह काफी पानी छोड़ती है। यदि इसे कूकर में पकाया जा रहा हो तो एक सिटी ही काफी अन्यथा यह ज्यादा पक जाने पर सख्त हो जाती है। भारतीय लोगों के खाने और पकाने की रूची विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग है। इसलिए मशरूम के विभिन्न प्रकार के पकवान अलग-अलग क्षेत्रों में स्वादानुसार बनाये जाते हैं। मशरूम से तैयार होने वाले कुछ व्यंजनों की विधि नीचे दी जा रही है।

मशरूम टमाटर सूप

सामग्री: ताजा मशरूम 200 ग्राम (बराबर कटा हुआ) (बटन/ढिंगरी/शिटाके), टमाटर 4 (बारी कटे हुए), प्याज 1 मध्यम आकार का (बारी कटा हुआ), लहसुन 1 छोटा चम्मच पेस्ट, कॉर्नफ्लोर 3 बड़े चम्मच, क्रीम 2 बड़े चम्मच, मक्खन 50 ग्राम, नमक और काली मिर्च स्वादानुसार।

विधि: टमाटर, प्याज और लहसुन को 10 मिनट तक पानी में उबालें। उबली हुइ सामग्री को पीस कर छान लें।

कढ़ाई में मक्खन पिघलाएं तथा कटी हुई मशरूम को दस मिनट तक हिलाते हुए पकाएं, जब तक कि वो हल्के भूरे रंग की न हो जाए। उसके बाद इसमें छनी हुई सामग्री व गाढ़ा करने हेतु कॉर्नफ्लोर डाल दें तथा स्वादानुसार नमक और काली मिर्च डालकर 7-8 मिनट तक उबलने दें।

मशरूम पकौड़ा

सामग्री ताजी मशरूम (बटन/ढिंगरी)-500 ग्राम (धुली व पतले टुकडों में कटी हुई), प्याज-1(बड़ा, लंबा कटा हुआ), बेसन-150 ग्राम, अदरक-50 ग्राम (कद्दूकस किया हुआ), अजवायन 1 चम्मच, गरम मसाला 1 चम्मच, अनार दाना पाउडर 1 चम्मच, हरी मिर्च 2 (कटी हुई) सरसों का तेल-200 ग्राम, हरा धनिया-50 ग्राम (बारीक कटा हुआ), नमक-स्वादानुसार ।

विधि: सूखे कपड़े के ऊपर फैला दें। बेसन में सभी मसाले घोलें तथा उबली हुई मशरूम को अच्छे से निचोड़कर बेसन के घोल मे डाल देते है। घोल को पतला करने के लिये मशरूम का निचुड़ा हुआ पानी भी इस्तेमाल किया जा सकता है। अब कढ़ाई में तेल डालकर आँच पर तेज गरम करें तथा पकोड़ों को सुनहरा होने तक तलें।

मशरूम की सब्जी

सामग्री: मशरूम 500 ग्राम, आलू - 2 (बड़ा) टमाटर-150 (मध्य आकार का 3), प्याज - 1 (बड़ा), लहसून - 1 पोटी अदरक - 15 ग्राम, गर्म मसाला - 1/2 चम्मच जीरा - 1 चम्मच, नमक हल्दी, मिर्च एवं अन्य मसाला स्वादानुसार, तेल - 100 ग्राम।

विधि: मशरूम को गुनगुने पानी में धोकर एवं पानी निचोड़कर, मनचाहा आकार में काट लें। कड़ाही गर्म कर मशरूम को हल्का तल कर निकाल लें। प्याज गुलाबी होने तक तलें तथा इसमें मसाला डालकर भून लें। अब इसमें टमाटर डालकर थोडी देर तक भूनें फिर आलू डालकर भूनें। अब तली मशरूम डालकर भी थोड़ी देर भूनें और पानी डालकर पकायें तथा रस गाढ़ा कर लें एवं नमक डाल दीजिए तथा उतारने से पूर्व गर्ममसाला डाल दें।

मशरूम कटलेट

सामग्री: मशरूम (बटन/ढिंगरी) - 100 ग्राम (उबालकर छोटे-छोटे टुकडों में कटी हुई), आलू - 4 मध्यम (उबले व मसले हुए), मटर - 1/2 कप (उबली हुई), गाजर - 1 मध्यम (उबली व बारीक कटी हुई) अदरक - 20 ग्राम (कद्दूकस किया हुआ), हरा धनिया व हरी मिर्च - बारीक कटी हुई लाल मिर्च व गरम मसाला - 1/2 चम्मच, तेल - 200 ग्राम, नमक - स्वदानुसार, कॉर्नफ्लोर - 1 बड़ा चम्मच, ब्रेड चूरा - 30 ग्राम।

विधि: मशरूम व अन्य सब्जियों को मसले हुए आलू में डालकर अच्छे से मिला लें। अब इसमें नमक, लाल मिर्च, हरा धनिया, हरि मिर्च, गरम मसाला व कार्नफ्लॉर डालें। इस मिश्रण को अच्छी तरह से मिलाकर इसके कटलेट बना लें। अब कढ़ाई में तेल गरम करें व कटलेंट को ब्रेड चूरे में लपेट कर, सुनहरा होने तक तलें।

मशरूम कोफ्ता

सामग्री: ताजा मशरूम (बटन/ढिंगरी/दुधिया)- 250 ग्राम (उबाले हुए), बेसन-100 ग्राम, प्याज-2 (बारीक कटे हुए), लहसुन-1 छोटी चम्मच पेस्ट, अदरक-1 छोटा चम्मच पेस्ट, दालचीनी-1/2 छोटा चम्मच पाउडर, हल्दी-1 चम्मच, धनिया पाउडर-1, जीरा-1 चम्मच, टमाटर प्यूरी-1 कप, कसूरी मेथी गरम मसाला, लाल मिर्च व नमक स्वादानुसार

विधि: मशरूम को मिक्सर में बारीक पीसें, उसमें बेसन, नमक, लाल मिर्च, गरम मसाला मिलाकर गाढ़ा मिश्रण तैयार करें। गोल-गोल कोफ्ते बनाकर इसे कम आंच पर तल लें। जब गरहे भूरे रंग के मशरूम को नमक वाले पानी में पांच मिनट के लिए उबालें व छानकर 10 मिनट के लिये हो जाए तो इन्हें तेल से निकाल लें। तरी बनाने के लिये कढ़ाई में तेल गर्म करें व उसमें जीरा डालें तथा बाद में प्याज, लहसुन व अदरक को डालकर कम आंच पर हल्का भूरा होने तक भूनें। अब टमाटर प्यूरी को डालें तथा, तब तक भूनें जब तक मसाला तेल छोड़ने लगे। अन्य सामग्री व दो गिलास पानी डालकर मिश्रण को हिलाएं तथा 6-7 मिनट तक उबालें। अब कोफ्ते डालकर कम आंच पर 5 मिनट तक उबलने दें

मशरूम मटर

सामग्री: मशरूम 300 ग्राम (धुली व कटी हुई) ताजे मटर के दाने-250 ग्राम, प्याजः 3 (बारीक कटे हुए), अदरक-50 ग्राम (कद्दूकस किया हुआ), लहसुन -5 फांके कुटी हुई, टमाटर-1 कप, लाल मिर्च-स्वादानुसार, तेल-आधा कप, हरा धनिया-50 ग्राम (बारीक कटा हुआ), जीरा-आधा चम्मच, धनिया पाउडर-1 चम्मच, गरम मसाला-2 चम्मच, हल्दी पाउडर-आधा चम्मच, नमक - स्वादानुसार।

विधि: प्रेशर कूकर में तेल गरम करें व जीरा डालें। जीरा चटक जाने पर तेल में प्याज डालकर भूरा होने तक भूनें फिर उसमें धनिया पाउडर, हल्दी पाउडर, नमक व अन्य मसाले मिलाएं तथा एक मिनट के लिये भूनें ।

मिश्रण में टमाटर की प्यूरी डालकर अच्छे से भूनें जब तक कि वह तेल न छोड़े। इस मसाले में अब कटी हुई मशरूम व मटर के दाने डालें तथा हल्की आंच पर पांच मिनट के लिये भूनें और फिर दो कप पानी डालकर कूकर में एक प्रेशर दें।

मशरूम मैक्रोनी / नूडल्स सामग्री सामग्री

नूडल्स-1 पैकेट, मशरूम (बटन/ढिंगरी)-250 ग्राम (हल्की तली हुई) प्याज-2 (लंबा कटा हुआ) शिमला मिर्च-100 ग्राम (बीज निकालकर लम्बी कटी हुई), बंद गोभी-100 ग्राम (बारीक कटी हुई), गाजर-100 ग्राम (पतली कटी हुई), अदरक/लहसुन पेस्ट-1-1 चम्मच, हरी मिर्च -2 (कटी हुई), तेल-आधा कप, अजीनोमोटो-आधा चम्मच, नमक व काली मिर्च-स्वादानुसार, टमाटर, चिली, सोया सॉस-4-4 छोटे चम्मच।

विधि: नमक वाले पानी में नूडल डालकर एक चम्मच तेल डालकर तब तक उबालें जब तक ये पक न जाऐ लेकिन टूटे नहीं। अब इसे छन्नी में डालकर ठण्डे पानी के नीचे धो लें तथा दो तीन चम्मच तेल डालकर मिलाएं ताकि यह आपस मे चिपके नहीं। कढ़ाई में तेल गरम करें व प्याज डालकर सुनहरा होने तक भूनें फिर शिमला मिर्च व गाजर डालकर दो-तीन मिनट तक पकाएं। अब इसमें अदरक, लहसुन का पेस्ट, बन्द गोभी तथा मशरूम डालें और तेज आँच पर पकाएं। अब इसमें उबली हुई मैक्रोनी / नूडल, नमक, काली मिर्च, हरी मिर्च तीनों प्रकार की सॉस तथा अजीनोमोटो डालकर अच्छे से मिलाएं व एक -दो मिनट मिलाएं।

मशरूम की आचार

प्रथम विधि: सामग्रीः ताजा मशरूम 250 ग्राम पाउडर-1 चम्मच, सरसों पाउडर-1 चम्मच, जीरा पाउडर-2 चम्मच, मेथी दाना पाउडर- आधा चम्मच, हल्दी पाउडर - 1 चम्मच, ग्लेशियल एसिटिक अम्ल-10 मिली, रिफाईन्ड तेल - 200 मिली, नमक 100 ग्राम।

विधि: ताजे मशरूम को स्वच्छ जल से अच्दी तरह धोयें। आवश्यकतानुसार आकार के टुकड़े में काटे और पानी निचोड़े। अब इसे 100 मिली. तेल में इतना तले की मशरूम का 3/4 भाग पानी सूख जाये। तले मशरूम को अलग बर्तन में रखें। अब बचे तेल में अन्य सभी मसालें अच्छी तरह भूनें एवे तले मशरूम को मसालें के साथ मिलाकर 15 मिनट तक अच्छी तरह पकायें एवं नमक मिलाकर ठंडा करके स्वच्छ काँच के बर्तन में भण्डारित करें।

द्वितीय विधि: सामग्रीः ताजा मशरूम -250 ग्राम, सरसों पाउडर - 1 चम्मच, हल्दी पाउडर - 1 चम्मच, मिर्च पाउडर - 1 चम्मच, नमक - 100 ग्राम, तिल का तेल - 100 मिली., हींग - 1 चुटकी।

विधि: मशरूम को 10 मिनट तक पानी में उबालकर 5-6 घंटे धूप में सुखायें । अब तेल मसाला एवं मशरूम को एक साथ मिलाकर सूखे जार में भरें। जार को 2-3 घंटे प्रति दिन (20 दिन) धूप में सूखायें तब कमरे के तापक्रम पर भण्डारित करें।

तृतीय विधि: सामग्रीः ताजा मशरूम कटे हुए - 250 ग्राम, जीरा पाउडर, मेथी दाना पाउडर, धनिया बीज पाउडर - प्रत्येक 1 चम्मच, हरी मिर्च - 5, सिरका - 50 मिली., सरसों तेल - 50 मिली. और नमक स्वादानुसार।

विधि: ताजे मशरूम को काटकर ताजे पानी से अच्छी तरह से धोकर हल्का निचोड़ें। धीमी आँच पर

स्टील के बर्तन में ढ़क कर 50 मिली. सरसों के तेल में अच्छी तरह भून कर रखें। सभी मसालें एवं नमक को अच्छी तरह मिलायें एवं मिर्च के टुकटे करके भूनें अब सभी मसाले, मशरूम एवं मिर्च एक साथ मिलायें एवं ठंडा करके जार में भरें एवं कमरे के तापक्रम पर भण्डारित करें।

मशरूम मन्चूरियन

सामग्री: मशरूम (बटन/ढिंगरी) - 150 ग्राम (साबुत, कटी व उबली हुई), प्याज - 1 मध्यम, शिमला मिर्च - 50 ग्राम, गाजर - 50 ग्राम (महीन कटी हुई), फेंच बीन - 50 ग्राम (महीन कटी हुई) लहसुन पेस्ट- 1 चम्मच, कार्नफ्लॉर व मैदा 50-50 ग्राम, सोया सॉस - 2 चम्मच, टमाटर प्यूरी - आधा कप, हरी मिर्च की सॉस- 1 चम्मच, पानी - 2 कप, मक्खन-50 कप, तेल - 1 कप, अजीनोमोटो - आधा चम्मच, नमक व काली मिर्च - स्वादानुसार।

विधि: कढ़ाई में तेल गरम करें, कार्नफ्लॉर तथा मैदे में नमक व काली मिर्च डालकर गाढ़ा घोल बनायें और साबुत उबली हुई मशरूम को इस घोल में डुबोकर गरम तेल मे तल लें। भूरा होने पर निकाल लें। दूसरी कढ़ाई में मक्खन गरम करें, उसमें कटी हुई प्याज को थोड़ा सा भूनें तथा अन्य सब्जियाँ व लहसुन का पेस्ट डालकर दो तीन मिनट भूनें दो कप पानी में दो चम्मच कार्नफ्लॉर, नमक, काली मिर्च डालकर व इस घोल को पक रही सब्जियों में धीरे-धीरे डालते हुए हिलाएं। दो मिनट पकाने पर इसमें तीनों प्रकार की सॉस व अजीनोमोटो डालें तथा तली हुई मशरूम डाल दें। गरम-गरम मन्चूरियन को फ्राइड चावल, मैक्रोनी / नूडल्स के साथ परोसें।

मशरूम मसाला

मिश्रित सब्जियों के साथ सामग्री (4 व्यक्तियों के लिये) मशरूम (बटन / ढिंगरी)- 250 ग्राम (कटी हुई), शिमला मिर्च - 50 ग्राम (बीज निकालकर लम्बी कटी हुई), गाजर-50 ग्राम (कटी हुई), फेंच बीन - 50 ग्राम (कटी हुई), मटर के दानें-1 कप, आलू - 2 मध्यम (कटे हुए), प्याज-2 मध्यम (कटे हुए), लहसुन व अदरक का पेस्ट - 1-1 चम्मच, टमाटर प्यूरी - 1/2 कप, जीरा -1/2 चम्मच, पीसी धनिया, हल्दी - 1 छोटा चम्मच, लाल मिर्च व गरम मसाला-1/2-1/2, चम्मच तेल - 1, बड़ा चम्मच नमक - स्वादानुसार।

विधि: कढ़ाई में तेल गरम करें व जीरा भूनें। अब इसमें बारीक कटी हुई प्याज को सुनहरा होने तक भूनें व टमाटर की प्यूरी, लहसुन/अदरक का पेस्ट, नमक हल्दी, मिर्च डालकर तब तक भूनें जब तक मसाला तेल छोड़ने लगे। अब इसमें मशरूम व मटर डालकर थोड़ी देर पकाएं, पानी सूख जाने पर अन्य सब्जियां डालते हुए हिलाऐं व 3-4 मिनट तक ढककर पकाएं। सभी सब्जियां पक जाने पर गरम मसाले डालकर गरम-गरम परोसें।

मशरूम का सलाद

सामग्री: मशरूम-50 ग्राम, प्याज-2, टमाटर-2, नींबू-1, गाजर-2, मूली चार, हरी मिर्च - 25 ग्राम, धनियाँ - 5 ग्राम, अदरक - 5 ग्राम, पिसी मिर्च, नमक व लाल मिर्च आवश्यकतानुसार।

विधि: टमारटर, गाजर, मूली, हरी धनियां, नीबू और मशरूम को अच्छी तरह साफ पानी से धो लें। मशरूम को लंबे टुकड़ो में काट लें। अब मशरूम, गाजर और मूली के टुकड़ों को प्लेट में बारी-बारी से सजायें। उसके ऊपर प्याज के गोल चकते काटकर मिलायें। हरी मिर्च, हरा धनिया, अदरक बारीक काटकर ऊपर से नमक व मिर्च एवं इसके ऊपर अंदाज से नींबु निचोड़ दें। स्वादिष्ट सलाद तैयार हो जाएगा।

कढ़ाई मशरूम सामग्री (4 व्यक्तियों हेतु) सामग्री

मशरूम (बटन/ढिंगरी) 400 ग्राम (छोटे, चार टुकटों में कटी हुई), प्याज-1, बड़ा (बारीक कटा हुआ), लहसुन/अदरक का पेस्ट -2-2 छोटे चम्मच, शिमला मिर्च - 2 छोटी (बीज निकालकर बारीक कटी हुई), मटर-आधा कप (उबले हुए), साबुत लाल मिर्च - 4 देगी मिर्च पाउडर - 1 चम्मच, हरी मिर्च - 2 कटी हुई, टमाटर प्यूरी - 1 कप, जीरा - 5 ग्राम, हल्दी-आधा चम्मच, कसूरी मेथी, गरम मसाला - 1-1 चम्मच, तेल-एक बड़ा चम्मच, नमक - स्वादानुसार।

विधि: कढ़ाई में तेल गरम करें व जीरा डालकर उसे भूनें और मशरूम डाल दें। इसे उच्च ऑच पर दो मिनट के लिये जल्दी-जल्दी हिलाएं ताकि पानी सूख जायें। अब इसमें मटर, शिमला मिर्च नमक, गरम मसाला डालकर दो मिनट के लिये पकायें व ऑच से उतार दें। पुनः कढ़ाई में तेल गरम करें और लाल मिर्च को गरही भूरी होने तक तलें। अब इसमें प्याज, अदरक तथा लहसुन का पेस्ट डालकर भूरा होने तक भूनें व हरी मिर्च, हल्दी तथा टमाटर प्यूरी डालते हुए तब तक पकाएं जब तक कि मसाला तेल छोड़ने लगे। अब इसमें अन्य मसाले, कसूरी मेथी व पहले तैयार मशरूम डालें व दो-तीन मिनट के लिये पकाएं। अंत में धनिया बुरककर, तन्दूरी रोटी के साथ गरम-गरम परोसें।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

चुकंदर की उत्पादन तकनीक

नीरज पाली (सहायक प्राध्यापक, हॉर्टिकल्चर)
कृषि विज्ञान संस्थान, सेज यूनिवर्सिटी इंदौर (म.प्र.)
भूषण निळकंठ कानवटे (छात्र)
कीट विज्ञान विभाग, शुआट्स नैनी, प्रयागराज (उ.प्र.)

चुकंदर एक ऐसा फल है, जिसका सेवन सब्जी के रूप में पकाकर या बिना पकाये ऐसे भी किया जा सकता है। चुकंदर को मीठी सब्जी भी कह सकते है, क्योकि इसका स्वाद खाने में हल्का मीठा होता है। इसके पत्तो को भी सब्जी के रूप में इस्तेमाल करते हैं। चुकंदर में अनेक प्रकार के पोषक तत्व मौजूद होते है, जो मानव शरीर के लिए काफी लाभदायक होते हैं। डॉक्टर भी खून की कमी, अपच, कब्ज, एनीमिया, कैंसर, हृदय रोग, पित्ताशय विकारों, बवासीर और गुर्दे के विकारों को दूर करने के लिए चुकंदर का सेवन करने की सलाह देते हैं। चुकंदर को सलाद, जूस और सब्जी के रूप में उपयोग करते हैं। चुकंदर की बहुत अधिक मांग होती है, जिस वजह से किसान भाई चुकंदर की खेती कर अच्छी कमाई कर सकते हैं।

तो आइये इस लेख में हम चकुंदर की खेती के बारे में व विस्तार से समझते हैं।

चुकंदर की खेती के लिए उपयुक्त मिटटी, जलवायु और तापमान: चुकंदर की खेती को करने के लिए बलुई दोमट मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसकी खेती को जलभराव वाली भूमि में नहीं करना चाहिए। जलभराव की स्थिति में फल सड़न जैसी समस्या उत्पन्न हो जाती है। चुकंदर की खेती में भूमि का pH मान 6 से 7 के मध्य होना चाहिए। ठंडे प्रदेशो को चुकंदर की खेती के लिए उपयुक्त माना जाता है, तथा सर्दियों का मौसम इसके पौधों के विकास के लिए काफी अच्छा माना जाता है। चुकंदर की फसल की अधिक बारिश की आवश्यकता नहीं होती है, जिससे अधिक वर्षा इसकी पैदावार को प्रभावित कर सकती है। चुकंदर के पौधों को अंकुरित होने के लिए सामान्य तापमान की जरूरत होती है, तथा 20 डिग्री तापमान को इसके विकास के लिए उपयुक्त माना जाता है।

चुकंदर की उन्नत किस्में

एम.एस.एच.-102: इस किस्म के पौधों को तैयार होने में तीन महीने का समय लगता है। यह चुकंदर की अधिक पैदावार देने वाली किस्म है, जो प्रति हेक्टेयर के हिसाब से 250 क्विंटल का उत्पादन करती है।

क्रिमसन ग्लोब किस्म

चुकंदर की यह किस्म कम समय में अधिक पैदावार देने के लिए जानी जाती है। इसके फलो को तैयार होने में 70 से 80 दिन का समय लगता है। इस किस्म के पौधों के फलो का रंग बाहर और अंदर हल्का लाला होता है। यह प्रति हेक्टेयर के हिसाब से 300 क्विंटल की पैदावार देते हैं। इसके अतिरिक्त भी चुकंदर की कई किस्मे पाई जाती है जिसमे अर्ली वंडर, रोमनस्काया, डेट्रॉइट डार्क रेड, मिश्र की क्रॉस्बी किस्मे शामिल है।

चुकंदर के खेत की तैयारी बुवाई और उर्वरक प्रबंधन: चुकंदर की फसल को करने से पहले उसके खेत को अच्छे से तैयार कर लेना चाहिए। इसके लिए खेत की अच्छे से गहरी जुताई कर देनी चाहिए। इसके बाद खेत को कुछ समय के लिए ऐसे ही खुला छोड़ देना चाहिए, जिससे खेत की मिट्टी में अच्छी तरह से धूप लग जाए। चूंकि चुकंदर के पौधे भूमि की सतह पर रहकर विकास करते है, जिस वजह से उसकी जड़े अधिक गहराई में खनिज प्रदार्थो को ग्रहण नहीं कर पाती है, इसलिए चुकंदर के खेत को तैयार करते वक़्त अच्छे से उर्वरक की मात्रा को देना चाहिए। जूते हुए खेत में 15 गाड़ी पुरानी गोबर की खाद को डालकर कल्टीवेटर के माध्यम से दो से तीन तिरछी जुताई कर खाद को मिट्टी में अच्छे से मिला दें। खाद को मिट्टी में मिलाने के बाद खेत में पानी लगा कर पलेव कर देना चाहिए। इसके बाद खेत को 4 से 5 दिन के लिए ऐसे ही छोड़ देना चाहिए। जब खेत की मिट्टी ऊपर से सूखी दिखाई देने लगे तब रोटावेटर के माध्यम से सघन जुताई कर दें। इसके बाद खेत में पाटा लगा कर जुताई कर दे, जिससे भूमि समतल हो जाएगी और जलभराव जैसी समस्या नहीं होगी। खेत को तैयार करने के बाद उसमे चुकंदर के पौधों को लगाने के लिए मेड को तैयार कर लेना चाहिए। चुकंदर के खेत में रासायनिक उर्वरक के लिए नाइट्रोजन 40 KG, फास्फोरस 60 KG और 80 KG पोटाश की मात्रा को प्रति हेक्टेयर के हिसाब से आखरी जुताई के वक्त छिड़काव कर देना चाहिए।

चुकंदर के बीजों की रोपाई का सही समय और तरीका

चुकंदर के बीजो की रोपाई के लिए ठंडी जलवायु उचित मानी जाती है, इसके लिए इसके बीजो की रोपाई को अक्टूबर और नवम्बर के माह में करना चाहिए। बीजो की रोपाई में चुकंदर के उन्नत किस्म के बीजो को खरीदना चाहिए, तथा बीजो की रोपाई से पहले उन्हें उपचारित कर ले, जिससे पौधों में लगने वाले रोगो का खतरा कम हो जाता है। एक हेक्टेयर के खेत में तक़रीबन 8 किलो बीजो की आवश्यकता होती है। चुकंदर के बीजो की रोपाई को समतल और मेड दोनों ही तरह की भूमि में किया जा सकता है। समतल भूमि में रोपाई के लिए खेत में उचित दूरी रखते हुए क्यारियों को तैयार कर लेना चाहिए, इस क्यारियों में एक फ़ीट की दूरी रखते हुए पंक्तियो में बीजो की रोपाई की जाती है। इसमें प्रत्येक पंक्ति के बीच में एक फ़ीट की दूरी तथा प्रत्येक बीज को 20 से 25 सेंटीमीटर की दूरी में लगाना चाहिए। यदि आप इसके बीजो की रोपाई को मेडो पर करना चाहते हैं। प्रत्येक मेड के बीज में एक फुट की दूरी तथा प्रत्येक बीज के बीच में 15 सेंटीमीटर दूरी अवश्य रखें।

चुकंदर के पौधों की सिंचाई

चुकंदर के पौधों को अच्छे से अंकुरित होने के लिए नमी की आवश्यकता होती है। इसलिए बीजो की रोपाई के तुरन्त बाद इसकी पहली सिंचाई कर देनी चाहिए, तथा बीज अंकुरण के बाद पानी की मात्रा को कम कर देना चाहिए।

चुकंदर के पौधों को जलभराव की स्थिति से बचाने के लिए 10 दिनों के अंतराल में सिंचाई करनी चाहिए।

चुकंदर के पौधों में खरपतवार नियंत्रण

चुकंदर के पौधों पर खरपतवार नियंत्रण करने के लिए रासायनिक और प्राकृतिक विधि का इस्तेमाल किया जाता है। यदि आप रासायनिक तरीके से खरपतवार पर नियंत्रण करना चाहते है, तो उसके लिए आपको पेंडीमेथिलीन की उचित मात्रा का छिड़काव बीज रोपाई के तुरंत बाद करना चाहिए। इसके बाद खेत में खरपतवार कम मात्रा में दिखाई देते हैं। यदि आप खेत में खरपतवार नियंत्रण प्राकृतिक तरीके से करना चाहते है, तो उसके लिए आपको बीज रोपण के 15 से 20 दिन बाद निराई-गुड़ाई कर देनी चाहिए। इसके बाद समय- समय पर खेत में खरपतवार दिखाई देने पर निराई-गुड़ाई कर देनी चाहिए। चुकंदर के पौधों में लगने वाले रोग और उनकी रोकथाम चुकंदर के पौधों में बहुत ही कम रोग देखने को मिलते है। किंतु कुछ रोग ऐसे है, जो इसके पौधों को प्रभावित करते। जिससे बचाव के लिए बताये गए उपायों का इस्तेमाल करना चाहिए।

लीफ स्पॉट रोग

इस लीफ स्पॉट रोग का प्रभाव पौधों की पत्तियों पर देखने को मिलता है। इस रोग के लग जाने से आरम्भ में पत्तियों पर भूरे कोणीय धब्बे दिखाई देने लगते हैं। इस रोग का प्रभाव बढ़ जाने पर पत्तिया सूख कर गिरने लगती है। यह रोग फलो को वृद्धि को प्रभावित करता है, जिससे पत्तिया सूखकर गिरने लगती है। चुकंदर के पौधों पर एग्रीमाइसीन की उचित मात्रा का छिड़काव कर इस रोग की रोकथाम की जा सकती है।

चुकंदर के फसल की कटाई और उपज

चुकंदर के पौधे तीन से चार महीने में पैदावार देने के लिए तैयार हो जाते है। इसके फल पक जाने पर पौधों की पत्तिया पीले रंग की दिखाई देती है। उस समय इसके फलो की खुदाई कर लेनी चाहिए, फलो की खुदाई से पहले खेत में थोड़ा पानी लगा देना चाहिए, जिससे फलो को जमीन से निकालते समय आसानी हो। फलो की खुदाई कर उन्हें अच्छे से धोकर मिट्टी साफ कर लेनी चाहिए। इसके बाद उन्हें छायादार जगह पर अच्छे से सुखा कर बाजार में बेचने के लिए तैयार कर लेना चाहिए। चुकंदर के पौधे अलग-अलग किस्मो के आधार पर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से 150 से 300 क्विंटल की पैदावार देते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

मनमोहक गुड़कारी शहतूत

डॉ. अंजलि वर्मा (विषय वस्तु विशेषज्ञ)
डॉ. एस.एन. सिंह प्राध्यापक एवं अध्यक्ष
कृषि विज्ञान केन्द्र बस्ती, आचार्य नरेन्द्रदेव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

परिचय

शहतूत खाने में स्वादिष्ट और शीतल फल है। यह सेहत के लिए बेहद फायदेमंद होता है। शहतूत का वानस्पतिक नाम 'मोर्स अल्बा' है। इसे संस्कृत और फारसी भाषाओं में 'तूत', मराठी में 'तूती' तथा तुर्की भाषा में 'दूत' कहते हैं। भारत में यह पंजाब, कश्मीर, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश एवं उत्तरी पश्चिमी हिमालय में पाया जाता है।

शहतूत दो प्रकार का होता है बड़ा शहतूत और छोटा शहतूत। शहतूत का फल लाल, काला और नीले रंग में पाया जाता है। प्रायः शहतूत के पेड़ का प्रयोग सिल्क बनाने हेतु किया जाता है, लेकिन अपने चिकित्सीय गुणों के कारण भी शहतूत का फल, पत्ती और बीज लोगो के द्वारा खाने में प्रयोग में लाया जाता है और इसका सेवन करने से कई प्रकार की बीमारियों से निजात मिलती है। इसका पुष्पकाल एवं फलकाल जनवरी से जून तक होता है।

शहतूत के फल में प्रोटीन, वसा, कार्बोहायड्रेट, रेशा, खनिज लवण (जैसे-कैल्शियम एवं फॉस्फोरस), विटामिन्स (जैसे- ए, बी एवं सी) पेक्टिन, सिट्रिक अम्ल एवं मैलिक अम्ल पाया जाता है शहतूत ऐसा फल है जिसे कई लोग कच्चा और कुछ लोग पक जाने पर खाना पसंद करते हैं। गर्मी में शहतूत अपने रसीले, स्वादिष्ट स्वाद के कारण सभी का मन मोह लेता है और इस का सेवन गर्मी के प्रकोप को कम भी करता है। आयुर्वेद में शहतूत के कई फायदों के बारे में बताया गया है। इसका इस्तेमाल कई प्रकार के खाद्य पदार्थ बनाने में भी होता है जैसे पेय पदार्थ (शरबत, जूस और सिरप),चटनी, फल पाउडर, जैली, जैम और स्क्वैश आदि।

शहतूत में पाए जाने वाले पोषक तत्व

नमी-85-88%, कार्बोहाइड्रेट-7.8-9.0%, प्रोटीन-0.5-1.4%, वसा-0.3-0.5%, रेशा-1.30%, खनिज पदार्थ-0.8-1.0%, कैल्शियम-0.17-0.39%, पोटेशियम-1.00-1.49%, मैग्नीशियम-0.09-0.10%, सोडियम-0.01-0.02%, फास्फोरस-0.18-0.21%, आयरन-

0.17-0.17%, विटामिन सी-12.50 मिलीग्राम, कैरोटीन-0.17%, निकोटिनिक अम्ल-0.7-0.8%, मैलिक अम्ल-1.1-1.8% और खाद्य भाग - 100%

शहतूत का सेवन करने से फायदे

1.फल

- शहतूत में मौजूद गुण शरीर में पानी की कमी को दूर करके प्यास को बुझाते हैं।
- शहतूत जुकाम और गले के रोगों में लाभदायक है। पित्त बुखार में शहतूत का रस या उसका शर्बत पिलाने से प्यास, गर्मी तथा घबराहट दूर हो जाती है।
- 50 से 100 मिलीलीटर शहतूत की छाल का काढ़ा या 10 से 50 ग्राम शहतूत के फल का रस सुबह-शाम सेवन करने से कफ (बलगम) खांसी दूर होती है।
- शहतूत खाने से पाचनशक्ति बढ़ती है। कब्ज संबंधी रोग शहतूत खाने से ठीक होते हैं।
- शहतूत जलन को शांत करता है, प्यास को दूर करता है और कफनाशक होता है। यह शरीर में शुद्ध खून को पैदा करता है, पेट के कीड़ों को समाप्त करता है।
- शहतूत में विटामिन-ए, कैल्शियम, फॉस्फोरस और पोटेशियम अधिक मात्रा में मिलता हैं। जिनके शरीर में अम्ल, आमवात, जोड़ों का दर्द हो, उन लोगों के लिए शहतूत खासतौर पर लाभदायक है।
- शहतूत के रस को पानी में मिलाकर कुल्ला करने से मुंह के छाले दूर होते हैं।
- यदि गले में जलन हो रही हो तो शहतूत का रस या शहतूत का शरबत पीने से गले की जलन दूर होती है।
- गर्मियों में शहतूत आपको लू से बचाता है। लू से बचने के लिए हमेशा शहतूत खाएं।
- शहतूत सेवन करने से लीवर की बीमारी, पेशाब में जलन और गुर्दो की बीमारी भी ठीक होती है।
- पेशाब का रंग पीला हो तो शहतूत के रस में चीनी मिलाकर पीने से रंग साफ हो जाता है।
- शहतूत के रस में कलमीशोरा को पीसकर नाभि के नीचे लेप करने से पेशाब मे धातु आना बंद हो जाती है।
- शहतूत खाने से आंखों की रोशनी बढ़ती है और इसमें मौजूद गुण इंसान को हमेशा जवां बनाए रखते हैं।
- शहतूत का सेवन चेहरे से भूरे दाग धब्बे को साफ करने में मदद करता है।
- शहतूत के जूस का सेवन करने से चेहरे की झुर्रियों को मिटने में मददगार है और इससे चेहरा तरोताजा हमेशा बना रहता है।
- शहतूत में एंटीएजिंग यानी उम्र को रोकने वाला गुण होता है। साथ ही यह त्वचा को जवानी की तरह जवां बनाये रखने में मददगार है।
- शहतूत का शर्बत बनाकर पीने से दिल की तेज धड़कन सामान्य होती है। हृदय की निर्बलता (दिल की कमजोरी) नष्ट होती है।
- इसका रस सिर में लगाने से बाल घने होते हैं।
- शहतूत की औषधियों में रंग और सुगंध डालने हेतु शहतूत के रस से बनाया गया शर्बत काम में लिया जाता है।

पत्ती

- शहतूत के 6 कोमल पत्तों को चबाकर पानी के साथ सेवन करने से अपच (भोजन का ना पचना) के रोग मे लाभ होता है। शहतूत को पकाकर शर्बत बना लें फिर इसमें छोटी पीपल का चूर्ण मिलाकर पिलाने से लाभ होता है।
- शहतूत के पत्तों कों खटमल वाली जगह पर रखने से खटमल खत्म हो जाती है।
- शहतूत के पत्तों को पीसकर उसके लेप को गर्म करके फोड़ों के उपर लगाने से फोड़े ठीक हो जाते हैं और घाव भी जल्दी भर जाते हैं।
- खुजली और दाद में भी शहतूत के पत्तों का लेप लगाने से वे जल्दी ठीक हो जाते हैं।
- शहतूत की पत्ती खाने से खून में ग्लूकोज की मात्रा कम होती है। इसलिए ये मधुमेह के रोगियों हेतु बहुत फायदेमंद है। 2.5 से 5 ग्राम शहतूत की पत्ती के सेवन से 30 मिनट पहले ली गई शुगर पूरी तरह नियंत्रित हो जाती है।
- शहतूत की पत्तियों को गुनगुने पानी से भरे टब में भींगो दें। इस पानी के प्रयोग करने से त्वचा के रोमछिद्र खुल जाते हैं और शरीर को साफ सुथरा बनाता है। साथ ही यह शरीर के चयापचय को भी बढाता है।

बीज और पेड़ की छाल

- शहतूत के बीजों को पीस कर लगाने से पैरों की बिवाईयों में लाभ होता है
- शहतूत के पेड़ की छाल का काढ़ा बनाकर पीने से पेट के कीड़े समाप्त हो जाते हैं।

निष्कर्ष

शहतूत में कई गुण हैं जो कई तरह की बीमारियों से बचाते हैं तथा तन और मन दोनों को स्वस्थ रखता हैं। इसलिए शहतूत का सेवन सभी को करना चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

गुग्गुल की खेती

डॉ. ज्ञान श्री कौशल शोधार्थी, वानिकी (वन-संवर्धन और कृषि वानिकी), सैम हिगिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

मोहम्मद वामिक पीएच.डी. शोध छात्र (सब्जी विज्ञान विभाग), सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

परिचय: गुग्गुल का पौधा बहुत फायदेमंद होता है, गुग्गुल का वानस्पतिक नाम कॉमिफोरा है। इस पौधे के तने और शाखाओं से निकलने वाले गोंद जैसा चिपचिपा पदार्थ गुग्गुल कहलाता है। गुग्गुल एक छोटी झाड़ी है जो बसीरसी परिवार से संबंधित है। पौधे में चमड़े की बनावट के साथ छोटी, कांटेदार शाखाएं और पत्तियां होती हैं। ताजा गुग्गुल का रंग पीला हो जाता है और पुराना होने पर काला हो जाता है। झाड़ी सर्दियों में झड़ जाती है और अप्रैल-मई के दौरान गोंद निकालने हेतु भंडार अधिक होता है। यह पौधा सूखे और बंजर इलाकों में भी उगता है, इसलिए किसान अपनी खाली जमीन पर भी इसकी खेती कर सकते हैं। गुग्गुल गम की बाजार में मांग है क्योंकि इसका उपयोग विभिन्न आयुर्वेदिक, एलोपैथिक और यूनानी दवाओं में किया जाता है। औषधीय गुणों से भरपूर गुग्गुल का संरक्षण जरूरी है और संरक्षण के लिए जरूरी है कि गुग्गुल खेती को बढ़ावा दिया जाए। गुग्गुल उत्पादक केंद्र गुजरात में कच्छ वन प्रभाग और राजस्थान में जोधपुर वन प्रभाग हैं। गुग्गुल की बढ़ती मांग के कारण यह जरूरी हो गया है कि इसके वैज्ञानिक और निष्कर्षण हेतु कदम उठाए जाएं।

गुग्गुल के उपयोग

जलवायु और मिट्टी: गुग्गुल की खेती गर्म और शुष्क मौसम में अच्छी होती है। यह 40-45 डिग्री सेल्सियस से 3 डिग्री सेल्सियस तक के तापमान को सहन कर सकता है। यह समुद्र तल से 600 - 1100 मीटर तक की ऊंचाई पर बढ़ता है। यह 500-750 मिमी की वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए अच्छी तरह से अनुकूल है। पहाड़ी क्षेत्रों में, यह जंगलों में झाड़ियों की तरह बढ़ता है। इसका पौधा 1 से 3 मीटर ऊंचा होता है। पौधे झाड़ीदार होते हैं और शाखाएं कांटेदार होती हैं। इसकी पत्तियां ठंड के मौसम में गिरती हैं। इसकी खेती लवणीय और शुष्क भूमि में भी की जा सकती है। दोमट और रेतीली दोमट मिट्टी जिसकी पीएच मान 7.5 से 9.0 के बीच हो तो इसकी खेती भी अच्छी तरह से की जा सकती है, इसे काली मिट्टी में भी उगाया जा सकता है।

खेती के क्षेत्र: भारत में गुग्गुल पौधे की खेती मुख्य रूप से कुछ क्षेत्रों में केंद्रित है जो इसके विकास हेतु अनुकूल जलवायु और मिट्टी की स्थिति प्रदान करते हैं। यहाँ कुछ प्रमुख क्षेत्र हैं जहाँ गुग्गुल की खेती का अभ्यास किया जाता है:

1.राजस्थान: राजस्थान राज्य, विशेष रूप से शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्र, अपनी महत्वपूर्ण गुग्गुल खेती के लिए जाना जाता है। जैसलमेर, बाड़मेर, बीकानेर और जोधपुर जिलों में गुग्गुल के पौधे की वृद्धि के लिए उपयुक्त परिस्थितियां हैं।

2.गुजरात: गुजरात में, कच्छ क्षेत्र और सौराष्ट्र क्षेत्र के कुछ हिस्से गुग्गुल की खेती के लिए उपयुक्त हैं। इन क्षेत्रों की शुष्क और गर्म जलवायु, उपयुक्त मिट्टी के प्रकारों की उपलब्धता के साथ, गुग्गुल पौधों की सफल वृद्धि का समर्थन करती है।

3.मध्य प्रदेश: मप्र के कुछ जिलों जैसे नीमच, रतलाम, मंदसौर और उज्जैन में भी गुग्गुल की खेती की जाती है। इन क्षेत्रों में गुग्गुल की खेती हेतु आवश्यक जलवायु परिस्थितियां और मिट्टी की विशेषताएं हैं।

4 .हरियाणा: हरियाणा के कुछ हिस्सों, विशेष रूप से शुष्क और शुष्क जलवायु वाले क्षेत्र भी गुग्गुल पौधे की खेती के लिए उपयुक्त हैं। भिवानी, महेंद्रगढ़ और रेवाड़ी जिलों को गुग्गुल की खेती की गतिविधियों के लिए जाना जाता है।

5.उत्तर प्रदेश: गुग्गुल की खेती उत्तर प्रदेश के विशिष्ट क्षेत्रों में पाई जा सकती है, जिसमें आगरा, मथुरा और इटावा जिले शामिल हैं। ये क्षेत्र सफल गुग्गुल पौधे के विकास के लिए आवश्यक पर्यावरणीय स्थिति प्रदान करते हैं।

भूमि की तैयारी: भूमि पहले से अच्छी तरह से तैयार की जाती है। अप्रैल महीने में भूमि की जुताई की जाती है जिसमें 6× 6 फीट की दूरी होती है और 2×2 फीट की मात्रा वाले गड्ढे खोदे जाते हैं। इन गड्ढों को 5 किलोग्राम खाद या खाद से भरा जाता है और दीमक से बचने के लिए 500 ग्राम नीम की छाल भी इसके ऊपर फैला दी जाती है।

बुवाई: ठंड के मौसम के अलावा इसके बीज साल भर बनते रहते हैं। लेकिन जुलाई से सितंबर तक प्राप्त होने वाले बीजों को अच्छा माना जाता है क्योंकि ये जल्दी अंकुरित हो जाते हैं। ग्राफ्टेड पौधों को 3×3 मीटर की दूरी पर रोपित करें, इसके लिए 30×30×30 सेमी के गड्ढे तैयार करें और उसमें सड़ी हुई गोबर की खाद डालें। जुलाई के महीने में बारिश के बाद रोपण किया जाना चाहिए।

प्रचार विधि: गुग्गल को बीज या वानस्पतिक रूप से प्रचारित किया जा सकता है।

बीज द्वारा: बीज प्रकृति में प्रमुख प्रसार स्रोत हैं। जुलाई से सितंबर के बीज की तुलना में अप्रैल मई के बीज कम व्यवहार्य हैं। परिपक्व फल इकट्ठा करें और बीज निकालें। मानसून के मौसम में बीजों को नर्सरी बेड में बोया जाना चाहिए। बीज प्रसार का प्राकृतिक तरीका है; खेती के लिए मैला, अच्छी तरह से सूखा अत्यधिक निम्नीकृत भूमि को प्राथमिकता दी जाती है। मानसून के बाद का तापमान उच्च सापेक्ष आर्द्रता के साथ न्यूनतम 30-37 डिग्री सेल्सियस अधिकतम 20-25 डिग्री सेल्सियस के बीच रहता है। परिपक्व बीजों को बोया जाता है और नर्सरी बेड के माध्यम से रोपाई की जाती है और फिर 6 महीने के बाद प्रत्यारोपित किया जाता है। बीज अंकुरण की दर बहुत खराब है अर्थात केवल 5%, लेकिन बीज अंकुरण द्वारा उत्पादित अंकुर स्वस्थ होते हैं और उच्च वेग वाली हवा का सामना कर सकते हैं।

स्टेम कटिंग द्वारा: वानस्पतिक प्रसार के लिए, जून या अक्टूबर-नवंबर के दौरान नर्सरी बेड पर स्टेम कटिंग उठाई जाती है। वैकल्पिक रूप से, 6-8 नोड्स के साथ स्टेम कटिंग को मदर प्लांट से लिया जा सकता है और बारिश के मौसम में सीधे खेत में लगाया जा सकता है। कटिंग में लगाए जाते हैं, जून नर्सरी में उन्हें बढ़ाने के लिए 15 सेमी की गहराई पर। बेहतर रूटिंग के लिए उचित मिट्टी की नमी आवश्यक है। रूटिंग 21 दिनों के बाद 30 सेमी लंबे स्टेम कटिंग से शुरू होती है जिसमें 1.5 -2.0 सेमी व्यास आईबीए @ 250 पीपीएम होता है) स्टेम कटिंग का उपचार फायदेमंद होता है जो सामान्य परिस्थितियों में 30% की तुलना में रूटी 8 एनजी को लगभग 70% तक बढ़ाता है। पौधों को 6 माह हेतु नर्सरी में रखा जाता है और मानसून के दौरान जड़ कटाई को 2 × 2 मीटर की दूरी पर खेत में प्रत्यारोपित किया जाता है।

सिंचाई: खेतों में स्थापना के बाद, इसे सिंचाई की आवश्यकता होती है; लेकिन, जब पौधा परिपक्वता प्राप्त करता है यानी 6-7 साल की उम्र में, उसे गर्मियों और सर्दियों के दौरान सिंचाई की आवश्यकता होती है, मौसम में कम से कम दो बार।

निराई: फसल के लिए निराई-गुड़ाई जरूरी है। सितंबर और दिसंबर के महीने में इसका लाभ मिलता है।

पौधों की देखभाल: गुग्गुल के पौधों को पहले एक साल के लिए अधिक देखभाल की आवश्यकता होती है। नियमित रूप से खरपतवारों का प्रबंधन करें और आवश्यकतानुसार एक या दो सिंचाई करें।

कीट और रोग प्रबंधन: गुग्गुल के पौधे कीटों और रोगों के लिए अपेक्षाकृत प्रतिरोधी होते हैं। हालांकि, कुछ सामान्य कीट जैसे एफिड्स, माइलबग्स और स्केल कीड़े पौधों को संक्रमित कर सकते हैं। नियमित निरीक्षण और उपयुक्त जैविक कीटनाशकों का उपयोग इन कीटों को नियंत्रित करने में मदद कर सकता है। उचित जल निकासी सुनिश्चित करके और पौधों की अच्छी स्वच्छता बनाए रखकर जड़ सड़न और पत्ती के धब्बे जैसे रोगों को कम किया जा सकता है।

कटाई: गोंद राल का संग्रह और दोहन पौधे की पूर्ण परिपक्वता प्राप्त करने के बाद, इसे मुख्य तने से टैप किया जाता है। दिसंबर-फरवरी के दौरान टैपिंग की जाती है। राल नलिकाएं कैंबियल परत के पास छाल के हिस्से में होती हैं। 7.5 सेमी व्यास प्राप्त करने वाला पौधा दोहन के लिए उपयुक्त है। आमतौर पर 1.5 सेमी गहरे गोलाकार चीरे लगाए जाते हैं। गुग्गुल पदार्थ की तरह पीले सफेद सुगंधित लेटेक्स के रूप में बाहर निकलता है और धीरे-धीरे जम जाता है। इसे मैन्युअल रूप से या भाले के साथ एकत्र किया जाता है। संग्रह 10-15 दिनों के अंतराल पर किया जाता है। एकत्रित गोंद को उसकी शुद्धता के अनुसार वर्गीकृत किया जाता है।

गम कैसे निकालें: आमतौर पर गुग्गुल का पेड़ 6-8 साल बाद ही तैयार होता है। तभी आप इसकी शाखाओं से गोंद निकाल सकते हैं। मसूड़ों को हटाने के लिए मुख्य तने या शाखाओं पर 1.5 सेमी गहरे 30 सेमी और 60 डिग्री के कोण पर समान दूरी पर गोलाकार चीरे लगाएं। कटाई के बाद, राल को सुखाया जाता है और औषधीय उपयोग के लिए पाउडर, कैप्सूल या अर्क जैसे विभिन्न रूपों में संसाधित किया जाता है। चीरा लगाने वाली जगह से सफेद और पीले रंग का सुगंधित गोंद निकलता है, जो धीरे-धीरे ठोस होता जाता है। गोंद इकट्ठा करते समय साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखें। 6 से 8 साल पुरानी गुग्गुल झाड़ियों से 300-400 ग्राम गोंद निकलता है। गुग्गुल गोंद को बाजार में 900 रुपये प्रति किलो की दर से बेचा जा सकता है। छठे वर्ष से गुग्गुल गोंद की उपज 200 ग्राम से बढ़कर 400 ग्राम प्रति पौधा हो जाती है। पांच साल के भीतर कुल गुग्गुल गोंद की उपज 1600 ग्राम प्रति पौधा होती है जो 3200 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर @ 2000 पौधे प्रति हेक्टेयर के अनुरूप होती है।

आर्थिक क्षमता: गुग्गुल खेती भारत में महत्वपूर्ण आर्थिक क्षमता प्रस्तुत करती है। हर्बल और आयुर्वेदिक उत्पादों की बढ़ती मांग ने किसानों के लिए व्यावसायिक पैमाने पर गुग्गुल की खेती करने के अवसर पैदा किए हैं। पौधे के औषधीय गुण इसे दवा और न्यूट्रास्यूटिकल उद्योगों में एक मूल्यवान वस्तु बनाते हैं। इसके अतिरिक्त, गुग्गुल राल निर्यात देश के लिए विदेशी मुद्रा आय में योगदान देता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

हाइब्रिड पौधपाति तकनीकों में प्रगति विकसित और सुधारित पौधशास्त्र

शुभम कुमार (शोध छात्र), आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग चन्द्रशेखर आजाद कृषि एंव प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

त्र्यंबक गुर्जर (शोध छात्र) सस्य विज्ञान सरदार वल्लभभाई पटेल यूनिवर्सिटी आफ एग्रीकल्चर एंड टेक्नोलॉजी, मेरठ (उ.प्र.)

मयंक तिवारी पी.एच.डी.स्कॉलर, आनुवंशिकी और पादप प्रजनन, गोविन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय

रवि दीक्षित (शोध छात्र) बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

केशव बाबू (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एंव प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

प्रस्तावना

पौधशास्त्र क्षेत्र में हाइब्रिड बीजों का उपयोग कृषि क्षेत्र में उत्कृष्टता को बढ़ावा देने के लिए किया जा रहा है। हाइब्रिड पौधपाति तकनीकें उन्नत और सुधारित बनाई जा रही हैं जो किसानों को उच्च उत्पादकता और उच्च गुणवत्ता वाले फसलों का प्रदान करने का उद्देश्य रखती हैं।

संकर बीज के उदाहरण

चुकंदर हाइब्रिड सीड
खीरा हाइब्रिड बीज
टमाटर
भिंडी हाइब्रिड
बैंगन हाइब्रिड बीज

मिर्च हाइब्रिड बीज ;हाइब्रिड बीज आर्गेनिक होते हैं ये किसी भी लैब या फैक्ट्री में नहीं बनते, यह परागण कराकर प्राकृतिक रूप से तैयार होते है।

इस लेख में हम हाइब्रिड पौधपाति तकनीकों के उन्नतीकरण के कुछ मुख्य पहलुओं पर चर्चा करेंगे।

आनुवंशिक और भौतिक तकनीकें का समन्वय

हाइब्रिड बीजों के निर्माण में आनुवंशिक और भौतिक तकनीकों का संगम एक महत्वपूर्ण पहलु है। आनुवंशिक तकनीकें जीनोमिक्सए ट्रांसजेनिक तकनीकें और मॉलेक्युलर मार्कर एसिस्टेड सिलेक्शन के माध्यम से जीनोम के विभिन्न हिस्सों की अध्ययन करने में मदद करती हैं जबकि भौतिक तकनीकें पौधों के विकास की गति को तेजी से बढ़ाने में मदद करती हैं।

मॉलेक्युलर मार्कर एसिस्टेड सिलेक्शन

प्रौद्योगिकी में होने वाले विकासों के साथ मॉलेक्युलर मार्कर एसिस्टेड सिलेक्शन भी हाइब्रिड बीजों के निर्माण में सुधार कर रहा है। यह तकनीक विशिष्ट जीनोमिक स्थानों का पता लगाने में मदद करती है जो बीजों की उच्च गुणवत्ता के लिए महत्वपूर्ण हैं।

प्राकृतिक संख्या और बायोटेक्नोलॉजी का इस्तेमाल

हाइब्रिड बीजों के निर्माण में प्राकृतिक संख्या का महत्वपूर्ण योगदान है जो पौधों की सुदृढ़ता और प्रतिरक्षा शक्ति में सुधार करने में मदद करती है। इसके साथ ही बायोटेक्नोलॉजी के उन्नत साधनों का इस्तेमाल करके विशिष्ट गुणवत्ता युक्त हाइब्रिड बीज विकसित किए जा रहे हैं।

सुपरियर हाइब्रिड निर्माणविकसित चयन और उपाय

नए तकनीकी उन्नतियों ने सुपरियर हाइब्रिड निर्माण की संभावना को बढ़ा दिया है। यह तकनीक विभिन्न प्रजातियों के बीजों को संयोजित करने के लिए उन्नत अंकगणितीय मॉडल्स का उपयोग करती है जिससे बीजों की बेहतर गुणवत्ता और प्रदर्शन मिलता है।

अनुकूलित सांविदानिक उपाय

हाइब्रिड पौधपाति तकनीकों में अनुकूलित सांविदानिक उपायों का अध्ययन भी किया जा रहा है। इसमें विशेषज्ञता प्रबंधन और प्रौद्योगिकी का संगम होता है जो बीजों की पैदावार में बेहतरीनी करने में मदद करता है। उदारीकरण और समर्थन हाइब्रिड पौधपाति तकनीकों का उदारीकरण और किसानों को इस तकनीक का सही तरीके से उपयोग करने के लिए समर्थन प्रदान करना महत्वपूर्ण है।

समापन

हाइब्रिड पौधपाति तकनीकें कृषि क्षेत्र में एक नई क्रांति की ओर बढ़ रही हैं जो किसानों को उच्च उत्पादकताए सुदृढ़ता और उच्च गुणवत्ता वाले फसलों उत्पन्न करने में मदद कर रही हैं। इस तकनीक के प्रयोग से हम विभिन्न प्रजातियों के बीजों की विकसित कर सकते हैं जो विभिन्न जलवायु और भौगोलिक स्थितियों के लिए अनुकूलित हैं। इससे न केवल किसानों को लाभ होगा बल्कि यह भी आवश्यक भोजन सुरक्षा को बढ़ावा देगा और कृषि उत्पादन को सुस्त और स्थायी बनाए रखेगा।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

ग्रामीण विकास में कृषि विज्ञान केन्द्र की भूमिका

नवनीत मौर्य शोध छात्र, कृषि प्रसार, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

परिचय: कृषि हमारी अर्थव्यवस्था का आधार है और अर्थव्यवस्था की प्रगति का सीधा संबंध खेती की प्रगति से है किसानो के उत्पादन को बढ़ाने के लिए कृषि शिक्षकों, प्रसार क्षेत्र में कार्यरत पेशेवरों और किसानों को सही ढंग से प्रशिक्षित करना महत्वपूर्ण है। जिस तरह लोगों को सेहतमंद रखने और जरूरी स्वास्थ्य सलाह देने के लिए अस्पतालों में डॉक्टर उपलब्ध रहते हैं, उसी तरह ही किसानों की समस्याओं के समाधान और फसलों में लगने वाली बीमारियों के इलाज के लिए कृषि विज्ञान केंद्र काम कर रहे हैं। देश के प्रत्येक जिले में किसानों की मदद के लिए कृषि विज्ञान केंद्र संचालित हैं जो खेती किसानी से जुड़ी प्रत्येक समस्या के समाधान के लिए वैज्ञानिक मौजूद रहते हैं। शुरूआती दौर में एक प्रशिक्षण केंद्र के रूप में कार्य करने वाले कृषि विज्ञान केंद्र अब तकनीकों के परीक्षण, प्रदर्शन, प्रशिक्षण और प्रसार के साथ ही अन्य कार्यक्रमों को किसानों तक पहुंचा रहे हैं। कृषि विज्ञान केंद्र राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान परिषद का अभिन्न अंग हैं।

ये कृषि प्रौद्योगिकी के ज्ञान को किसानो तक पहुंचाने में और संसाधन केंद्र के रूप में कार्य कर रहे हैं। इनका मुख्य उद्देश्य प्रौद्योगिकी मूल्यांकन, शोध और प्रदर्शनों के माध्यम से कृषि और इससे जुड़े हुऐ क्षेत्रों में विशिष्ट प्रौद्योगिकी मॉडल का मूल्यांकन करना है। किसानों को तकनीकी से जोड़ने के लिए कृषि विज्ञान केंद्रों द्वारा प्रमुख रूप से विभिन्न कृषि प्रणालियों के तहत कृषि प्रौद्योगिकियों की स्थान विशिष्टता का आंकलन करने के लिए किसानों के खेतों में परीक्षण किये जाते हैं। किसानों के खेतों में प्रौद्योगिकियों की उत्पादन क्षमता स्थापित करने के लिए प्रथम पंक्ति प्रदर्शनों का भी आयोजन किया जाता है।

कृषि विज्ञान केंद्र का इतिहास: भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, पूसा, नई दिल्ली के विभिन्न शोध संस्थानों और कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा खेती-बाड़ी से जुड़े विषयों पर किए जा रहे नवीनतम शोध के इस दौर में प्रयोगशालाओं और शोध संस्थानों की नई तकनीकों को किसानों तक पहुंचाने के लिये भारत सरकार द्वारा इस कार्य योजना तैयार की गई। उसी के अनुरूप भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा कृषि विज्ञान केंद्रों को शुरू करने का कार्य किया गया। पहले कृषि विज्ञान केंद्र की शुरुआत 1974 में पांडिचेरी में डॉ. मोहन सिंह मेहता की अध्यक्षता में गठित दल की रिपोर्ट आने के बाद लिया गया। तब से अब तक 46 वर्षों के कालखण्ड में देश के प्रत्येक छोटे-बड़े जिलों में कृषि विज्ञान केंद्र खोले जा चुके हैं। इस समय सम्पूर्ण देश में लगभग 731 कृषि विज्ञान केंद्र कार्य कर रहे हैं जो पूरे भारत में संचालित 11 कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थानों के तकनीकी मार्गदर्शन में कार्य करते हैं। अटारी के नाम से लोकप्रिय ये संस्थान लुधियाना, जोधपुर, कानपुर, पटना, कोलकाता, गुवाहाटी, बारापानी, पुणे, जबलपुर, हैदराबाद और बेंगलुरू में स्थापित हैं, जो कृषि विज्ञान केंद्र के साथ समन्वय और निगरानी की भूमिका निभा रहे हैं।

भारतीय कृषि की समस्याएं

1.अपर्याप्त विषयवस्तु 2.शैक्षिक दृष्टिकोण एवं प्रशिक्षण के तरीके 3.व्यवहार प्रशिक्षण के लिए सुविधा की कमी प्रशिक्षण की वर्तमान आवश्यकताओं को प्रभावित नहीं करती है 4.गुणवत्ता की तुलना में मात्रा पर जोर 5.प्रशिक्षण की बुनियादी संरचना हेतु सीमित वित्तीय सहायता प्रदान करना 6.इन बुनियादी बाधाओं को दूर करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा कृषि विज्ञान केन्द्र शुरू किए गए हैं

कृषि विज्ञान केन्द्र के मुख्य क्षेत्र

1.किसानों के प्रौद्योगिकी उत्पादों के प्रशिक्षण का मूल्यांकन परिशोधन और प्रदर्शन। 2.प्रौद्योगिकी के व्यक्तिगत क्षेत्रों के विस्तार का प्रशिक्षण। 3.कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केंद्रों के माध्यम से प्रौद्योगिकी उत्पाद निदान सेवा और सूचना के लिए एकल खिड़की वितरण प्रणाली। 4.लिंग विशिष्ट प्रौद्योगिकियों का विकास। 5.किसानों के बीच उन्नत कृषि प्रौद्योगिकियों के बारे में जागरूकता पैदा करना।

कृषि विज्ञान केंद्र के सिद्धांत

1.कृषि विज्ञान केंद्र के प्रशिक्षण में पुरुष, महिलाएं और गरीब, अमीर, साक्षर, अनपढ़ सभी शामिल हैं, फिर भी गांव के पृष्ठभूमि वर्ग का इलाज सबसे पहले किया जाना चाहिए, उन्हें सबसे गरीब लोगों की जीवन शैली में सुधार करना होगा। 2.करके सीखने के सिद्धांत पर किसानों और मछुआरों को वैज्ञानिक ज्ञान और समझ पर आधारित कार्य अनुभव द्वारा कौशल प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए। 3.प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का मूल दर्द निवारण विश्लेषण पर होना चाहिए। वर्तमान तकनीक और लागू तरीकों के बीच अंतर को समझते हुए वास्तविक जरूरतों पर आधारित पाठ्यक्रम लागू किया जाना चाहिए। 4.किसानों को प्रशिक्षण देने तथा उसके बाद के चरण में सभी संबंधित एजेंसियों से संपर्क करना आवश्यक है। जहां प्रशिक्षण की मूल बातें नए तरीके हैं, वहां साधन और प्रयास उपलब्ध होने चाहिए। 5.प्रशिक्षक का चयन व्यक्तिगत गुणवत्ता के साथ-साथ व्यावसायिक उपलब्धियों के आधार पर होना चाहिए तथा उनमें किसानों के प्रति सेवा की भावना भी होनी चाहिए। 6.प्रशिक्षकों की प्रशिक्षण प्रक्रिया सतत होनी चाहिए ताकि उन्हें नवीनतम कृषि प्रौद्योगिकी से परिचित कराया जा सके। 7.प्रशिक्षण कार्य कार्यक्रम में सुधार लाने हेतु प्रशिक्षण से पहले एवं प्रशिक्षण के बाद मूल्यांकन होना चाहिए। उन्हें मूल्यांकन विधियों को स्वयं जानना चाहिए और प्रशिक्षण कार्यकर्ताओं को निर्देश भी देना चाहिए। 8.दक्षता और वैज्ञानिक ज्ञान के लिए प्रशिक्षण के बाद के कार्यक्रमों पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए।

कृषि विज्ञान केंद्र की विशेषताएं: कृषि विज्ञान केंद्र एक शैक्षणिक प्रणाली है। कृषि विज्ञान केंद्र की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं का वर्णन इस प्रकार किया गया है

सशक्त तकनीकी आधार- कृषि विज्ञान केंद्र को समय के अनुरूप प्रभावी एवं अधिक लाभप्रद बनाने के लिए यह आवश्यक है कि कृषि अनुसंधान केंद्रों को तकनीकी सहायता के लिए मुख्य रूप से कृषि विश्वविद्यालयों एवं केंद्रीय अनुसंधान संस्थानों से प्रौद्योगिकी का नवीन ज्ञान निरंतर मिलता रहे।

कार्य अनुभव ही प्रशिक्षण का स्रोत - कृषि विज्ञान केन्द्र में प्रशिक्षण की मुख्य व्यवस्था कार्य अनुभव पर आधारित होगी। प्रशिक्षुओं से अपने क्षेत्र में काम करने की अपेक्षा की जाती है। उन्हें अपना कार्य स्वयं करने से कार्य अनुभव प्राप्त होगा।

आवश्यकता आधारित पाठ्यक्रम - वैज्ञानिक ज्ञान को ठीक से समझने और प्रशिक्षण का उपयोग महसूस की जाने वाली आवश्यकताओं पर आधारित होना चाहिए, जिनका वर्तमान महत्व है। विभिन्न विधियों का पालन करके कृषकों की बुद्धि एवं कौशल की दृष्टि से आवश्यकताओं का पता लगाना चाहिए ये विधियाँ निम्नलिखित हैं- 1.पूरा सर्वे करके 2.व्यक्तिगत के साथ दैनिक व्यक्तिगत संपर्क द्वारा 3.समूह में प्रतिक्रिया एवं साक्षात्कार द्वारा 4.द्वितीयक तिथियों का उपयोग करके

लचीलापन और कठोरता- कभी-कभी लोग लचीलेपन को अनंत या कोमलता कहते हैं, लेकिन यह वास्तविकता नहीं है। वह लचीलापन जिसे हम आवश्यकताओं और स्रोतों के आधार पर सुधार या स्थिति में ला सकते हैं। लेकिन इसके साथ-साथ जब हम अभ्यास के लिए कोई वस्तु निर्धारित करते हैं तो हमें सख्त भी रहना पड़ता है ताकि अपेक्षा के अनुरूप परिणाम प्राप्त हो सके।

प्रशिक्षण की मिश्रित अवधारणाएं-वास्तव में किसानों की समस्याएँ बहुत जटिल हैं और दूसरे संदर्भ से जुड़ी हुई हैं, किसी विशेष दृष्टिकोण की आवश्यकता नहीं है, संभवतः कुछ व्यवहार संबंधी समस्याएं पैदा हो सकती हैं। इसलिए ट्रेनर को पूरे मामले को समझकर समस्या का समाधान करना चाहिए। इसे इस तरह से नहीं संभाला जाना चाहिए जैसे विषय विशेषज्ञ कृषि विज्ञान और फल संरक्षण को अलग-अलग बिंदु से सोचते हैं

क्षेत्रों से संबंधित कार्य-प्रत्येक कृषि विज्ञान केंद्र में एक दर्जन प्रशिक्षकों की आवश्यकता होती है, प्रत्येक शाखा में विषय विशेषज्ञ को पूर्ण अवधि हेतु नियुक्त किया जाना चाहिए। कृषि विज्ञान केंद्र को ऐसे प्रशिक्षण कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास और कल्याण के लिए खुद को समर्पित कर सकें। इसलिए उम्मीदवारों के अनुभव, पृष्ठभूमि, कल्याण और दृष्टिकोण को समझने में सावधानी बरतना आवश्यक है।

सीमित कार्य क्षेत्र-प्रशिक्षकों के साथ निरंतर संपर्क बनाए रखने के लिए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि न तो कार्य क्षेत्र विस्तृत हो और न ही संख्या अधिक हो। कृषि विज्ञान केंद्र के लिए प्रारंभ में जिला कार्य क्षेत्र की केवल एक इकाई होनी चाहिए।

प्रशिक्षण की व्यावहारिक सुविधाएं-प्रशिक्षण के उच्च मानक को बनाए रखने की दृष्टि से प्रत्येक कृषि विज्ञान केन्द्र में बागवानी, फसल कैफेटेरिया, मुर्गी पालन, सुअर एवं गौ पालन, चारा उत्पादन जैसे विषयों को वैज्ञानिक ढंग से विकसित किया जाना चाहिए। कार्यस्थल आदि के अलावा प्रत्येक प्रशिक्षक को विशेष रूप से दीर्घकालिक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम हेतु योजना और उत्पादन को क्रियान्वित करने के उद्देश्य से पर्याप्त भूमि मिलेगी।

सशक्त संस्था- यह प्रयास किया गया है कि कृषि विज्ञान केंद्र की शुरुआत कर्मियों, खेतों की प्रयोगशालाओं, मवेशियों, पशु फार्मों आदि की पर्याप्त सुविधाएं प्रदान करके की जाएगी।

सतत् उपकरण अनुवर्ती- पूर्व में किसानों के प्रशिक्षण कार्यक्रम में अनुवर्ती की उचित व्यवस्था न होने के कारण अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। इस आवश्यकता को पूरा करने हेतु निम्नलिखित विभाजन अनिवार्य हैं- i.प्रशिक्षुओं के साथ गहरा संबंध स्थापित करना ii.प्रशिक्षण-कार्यक्रम का समय पर मूल्यांकन करना iii.आगामी प्रशिक्षणों हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम की जाँच करें

आवश्यक निर्देश और कृषि सेवाएँ एकत्र करने में सहायता करना

आंतरिक गतिविधियाँ एवं सूचना प्रणाली: प्रत्येक कृषि विश्वविद्यालय को एक मासिक सेमिनार या सम्मेलन का आयोजन करना चाहिए और इस प्रकार अन्य विश्वविद्यालयों के साथ संचार प्रणाली और इस प्रकार के संबंध संस्थानों को कमजोर करना चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

जानिए...क्या है नई शिक्षा नीति

मनीषा शर्मा (विद्यावाचस्पति)
प्रसार शिक्षा एवं संचार प्रबंधन, सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय बीकानेर, (राजस्थान)

आज विश्व बड़ी तेजी से बदल रहा है। ज्ञान, विज्ञान, प्रोद्यौगिकी, कम्प्यूटरीकरण और तकनीकी में नित नए प्रयोगों तथा नवोन्मेषी अनुसंधानों ने ज्ञान की दिशा ही बदल दी है। आज मनुष्य उस स्थान पर खड़ा है जहां से उसे बेहद दौड़ लगानी है। वैश्विक परिस्थितियां भूखे शेर की तरह आपका पीछा कर रही हैं। यदि आप पीछे रह जाएंगे तो मृत्यु निश्चित है।

अतः जीवित रहने के लिए हमें ज्ञान, विज्ञान और प्रोद्यौगिकी में विश्वस्तरीय होना होगा अन्यथा हम अपना अस्तित्व नहीं बचा पाएंगे। नई शिक्षा नीति ने इस मुद्दे को आधार बनाकर यह नीति तैयार की है। आने वाले वर्षों में हमारे सम्मुख आने वाली चुनौतियों को ध्यान में रख कर तैयार की गई यह शिक्षा नीति राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी। इसी बात को ध्यान में रखकर, भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (एनईपी 2020), जिसे 29 जुलाई 2020 को भारत के केन्द्रीय मंत्रिमंडल द्वारा शुरू किया गया, भारत की नई शिक्षा प्रणाली के दृष्टिकोण को रेखांकित करती है। यह नीति ग्रामीण और शहरी दोनों में प्रारंभिक शिक्षा से लेकर उच्च और व्यावसायिक प्रशिक्षण तक के लिए एक व्यापक रूपरेखा है। यह नई नीति पिछली राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 का स्थान लेती है जिसका लक्ष्य 2030 तक वर्तमान शिक्षा प्रणाली में सुधार कर भारत की शिक्षा प्रणाली की गुणवत्ता को बढ़ावा देना है।

उद्देश्य

• बच्चों को भारतीय संस्कृति से जोड़ना • एजुकेशन को फ्लेक्सिबल बनाना • बच्चों को अनुशासन सिखाना और सशक्तिकरण करना • एजुकेशन पालिसी को पारदर्शी बनाना • इवैलुएशन पर जोर देना • ओपन एजुकेशन सिस्टम में इन्वेस्ट करना • बच्चों की सोच को क्रिएटिव करना • गुणवत्तापूर्ण एजुकेशन डेवलप करना • रिसर्च पर ज्यादा ध्यान देना • एक साथ कई भाषाओं पर फोकस रखना।

विशेषताएं

• नई शिक्षा नीति में तय किया गया है कि स्टेट नई शिक्षा नीति में जरूरत के हिसाब से बदलाव कर सकते हैं। • नई शिक्षा नीति के बाद से मानव संसाधन प्रबंधन मंत्रालय अब एजुकेशन मिनिस्ट्री के नाम से जाना जाएगा। • नई शिक्षा नीति के अंतर्गत 5+3+3+4 पैटर्न फॉलो किया जाएगा, इसमें 12 साल की स्कूल शिक्षा होगी और 3 साल की फ्री स्कूल शिक्षा होगी। • नई शिक्षा नीति के तहत स्कूल में 5वीं तक शिक्षा मातृभाषा या फिर क्षेत्रीय भाषा में दी जाएगी। • साल की फ्री स्कूल शिक्षा होगी। • 6वीं कक्षा से बिजनेस इंटर्नशिप स्टार्ट कर दी जाएगी। • न्यू एजुकेशन पॉलिसी आने के बाद कोई भी सब्जेक्ट चुन सकते

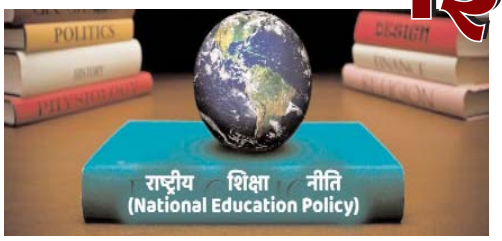

हैं और स्टूडेंट्स फिजिक्स के साथ अकाउंट या फिर आर्ट्स का भी सब्जेक्ट पढ़ सकते हैं। • स्टूडेंट्स को 6वीं कक्षा से कोडिंग सिखाना भी शामिल है। • सभी स्कूल डिजिटल इक्विटी किए जाएंगे। • वर्चुअल लैब डेवलप की जाएंगी। • ग्रेजुएशन में तीन या चार साल लगता है, जिसमें एग्जिट ऑप्शन होंगे। यदि स्टूडेंट्स ने एक साल ग्रेजुएशन की पढ़ाई की है तो उसे सर्टिफिकेट मिलेगा और दो साल बाद एडवांस डिप्लोमा।

शिक्षा का सही उद्देश्य होगा सफल

आज हमारे देश में शिक्षा की गुणवत्ता में इतना पतन हो चुका है कि वैश्विक स्तर पर हम बहुत पिछड़े नजर आते हैं। शिक्षा में गुणवत्ता को नई शिक्षा नीति में प्रमुखता दी है। यह सराहनीय कार्य है व इससे शिक्षा का सही उद्देश्य सफल होगा। शिक्षा में गुणवत्ता के प्रश्न पर काफी चर्चा परिचर्चा होती रही है परन्तु इसके समाधान के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाए गए लेकिन इस नई शिक्षा नीति में सुधार करते हुए न केवल 360 डिग्री मूल्यांकन, बल्कि शिक्षकों के ज्ञान और योग्यता की परख व उसमें सुधार जैसे बिंदुओं को भी शामिल किया गया है।

शिक्षण एवं मूल्यांकन प्रणाली में एकरूपता

सभी स्तरों पर शिक्षण और मूल्यांकन प्रणाली में एकरुपता व बहुस्तरीय मूल्यांकन (360 डिग्री मूल्यांकन) इस शिक्षा नीति की महत्वपूर्ण विशेषता है।

रोजगारोन्मुख शिक्षा

नई शिक्षा नीति की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह बेरोजगारों की फौज तैयार नही करेगी बल्कि हर युवा को इतना सक्षम बनाएगी कि वह नौकरी के लिये भटकने के बजाए स्वयं का कारोबार करने में सक्षम होंगे। राष्ट्र हित में युवा शक्ति का समुचित उपयोग ही इस शिक्षा नीति का अंतिम लक्ष्य है।

अनुभवी विद्वानों के ज्ञान का उपयोग

हमारे देश में दीर्घ अनुभव व ज्ञान के धनी बुजुर्ग उपेक्षित से रहते हैं। लेकिन अब नई शिक्षा नीति उनके लिए भी मेंटरिंग राष्ट्रीय मिशन के रुप में यह शिक्षा नीति एक वरदान सिद्ध होगी। पैरा 15.11 में वर्णित व्यवस्था इस प्रकार है-''मेंटरिंग के लिए एक राष्ट्रीय मिशन स्थापित किया जाएगा जिसमें बड़ी संख्या मं वरिष्ठ/सेवा निवृत्त संकाय सदस्यों को जोड़ा जाएगा, इनमें वे संकाय सदस्य भी शामिल होंगे जिनमें भारतीय भाषाओं में पढ़ाने की क्षमता है और जो विश्वविद्यालय/कालेज शिक्षकों लघु और दीर्घ कालिक परामर्श/व्यवसायिक सहायता प्रदान करने के लिए तैयार होंगे।''

शिक्षा प्रणाली का नियमन

आरंभिक साक्षरता से लेकर व्यसायिक शिक्षा तक के नियमन संबंधी पहलुओं पर भी नीति निर्माताओं की स्पष्ट दृष्टि रही है। उच्चतर शिक्षा की खामियों को दूर करने के उद्देश्य से नियामक प्रणाली में आमूलचूल परिवर्तन किए गए हैं। अतः नियमन में एकीकरण व केन्द्रीयकरण के सिद्धांतों को अपनाया गया है।

शिक्षा व जीविकोपार्जन मौलिक अधिकार

नई शिक्षा नीति के पैरा 21 में बुनियादी साक्षरता, शिक्षा व जीविकोपार्जन, प्रत्येक नागरिक का मौलिक अधिकार माना गया है। अतः प्रौढ़ शिक्षा व जीवन पर्यन्त शिक्षण के लिए नवाचारी उपायों का प्रावधान भी किया गया है ताकि शत-प्रतिशत साक्षरता का लक्ष्य प्राप्त हो सके।

भारतीय भाषा, कला एवं संस्कृति का विकास

भारतीय भाषा, कला और संस्कृति के संवर्द्धन के लिये भी इस नीति में व्यवस्था की गई है। 'चार वर्षीय बहुविषयक बी.एड. डिग्री के द्वारा मिशन मोड में पूरे देश के संस्कृत शिक्षकों को बड़ी संख्या में व्यवसायिक शिक्षा प्रदान की जाएगी।' अन्य छोटी से छोटी उपभाषाओं/बोलियों के संरक्षण एवं विकास हेतु भी स्पष्ट दिशा निर्देश दिए गए हैं।

नए दौर में शिक्षण की नई पद्धतियां

नए दौर में ई-लर्निंग, वर्चुअल शिक्षण एवं ऑनलाइन और डिजिटल शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए समुचित प्रावधान किए गए हैं व इन पद्धतियों से गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा देने के लिए उचित प्रशिक्षण एवं प्रयोगशालाओं तथा मूलभूत संरचनाएं तैयार किए जाने के लिए भी प्रावधान किए गए हैं।

निष्कर्ष

नई शिक्षा नीति के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह शिक्षा नीति समय की मांग को पूरा करने व विश्व स्तर पर भारतीय ज्ञान, विज्ञान और कला-संस्कृति को पहुंचाने की एक महत्वाकांक्षी नीति है। यह नीति रोजगार सृजन व नए विषयों तथा नए ज्ञान के क्षेत्रों में शिक्षा के द्वार खोलेगी जिससे भारत शिक्षा के क्षेत्र में भी विश्व में अग्रणी हो जाएगा। जहां तक नीति का प्रश्न है इसमें दो राय नहीं कि यह आधुनिक युग के अनुरुप उत्कृष्ट शिक्षा नीति है परन्तु इसका कार्यान्वयन कठिन होगा। क्योंकि शिक्षा संविधान की समवर्ती सूची का विषय है। अतः राज्य सरकार अपनी सोच और अपनी राजनैतिक विचारधारा के अनुरुप इसमें परिवर्तन करना चाहेंगी। यदि इस नीति में परिवर्तन की थोड़ी सी भी अनुमति दी गई तो यह नीति अपने मूल स्वरुप और मूल उद्देश्य से हट जाएगी। अतः सरकार को इस नीति की विशेषताओं को जन-जन तक पहुंचाना होगा तथा राज्य सरकारों को विश्वास में लेकर इस शिक्षा नीति को इसी रुप में लागू करने हेतु जनमत तैयार करना होगा। इस प्रकार समस्त भारत में समान शिक्षा नीति लागू होने से हमें विकास के शीर्ष पर पहुंचने में अधिक समय नही लगेगा।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

एक राष्ट्र, एक उर्वरक योजना: ग्रामीण भारत के कृषि सुधार की ओर एक महत्वपूर्ण कदम

कमलेश चौधरी (शोध छात्र)
मनमीत कौर (सहायक आचार्य) कृषि विस्तार एवं संचार विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है और भारतीय जीवनशैली और आर्थिक समृद्धि का मूल है। अक्सर यह देखा जाता है कि विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों में कृषि के सेक्टर में उर्वरकों का उपयोग विभिन्न तरीकों से होता है, जिसके कारण संकट और बढ़ जाते हैं। इस समस्या का समाधान करने के लिए "एक राष्ट्र, एक उर्वरक योजना" एक महत्वपूर्ण पहल है, जिसका उद्देश्य एक एकत्र उर्वरक नीति को प्रोत्साहित करना है जिससे भारतीय कृषि सेक्टर को सुधारा जा सके।

" एक राष्ट्र, एक उर्वरक योजना" चर्चा में क्यों है?- प्रधानमंत्री किसान सम्मान सम्मेलन 2022 के दो दिवसीय कार्यक्रम के दौरान प्रधानमंत्री ने 17 अक्टूबर, 2022 को प्रधान मंत्री भारतीय जन उर्वरक परियोजना-एक राष्ट्र एक उर्वरक का शुभारंभ किया। इस योजना के तहत, प्रधानमंत्री भारत यूरिया बैग का विमोचन करेंगे, जो कंपनियों को 'भारत' नाम के एकल ब्रांड के तहत उर्वरकों के विपणन में सहायता करेगा।

'एक राष्ट्र एक उर्वरक 'योजना क्या है? ■ यह भारत सरकार द्वारा अब तक लागू की गई सबसे बड़ी उर्वरक पहल है। ■ इस योजना के तहत, सभी उर्वरक कंपनियों, राज्य व्यापार संस्थाओं (स्टेट ट्रेडिंग एंटिटीज/एसटीई) एवं उर्वरक विपणन संस्थाओं (फर्टिलाइजर मार्केटिंग एंटिटीज/ एफएमई) को पीएमबीजेपी के तहत उर्वरकों एवं लोगो के लिए एक ही "भारत" ब्रांड का उपयोग करना होगा। ■ सभी सब्सिडी वाले मृदा के पोषक तत्व-यूरिया, डाई-अमोनियम फॉस्फेट (डीएपी), म्यूरेट ऑफ पोटाश (एमओपी) तथा एनपीके-को संपूर्ण देश में एकल ब्रांड-भारत के तहत विपणन किया जाएगा। ■ इस योजना के आरंभ होने के साथ, भारत के पास भारत यूरिया, भारत डीएपी, भारत एमओपी, भारत एनपीके, इत्यादि जैसे संपूर्ण देश में एक सामान्य बैग डिजाइन उपलब्ध होगा। ■ नया "भारत" ब्रांड नाम एवं प्रधान मंत्री भारतीय जन उर्वरक परियोजना (पीएमबीजेपी) लोगो उर्वरक पैकेट के सामने के दो-तिहाई हिस्से को कवर करेगा विनिर्माण ब्रांड शेष एक तिहाई स्थान पर मात्र अपना नाम, लोगो तथा अन्य जानकारी प्रदर्शित कर सकते हैं। प्रधानमंत्री भारतीय जन उर्वरक परियोजना के लिए "एक राष्ट्र, एक उर्वरक" योजना केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गई है। ■ इस योजना के तहत, सभी प्रकार के उर्वरक, चाहे यूरिया, डीएपी या एनपीके, एकल ब्रांड नाम "भारत" के तहत बेचे जाएंगे। ■ यह योजना पूरे भारत में उर्वरक ब्रांडों को मानकीकृत करने का प्रयास करती है, भले ही कंपनी उन्हें बनाती हो। ■ इसका उद्देश्य उर्वरकों की गुणवत्ता और उनकी उपलब्धता से संबंधित सभी भ्रमों को दूर करना है। ■ इससे पहले, खुदरा विक्रेता उच्च कमीशन प्राप्त करने के लिए कुछ ब्रांडों की बिक्री पर जोर दे रहे थे और निर्माता लक्षित विज्ञापन अभियान के माध्यम से अपने उत्पादों का प्रचार कर रहे हैं। ■ यह उर्वरकों के बारे में गलत धारणा पैदा करता है, जिससे किसान महंगे विकल्पों के लिए मजबूर होते हैं।

"एक राष्ट्र, एक उर्वरक योजना": सरकार ने यह योजना क्यों आरंभ की?

सरकार ने सभी सब्सिडी वाले उर्वरकों के लिए एक एकल 'भारत' ब्रांड प्रस्तुत किया, क्योंकि- ■ कुछ 26 उर्वरक (यूरिया सहित) हैं, जिन पर सरकार सब्सिडी वहन करती है तथा अधिकतम खुदरा मूल्य (मैक्सिमम रिटेल प्राइस/एमआरपी) का निर्धारण भी प्रभावी ढंग से करती है। ■ कंपनियां किस मूल्य पर विक्रय कर सकती हैं, इस पर सब्सिडी देने तथा निर्धारित करने के अतिरिक्त, सरकार यह भी निर्धारित करती है कि वे उसे कहा विक्रय कर सकती हैं। यह उर्वरक (आवागमन) नियंत्रण आदेश, 1973 के माध्यम से किया जाता है। ■ जब सरकार उर्वरक सब्सिडी (बिल के 2022-23 में 200,000 करोड़ को पार करने की संभावना है) पर भारी मात्रा में धन का व्यय कर रही है, साथ ही यह निर्धारित कर रही है कि कंपनियां कहां एवं किस कीमत पर विक्रय कर सकती हैं, तो यह स्पष्ट रूप से इसका क्रेडिट लेना तथा वह ये संदेश किसानों को तक पहुंचाना चाहेगी।

एक राष्ट्र, एक उर्वरक योजना का मुख्य उद्देश्य

उर्वरक संवितरण का सुधार: " एक राष्ट्र, एक उर्वरक" योजना का मुख्य उद्देश्य है उर्वरकों के सही प्रबंधन के माध्यम से खेती में उनकी समय पर और सही तरीके से प्रयोग करना। यह किसानों को उर्वरकों के सही उपयोग हेतु जागरूक करता है और सांख्यिकी से उर्वरक संवितरण की सुधार करता है।

वित्तीय बचत: एक ही उर्वरक प्रणाली का प्रयोग करने से, सरकारों को उर्वरकों के खर्च पर नियंत्रण मिलता है, जिससे वित्तीय बचत होती है।

जल संसाधनों की सुरक्षा: उर्वरकों के सही प्रबंधन से, हम जल संसाधनों के सुरक्षित और स्थिर उपयोग की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं।

एक राष्ट्र, एक उर्वरक: मुख्य विशेषताएं

जल संकट के समाधान: "एक राष्ट्र, एक उर्वरक" योजना का मुख्य उद्देश्य है जल संकट के समाधान का प्रस्तावित करना। इसके तहत, उर्वरकों के बेहतर प्रबंधन के माध्यम से जल संचयन और जल संबंधित समस्याओं का समाधान होगा।

जलवायु परिवर्तन का सामर्थ्यकरण: योजना के अंतर्गत, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने और जल संचयन को बढ़ावा देने के उपायों का प्रस्तावित किया जा रहा है।

कृषि की सुधार: योजना ग्रामीण क्षेत्रों के किसानों को उर्वरकों के सही उपयोग का सिखाने के माध्यम से खेती को सुधारने का लक्ष्य रखती है।

प्लास्टिक कमी भारत: योजना के अंतर्गत, प्लास्टिक के उपयोग को कम करने की पहल की जा रही है, जिससे प्रदूषण को घटाया जा सकेगा और पर्यावरण को बचाने में मदद मिलेगी।

एक राष्ट्र, एक उर्वरक: योजना के लाभ

"एक राष्ट्र, एक उर्वरक" योजना भारत के कृषि सेक्टर को सुधारने का एक महत्वपूर्ण कदम है। इसका मुख्य उद्देश्य भारतीय कृषि सेक्टर में एकत्र उर्वरक नीति को प्रोत्साहित करना है ताकि उर्वरक के सही प्रयोग की ओर बढ़ा जा सके। **इसके कुछ महत्वपूर्ण लाभ हैं-**

वित्तीय सुधार: एक समान उर्वरक नीति से, सरकार को उर्वरकों के खर्च पर नियंत्रण मिलता है, जिससे वित्तीय सुधार होता है और सरकारी खर्च कम होते हैं।

किसानों के लिए फायदा: यह योजना किसानों को सही और अफोर्डेबल उर्वरक प्राप्त करने में मदद करती है।

पर्यावरण संरक्षण: एक राष्ट्र, एक उर्वरक योजना के तहत, प्रशासनिक और वित्तीय सुधार के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण को भी महत्व दिया जा सकता है।

उर्वरक वितरण की सुधार: यह योजना उर्वरक वितरण की प्रक्रिया को भी सुधार सकती है, जिससे उर्वरक की सही मात्रा और गुणवत्ता की गारंटी हो सकती है।

शीतला कृषि सेवा केन्द्र
बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)
99267-31867, 83055-69923
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।
पता: पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)
01/203-24

राग़ी की खेती

राबिन सिंह (विद्यावाचस्पति शोधार्थी) शस्य विज्ञान, श्री खुशहालदास विश्वविद्यालय हनुमानगढ़ (राजस्थान)

शौर्या सिंह विद्यावाचस्पति शोधार्थी, आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन गोविंद वल्लभ पंत यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर एंड टेक्नोलॉजी, पंतनगर

कैलाश पटेल विद्यावाचस्पति पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

रागी, भारत के साथ-साथ अफ्रीका की विभिन्न जगहों में उगाया जाने वाला एक मुख्य अनाज है। इसका वैज्ञानिक नाम एलुसीन कोरकाना है। यह भारत के प्रमुख अनाजों में से एक है। इसका उत्पादन भारत में सबसे अधिक कर्नाटक राज्य में किया जाता है। इसे कई अलग-अलग नामों से भी जाना जाता है जैसे दृ हिंदी में रागी/मंडुआ/मंगल और तमिल में केझवारगु। वहीं, कन्नड और तेलुगु में भी इसे रागी ही कहा जाता है। यह फाइबर, प्रोटीन, पोटेशियम और कैल्शियम जैसे कई जरूरी पोषक तत्वों से समृद्ध होता है।

बेहतर स्वास्थ्य के लिए साग-सब्जियों के साथ अनाज का सेवन भी जरूरी होता है। अनाज का सेवन शरीर को जरूरी पोषण देने के साथ-साथ कई बीमारियों से बचाए रखने में मदद सकता है। वहीं, जब बात अनाज की हो, तो रागी को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। वहीं, कई अध्ययनों में सेहत के लिए रागी को फायदेमंद पाया गया है। यही वजह है कि इस लेख में हम रागी खाने के फायदे बताने जा रहे हैं। यहां आप विभिन्न शारीरिक समस्याओं पर रागी के लाभ जान पाएंगे। साथ ही इस लेख में रोगी का उपयोग किन-किन तरीकों से किया जा सकता है, यह भी बताया गया है। इसके अलावा, लेख में रागी के नुकसान भी बताए गए हैं। रागी की खेती अनाज के लिए की जाती है, इसे मोटा अनाज भी कहा जाता है।ञ यह अफ्रीकन रागी, फिंगर बाजरा, मडुआ और लाल बाजरा भी कहलाता है। पूरे विश्व में रागी का 58 प्रतिशत उत्पादन अकेले भारत में ही होता है। इसके पौधे एक से डेढ़ मीटर ऊँचे होते है, जो पूरे वर्ष पैदावार दे देते है। रागी के दानो में कैल्शियम की मात्रा काफी अधिक होती है, जिस वजह से इसका सेवन करने से हड्डिया मजबूत होती है। यह बच्चो और बड़ो दोनों के लिए ही उत्तम आहार होता है। इसमें प्रोटीन, रेशा, वसा और कार्बोहाइड्रेट की मात्रा सबसे अधिक पाई जाती है, इसके अलावा थायमीन, नियासिन, रिवोफ्लेविन जैसे अम्ल भी इसमें पर्याप्त मात्रा में पाए जाते है।

खेत की तैयारी और उर्वरक: रागी के बीजो की रोपाई से पहले उसके खेत को अच्छी तरह से तैयार कर लिया जाता है। इसके लिए खेत की सबसे पहले अच्छी तरह से गहरी जुताई कर ली जाती है। इससे खेत में मौजूद पुरानी फसल के अवशेष पूरी तरह से नष्ट हो जाते है। खेत की जुताई के बाद उसे कुछ समय के लिए ऐसे ही खुला छोड़ दिया जाता है। इसके बाद खेत में प्रति हेक्टेयर के हिसाब से प्राकृतिक खाद के रूप में 12 से 15 गाड़ी पुरानी गोबर की खाद को डालना होता है। खाद को मिट्टी में डालने के बाद अच्छे से जुताई कर दे, इससे खेत की मिट्टी में गोबर अच्छी तरह से मिल जाता है। इससे बाद कल्टीवेटर के माध्यम से खेत की दो से तीन तिरछी जुताई करवा है। जुताई के बाद खेत में पानी लगाकर पलेव कर दिया जाता है। पलेव के बाद जब खेत की मिट्टी सूखी दिखाई देने लगे उस दौरान रोटावेटर लगाकर खेत की जुताई कर दी जाती है। इससे खेत की मिट्टी भुरभुरी हो जाती है, मिट्टी के भुरभुरा हो जाने के बाद पाटा लगाकर खेत को समतल कर दे। समतल खेत में जलभराव नहीं होता है। यदि आप रागी की खेती में रासायनिक खाद का इस्तेमाल करना चाहते हैं, तो उसके लिए आपको आखिरी जुताई के समय प्रति हेक्टेयर के हिसाब से दो बोरे एन.पी.के. की मात्रा को देना होता है।

उपयुक्त मिट्टी, जलवायु और तापमान: रागी की खेती के लिए कार्बनिक पदार्थो से युक्त बलुई दोमट मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसकी खेती के लिए भूमि उचित जल निकासी वाली होनी चाहिए। क्योकि जलभराव वाली भूमि में पौध नष्ट हो जाती है। इसकी खेती में भूमि का पीएच मान 5.5 से 8 के मध्य होना चाहिए। रागी की फसल शुष्क और आद्र शुष्क जलवायु में अच्छे से उगती है। इसकी खेती खरीफ के मौसम में की जाती है। गर्म जलवायु में इसके पौधे अच्छे से वृद्धि करते है, तथा सर्द जलवायु से पहले ही इसकी कटाई कर लेनी चाहिए। इसकी खेती में सामान्य बारिश की आवश्यकता होती है। रागी के पौधे 35 डिग्री तापमान पर अच्छे से विकास करते हैं। किन्तु बीज अंकुरण के समय इसके बीजो को 20 से 22 डिग्री तापमान की आवश्यकता होती है द्य इसके पौधे अधिकतम 35 डिग्री तथा न्यूनतम 15 डिग्री तापमान को ही सहन कर सकते है।

बीज की दर और उपचार: बीज की मात्रा बुवाई की विधि पर निर्भर करती है. यदि रागी की बुवाई ड्रिल विधि से की जाएगी तो बीज की मात्रा 10-12 किलो प्रति हेक्टेयर की दर आवश्यकता होगी. छिडकाव विधि से बोने के लिए बीज की मात्रा 5 किलो बीज प्रति हेक्टेयर की दर से लगता है. बीज को उपचारित करने के लिए थीरम, बाविस्टीन या फिर कैप्टन दवा उपयोग करें.

बुवाई का समय: रागी की बुवाई मई के आखिर से जून तक काफी भी कर सकते है. कुछ क्षेत्र ऐसे है। जहाँ रागी की बुवाई जून के बाद की जाती है। इसको जायद के सीजन में भी उगाया जा सकता है।

बीज बुवाई का तरीका और समय: रागी को छिड़काव और ड्रिल दोनों तरीकों से बोया जा सकता है। छिड़काव विधि से बीज की डायरेक्ट खेत में छिड़ दिया जाता है। उसके बाद बीज को मिट्टी में मिलाने के लिए कल्टीवेटर से दो बार हल्की आदि जुताई कर पाटा लगा दें। रागी की बिजाई मशीनों द्वारा कतारों में की जाती है। बुवाई के समय कतार से कतार की दूरी एक फीट होनी चाहिए और बीज से बीज की दूरी 15 सेंटीमीटर होनी चाहिए।

फसल की सिंचाई: इसकी फसल (तंहप बतवच) के लिए अधिक सिचाई की आवश्यकता नहीं होती है. अगर वर्षा सही समय पर नहीं हुई तो बुवाई के एक महीने के बाद फसल की सिचाई करें. फसल पर फूल और दाने आने पर पर्याप्त नमी की आवश्यकता होती है. सामान्यतः 10 से 15 दिन के अंतर पर फसल की सिचाई करें.

खाद एवं उर्वरक: रागी की फसल के लिए 40 से 45 कि.ग्रा. नाइट्रोजन एवं 30-40 कि.ग्रा., फॉस्फोरस तथा 20-30 कि.ग्रा. पोटाश/हैक्टर की दर जरुरत पड़ती है। सभी खादों का मिश्रण बनाकर बुवाई के समय खेत में डालें । रागी की फसल से अच्छी पैदावार लेनी है तो बुवाई से पहले गोबर की खाद डालें।

खरपतवार नियंत्रण: रागी की फसल में खरपतवार नियंत्रण के लिए उचित समय निराई गुड़ाई करते रहे. रागी की बुवाई के करीब 20-25 दिन बाद पहली निराई करें. खरपतवार नियंत्रण के लिए रागी की बुवाई से पहले आइसोप्रोट्यूरॉन या ऑक्सीफ्लोरफेन की उचित मात्रा का छिड़काव करें।

फसल की कटाई: रागी की कटाई उसकी किस्मों पर निर्भर करती है. सामान्यतः फसल तकरीबन 115-120 दिन में कटाई के लिए तैयार हो जाती है। रागी की बालियों को दराती से काट कर ढेर बनाकर धुप में 3-4 दिनों के लिए सुखाएं. अच्छी तरह से सूखने के बाद थ्रेशिंग करें।

पैदावार और लाभ: रागी की फसल से औसतन पैदावार 25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक हो जाती है। जिसका बाजार भाव करीब 3000 रुपए प्रति क्विंटल के आसपास मिल जाता है। इस हिसाब किसानो को 75 हजार तक की कमाई हो सकती है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

वृक्षायुर्वेद क्या है और वृक्षायुर्वेद से ग्लोबल वार्मिंग का समाधान

खेता राम एमएससी स्कॉलर, वृक्षायुर्वेद विभाग राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान जयपुर

मानद विश्वविद्यालय

वृक्षायुर्वेद क्या है

वृक्षायुर्वेद पौधों और वृक्षों पर्यावरण और पारिस्थितिकी पर भारतीय-लोकाचार और संस्कृति का प्रतीक है। वृक्षायुर्वेद के अनुसार पेड़ हमारे पूर्वज हैं और इस पृथ्वी पर मानव से बहुत पहले मौजूद हैं। हमारा बहुत अस्तित्व उन पर निर्भर करता है। वृक्ष का अर्थ है पेड़ और आयुर्वेद का अर्थ है दीर्घायु का विज्ञान तो वृक्षायुर्वेद का अर्थ है 'पेड़ और पौधों' की लंबी उम्र और स्वास्थ्य का विज्ञान। यह पादप जीवन का प्राचीन भारतीय विज्ञान है। वृक्षायुर्वेद के ज्ञान की जड़ें वेदों विशेषकर ऋग्वेद और अथर्ववेद में हैं। क्या आप जानते हैं कि हमारे पूर्वजों को पौधों के जीवन और पेड़-पौधों के बारे में इतनी गहरी जानकारी थी कि वे यह भी जानते थे कि प्लास्टर के माध्यम से पेड़ की टूटी हुई शाखा को फिर से कैसे जोड़ा जा सकता है? हां, आपने इसे सही सुना। पेड़ और पौधों का जीवन और उनकी दीर्घायु के बारे में उन्होंने जो ज्ञान संकलित किया है, वह एक ग्रंथ के रूप में है, जिसे वृक्षयर्वेद के नाम से जाना जाता है, जो कि सुरपाल द्वारा 10 वीं सदी में लिखा गया था। वृक्षायुर्वेद एक व्यवस्थित संकलन है जो पौधों और वृक्षों की महिमा और वंदना से शुरू होता है। वृक्षायुर्वेद, पादप जीवन पर सबसे व्यापक और विस्तृत ग्रंथ है, जो पौधे के जीवन के विज्ञान से संबंधित विभिन्न विषयों जैसे कि रोपण से पहले बीज की खरीद, संरक्षण और उपचार, पौधे रोपने के लिए गड्ढे तैयार करना; मिट्टी का चयन; पानी भरने की विधि; पोषण और उर्वरक, पौधों की बीमारियों और आंतरिक और बाहरी बीमारियों से पौधे की सुरक्षा; एक बगीचे का लेआउट; कृषि और बागवानी विज्ञान; भूजल संसाधन; आदि, उसमे समाविष्ट हैं। पेड़ों का महत्व वृक्ष देवों के समान हैं। पेड़ों में भगवान का वास होता है। पेड़ लगाना और पोषण करना प्रत्येक मनुष्य का एक पवित्र कर्तव्य है और पुण्य-कर्म को प्राप्त करने के तरीकों में से एक है। पेड़ लगाना न केवल एक धार्मिक और सामाजिक कर्तव्य है, बल्कि मानव द्वारा धरती मां के कर्ज को चुकाने और मोक्ष प्राप्त करने का एक तरीका है। वृक्षायुर्वेद के अनुसार, जो मानव पेड़ लगाता है, आने वाले कई जन्मों में समृद्धि और सुख मिलता है। पेड़ लगाने के ऐसे धार्मिक कार्य हैं न केवल पेड़ लगाने वाले को लाभ मिलता है बल्कि उसकी पूरा परिवार इस दुनिया और उसके बाद की दुनिया में आनंद और समृद्धि प्राप्त करता है। यह उल्लेख है कि जो मानव एक फलदार वृक्ष लगाता है, उसके पितर (पूर्वज) तब तक तृप्त व संतुष्ट रहते हैं जब तक पेड़ फल देता है। एक श्लोक में, एक पेड़ को दस बेटों से भी अधिक पुण्यकारी माना माणा गया है। पौधों को हमारे घर का भी अभिन्न अंग माना गया है। यह उल्लेख है कि जो अपने घर में तुलसी का पौधा लगाता है और उसकी पूजा करता है, वह और उसका परिवार इस दुनिया में ही नहीं, बल्कि दुनिया में वैकुंठ बराबर सुख को प्राप्त करेगा। भवन निर्माण की तुलना में वृक्षों को लगाना अधिक पुण्य माना गया है।

वृक्षायुर्वेद से ग्लोबल वार्मिंग का समाधान

पौधों के आधुनिक वैज्ञानिक और वानस्पतिक विभाजन की तरह, वृक्षायुर्वेद पौधों को चार प्रकारों में विभाजित करते हैं जैसे कि वनस्पती (फूलों के बिना फल), द्रुमा (फूलों के साथ फल), लता (लता), और गामा (झाड़ियों)। यह आश्चर्य की बात है कि इस में मिट्टी और इसके उपचार के बारे में बहुत कुछ बताया गया था जो आधुनिक वनस्पति विज्ञानियों को भी हैरान करता है। वृत्रायुर्वेद के अनुसार

मिट्टी मिट्टी एक मां की तरह है जो पौधे के रूप में बच्चे को जन्म देने के लिए हम तैयार करते हैं । यदि मिट्टी बेहतर है, तो पौधे बेहतर होंगे। मिट्टी को उसके रंग के आधार पर, उसकी उर्वरता के आधार पर विभाजित किया गया है। शुष्क, दलदली, ज़हरीले तत्व वाली भूमि, चींटी पहाड़ी से भरी हुई मिट्टी, छेद वाली मिट्टी, पथरीली मिट्टी और बजरी के साथ भूमि, पानी के लिए कोई पहुंच नहीं होने वाली भूमि; बढ़ते पेड़ों के लिए अयोग्य है। पौधों को उगाने के लिए मिट्टी में पानी की पहुंच होनी चाहिए। भारत के मूल और प्राचीन पेड़ में तेजी से कमी हो रही है क्योंकि हमारे पास देशी भारतीय पेड़ों के कम बीज हैं। इसके लिए वृक्षाध्याय सुझाव देता है कि मूल और प्राचीन पेड़ के बीज को छिड़कने से पहले उसका उपचार कैसे किया जाए। वृक्षों को उखाड़ना और फिर से आरोपित कर देना आधुनिक परिस्थितिकी विकास की चुनौतियों में से एक है, जहां अधिक क्षेत्रों को औद्योगिक-उद्देश्यों के लिए मोड़ दिया जा रहा है। हैरानी की बात है कि वृक्षायुर्वेद बिना किसी नुकसान के पेड़ों को कैसे और कब प्रत्यारोपण करना है? इसकी तकनीक बताती है। मनुष्य के पौधों की तरह जो आत्मा के रूप में पाए जाते हैं, उनमें तीन प्रकार के रोग होते हैं जैसे वात, कफ और पित्त। पेड़ और पौधे कि बीमारियों का पूरा कारण और उपचार विस्तार से दिया गया है। आधुनिक कृषि और वानिकी की समस्याओं में से कीड़े, टिड्डी और ठंढ के कारण होने वाली क्षति है। यह इन समस्याओं से हमारे वृक्षारोपण को बचाने के लिए एक व्यापक और विस्तृत तरीका देता है। वृक्षायुर्वेद का सबसे दिलचस्प हिस्सा यह है कि यह तरीकों और तकनीकों का भी सुझाव देता है कि कैसे पेड़ के उन टूटे हुए हिस्सों को जोड़ा जाए जो आग, तूफान, वायु आदि के कारण हो सकते हैं। इन दिनों वृक्षारोपण का सबसे प्रचलित तरीका मियावाकी-वन है, जिसका नाम इसके संस्थापक मियावाकी के नाम पर रखा गया है जो एक जापानी वनस्पतिशास्त्री हैं। आपको प्राचीन भारतीय तकनीक और मियावाकी विधियों के बीच कई समानताएं मिलेंगी। मियावाकी का सुझाव है कि एक ही गड्ढे में और मूल देशी पेड़ों के रोपण निकटता से लगाए जाएं। भारतीय प्राचीन तरीकों में, हमारे पास त्रिवेणी है जो भारतीय ग्रामीण माहौल में बहुत आम है। इसमें बरगढ़, नीम और पीपल शामिल हैं और एक ही गड्ढे में लगाए जाते हैं।इसी तर्ज पर हमारे पास हरि- शंकरी का अर्थ है हरि (भगवान विष्णु) और शंकरी (भगवान शिव) की छाया भी है। इसमें तीन पेड़ जिनमें बरगद पीपल और पलाश शामिल हैं, एक साथ लगाए जाते हैं। प्राचीन भारतीय परंपराओं में हमारे पास पंचवटी है किसका का अर्थ है (पंच + वट) पांच पेड़ अर्थात पाँच पेड़। पंचवटी पांच भारतीय देशी और प्राचीन पेड़ों का एक समूह है जिसे देवताओं के निवास के रूप में स्थापित किया गया है। वे बिल, आंवला, बरगद, अशोक और पीपल हैं! रामायण में किंवदंतियों के अनुसार, भगवान राम को नासिक के पास पंचवटी में अपने निर्वासन बिताने के लिए ऋषियों द्वारा आमंत्रित किया गया था, जो इन पांच पेड़ों से घिरा एक पवित्र स्थान था। भगवान राम, माता सीता चित्रकूट से निकलने के बाद यहां रुके थे। पंचवटी-वन को बहुत शुभ माना जाता है। शास्त्रों में उल्लेख है कि जो पंचवटी, अपने परिवार का रोपण करता है और वह पांच सौ वर्षों तक समृद्धि और सुख प्राप्त करता है। यह हमारे पारंपरिक ज्ञान को फिर से देखने का समय है।

जैन बीज भण्डार
एवं पशु आहार
मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल: 9977638510
04/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

मटर में लगने वाले प्रमुख रोग, लक्षण एवं प्रबंधन

पूजा यादव (विद्यावाचस्पति छात्रा) पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान दुर्गापुरा, जयपुर (राजस्थान)

प्रदीप सिंह शेखावत सह-प्राध्यापक पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा, जयपुर (राजस्थान)

सुनीता (विद्यावाचस्पति छात्रा) उद्यान विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, (उ.प्र.)

परिचय

भारत की एक महत्वपूर्ण फसल मटर को दलहनों की रानी की संज्ञा प्राप्त है। मटर की खेती, हरी फल्ली, साबूत मटर तथा दाल के लिये की जाती है। मटर की हरी फल्लियाँ सब्जी के लिए तथा सूखे दानों का उपयोग दाल और अन्य भोज्य पदार्थ तैयार करने में किया जाता है। चाट व छोले बनाने में मटर का विशिष्ट स्थान है। हरी मटर के दानों को सुखाकर या डिब्बा बन्द करके संरक्षित कर बाद में उपयोग किया जाता है। पोषक मान की दृष्टि से मटर के 100 ग्राम दाने में औसतन 11 ग्राम पानी, 22.5 ग्राम प्रोटीन 1.8 ग्रा. वसा, 62.1 ग्रा. कार्बोहाइड्रेट, 64 मिग्रा. कैल्शियम, 4ण्8 मिग्रा. लोहा, 0.15 मिग्रा. राइबोफ्लेविन, 0.72 मिग्रा. थाइमिन तथा 2.4 मिग्रा. नियासिन पाया जाता है। फलियाँ निकालने के बाद हरे व सूखे पौधों का उपयोग पशुओं के चारे के लिए किया जाता है। दलहनी फसल होने के कारण इसकी खेती से भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है।

मटर में लगने वाले प्रमुख रोग

म्लानि या उकठा रोग: यह रोग फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम पाइसी नामक कवक से होता है।

लक्षण: इस रोग का संक्रमण फसल की प्रारम्भिक अवस्था में उस समय होता है, जब पौधे 5-6 सप्ताह के होते है। रोग का प्रमुख लक्षण प्रौढ़ पौधों का मुरझाना है। पौधे पानी की कमी में मुरझा जाते हैं जबकि खेत में नमी प्रर्याप्त मात्रा में होती है। पत्तियां पीली पड़कर मुरझाने ओर सूखने लगती हैं तथा पौधा सूख जाता है। मुख्य जड़ों ओर तनों के आधार वाले ऊतक काले रंग के दिखाई देते हैं तथा जड़ों पर काले रंग की धारियां बन जाती है। यह रोग फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम पाइसी से होता है।

प्रबंधन

- गर्मियों के दिनो में गहरी जुताई करनी चहिए।
- बीजों को ट्राइकोडर्मा की 4.0 ग्राम प्रति किलोग्राम मात्रा से उपचारित करके ही बोये।
- रोगरोधी किसमों का ही चुनाव करें।

चूर्णिल आसिता रोग

रोगकरक - एरिसाइफी पीसी

लक्षण - इस रोग से पत्तियां सबसे पहले प्रभावित होती हैं और बाद में तनों और फली पर भी असर होता है। पत्तियों

की दोनों सतह पर सफेद चूर्ण ध्ब्बे बनते हैं। पहले धब्बे छोटी-छोटी रंगहीन कलंक या चित्तियों के रूप में बनते हैं, लेकिन बाद में इनके चारों ओर चूर्णी समूह फैल जाता है। रोगी पौधों में प्रकाश संश्लेषण की कमी हो जाती है। पौधे छोटे रह जाते हैं और उनपर फलियां भी कम और हल्की लगती हैं। पत्तियों के जिस स्थान पर परजीवी का कवक जाल फैला रहता है, वहां की कोशिकायें ऊतक क्षय की वजह से मर जाती हैं।

प्रबन्धन

- फसल की कटाई के बाद खेत में पड़े रोगी पौधों के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए।
- रोगमुक्त बीज को थीरम 25 ग्राम प्रति किलो ग्राम दर से शोधित कर बुवाई करें।
- फसल की देर से बुवाई नहीं करनी चाहिए और फलियों के लिए मटर की अगेती किस्म बोनी चाहिए
- रोग के लक्षण दिखाई देने पर 25 से 30 किलोग्राम प्रति है. की दर से गंधक चूर्ण (200 मेंश) बुरकना चाहिए।
- मटर की रोगरोधी ही किस्मों का चयन करें जिनमें अर्का अजीत, आजाद पी-4 और पूसा पन्ना शामिल हैं।

किट्ट रोग (रस्ट)

रोगकरक - यूरोमाइसिस फैब

यह रोग नम जलवायु वाले क्षेत्रों में मटर की फसल को बहुत अधिक हानि पहुंचाता है। रोग की व्यापकता में मटर के पौधों के तने विक्रत एवं ऊतकक्षयी हो जाते हैं ओर पौधों की मृत्यु हो जाती है।

लक्षण - इस रोग के लक्षण पौधों पर फरवरी-मार्च में दिखाई देते हैं। पत्ती तनों एवं फलियों पर ईसीडियम के रूप में दिखते हैं। पौधों के हरे भागों पर हल्का पीलापन आता है जो धीरे-धीरे भूरा हो जाता है। फसल के पकने पर गहरे भूरे अथवा काले रंग के टेल्यूटोस्फोट पत्तियों एवं तनों पर बनते हैं।

प्रबंधन-

- हमेशा प्रमाणित बीज का ही उपयोग करें।
- बीज को बोने से पहले ऐग्रोसान जीएन या थाएरैम की 25 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचारित करें।
- 2 किलोग्राम डाईथेन एम-45 या डाईथेन जेड-78 को 700 से 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करें। पहला छिड़काव रोग प्रकट होने पर ओर दूसरा, तीसरा छिड़काव 15 दिनों के अन्तराल पर करें।

एस्कोशिटा ब्लाइट

रोगकारक-एस्कोकाइटा पिनोड्स, एस्कोकाइटा पिनोडेला और एस्कोकाइटा पिसी

लक्षण-खेत मटर के पत्तों पर एस्कोकाइटा पिनोड्स के कारण नेक्रोटिक घाव पत्तियों के नीचे कई छोटे बैंगनी धब्बों द्वारा पहचाना जा सकता है। शुष्क परिस्थितियों में, ये धब्बे छोटे रहते हैं और इनका कोई स्पष्ट किनारा नहीं होता है। हालांकि, नम परिस्थितियों में, बैंगनी धब्बे बड़े भूरे-काले घावों में बदल जाते हैं। कभी-कभी ये घाव बड़े हो जाते हैं और आपस में मिलकर पूरी तरह से झुलसी हुई पत्ती का रूप ले लेते हैं। संक्रमित पत्ती मर जाएगी लेकिन फिर भी पौधे से जुड़ी रहेगी। जामुनी-भूरे रंग के तने के घाव उत्पन्न होते हैं। ये घाव लगाव के बिंदु से ऊपर और नीचे की ओर बढ़ते हैं। समय के साथ, ये घाव तेजी से लंबे होते जाते हैं और अक्सर पौधे के तनों को पूरी तरह से घेरने के लिए विलीन हो जाते हैं। यह पौधे के निचले आधे हिस्से को नीला-काला रूप देता है। मटर के एस्कोकाइटा ब्लाइट को नियंत्रित करने का सबसे अच्छा तरीका स्वच्छता, फसल-चक्र और बुवाई की तारीख में बदलाव के माध्यम से प्राथमिक इनोकुलम की मात्रा को कम करना है।

प्रबंधन

- रासायनिक नियंत्रण, जैविक नियंत्रण, और प्रतिरोधी किस्मों के विकास-का उपयोग एस्कोकाइटा रोगों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने हेतु भी किया जा सकता है।

मृदुरोमिल आसिता रोग

रोगकरक - पेरोनोस्पोरा पाइसी

लक्षण- इस रोग के लक्षण तरुण पौधों पर उस समय दिखते हैं जब उनमें तीसरी और चौथी पत्तियां निकल आती हैं। सबसे पहले पत्तियों पर पीलापन दिखने लगता है और बाद में भूरे धब्बे बनने लगते हैं। पहले यह धब्बे निचली पत्तियों पर बनते हैं ओर बाद में ऊपर वाली पत्तियों पर फैल जाते हैं। रोग का प्रभाव फलियों पर भी होता है। फलियां कच्ची हरी एवं चपटी होती हैं। फलियों के दोनों सतह पर हल्के हरे दागों के रूप में धब्बे बनते हैं। इन दागों के नीचे फलियों के भीतर उभरे हुए सफेद विक्षत बन जाते हैं। यह रोग पेरोनोस्पोरा पाइसी जीव की वजह से होता है।

प्रबधंन

- खेत में पड़े रोगी पौधों के अवशेष नष्ट कर दें।
- दो-तीन वर्ष का फसल चक्र अपनायें।
- रोगमुक्त प्रमाणित बीजों को थीरम 25 ग्राम प्रति किलो ग्राम दर से शोधित कर बुवाई करे।
- मैकोजेब कवकनाशी के 0.25 प्रतिशत घोल का दो बार 12.15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।
- रोगरोधी किस्मों का ही चुनाव करें जिनमें हंस, डीएमआर.11 एवं जे पी 181 शामिल हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मणिपुर

ज्वार औषधीय गुणों से भरपूर सुपरफूड

योगेश खोखर, भूपेंदर चौधरी
विद्यावाचस्पति शोधार्थी पादप प्रजनन विभाग
केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय इम्फाल (मणिपुर)

खुशबू ईनाणिया, मुकेश हरितवाल
शोध विद्यार्थी मृदा विज्ञान विभाग राष्ट्रीय बीजीय मसाला अनुसंधान केंद्र तबीजी अजमेर (राजस्थान)

प्रस्तावना

ज्वार एक महत्वपूर्ण पौष्टिक अनाज है। विकासशील देश में सैंकड़ो संख्या में ऐसे स्टार्टअप्स अस्तित्व में आए जो विभिन पौष्टिक अनाजों को प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद के रूप मे तैयार करके बाजार में विक्रय करते है। इसी दिशा में भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद के अंतर्गत कार्यकर्त भारतीय कदन्न अनुसन्धान संस्थान हैदराबाद द्वारा कदन्न उत्पादन को देशभर में प्रोहत्सान किया जा रहा है। इसी संस्थान के अन्तर्गत टेक्नोलोजी इन्क्यूबेटर की स्थापना की गयी है। जो संस्थान के इन पौष्टिक अनाजों के प्रसंस्कृत उत्पाद तैयार करने हेतु 500 से अधिक रेसिपीज़ तैयार की गयी है। इसके अन्तर्गत जयपुर राजस्थान में एक स्टार्टअप वाइस मामा नाम से सचांलित हुआ है। जो विभिन्न प्रकार के दलिया जैसे टोमेटो चीज एव चीज खिचड़ी तैयार करता है। पौष्टिक अनाज आम तोर पर गेहूँ और चावल के अलावा अन्य अनाजो को संदर्भित करते है। वैकल्पिक अनाज जैसे की बाजरा रागी एवं ज्वार जलवायु के बदलते परिवर्तन के प्रति सहनशील है। यह जलवायु की चरम सीमाओं में उत्पादन में कम गिरावट दर्शाते है। और विपरीत परिस्तिथियों में भी अच्छा उत्पादन देते है। जनसंख्या वृद्धि और भोजन की मांग में हमेशा समांतर सम्बंद रहा है। भले ही पौष्टिक अनाज बहुमुल्य सूक्ष्म और स्थूल पोषक तत्वों से परिपूर्ण है। परन्तु दैनिक-आहार में इन सभी मोटे अनाजों को कम महत्तवता दी जाती है। अगर इन सभी को मुख्य आहार के अन्तर्गत शामिल करे तो कुपोषण जैसी समस्या से निपटा जा सकता है।

तालिका 1- ज्वार में पोषक तत्वों की मात्रा (/100 ग्राम)

पोषक तत्व	मात्रा
प्रोटीन	10.4 ग्राम
वसा	3.1 ग्राम
कार्बोहायड्रेट	7.7 ग्राम
ऊर्जा	किलो कैलोरी
केल्सियम	25.00 ग्राम
आयरन	5.40 ग्राम

ज्वार मानव स्वास्थ्य के लिए वरदान

ज्वार फाइबर से भरपूर फसल है। जो विश्व भर में उगाई जाने वाली पांचवा महत्वपूर्ण मोटा अनाज है। औषधीय गुणों से देखा जाये तो वजन कम करने व कब्ज दूर करने पाचन क्रिया को तदरुस्त रखने के लिए ज्वार एक बढ़िया विकल्प है। इसमें मौजूद केल्सियम हड्डियों को मजबूती प्रदान करता है। जबकि कॉपर व आयरन शरीर में रेड ब्लड कोशिकाओं की संख्या बढ़ाने खून की कमी यानी एनीमिया को दूर करने में सहायता प्रदान करता है। गर्भवती महिला प्रसव के बाद यदि इसका उपयोग करे तो स्वास्थ्य के लिए बहुत फायदेमंद है। इसके अलावा इसमें पोटेशियम एवं फास्फेट की अच्छी मात्रा पाई जाती है। जो एलर्जी की रोकथाम में लाभदायक है। बाजरे एवं ज्वार में हाइपो एलर्जी गुणों के कारण गंभीर एलर्जी को दूर करने करने की भी क्षमता होती है। ज्वार थाइमिन राइबोफ्लेविन फोलिक अम्ल एवं विटामिन बी का प्रचुर स्रोत है। ज्वार में प्रतिरोधी स्टार्च की मात्रा अधिक होने के कारण बड़ी आंत्र को स्वस्थ बनाये रखने में सहायक है।

कैंसर रोग में

मोठे अनाज के सबसे महत्वपूर्ण लाभों में से एक यह है। कि यह कैंसर को रोकने में मदद करता है। ज्वार के दानों में एक चोकर की परत होती है। जिसमें दुर्लभ एंटीऑक्सीडेंट होते है जो शरीर के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। ये एंटीऑक्सिडेंट अन्य खाद्यान में बहुत कम मात्रा मे पाए जाते हैं।

पाचन स्वास्थ्य के लिए उत्तम स्रोत

पाचन में सुधार और पाचन तंत्र की देखभाल के लिए उच्च आहार फाइबर दुनिया के सर्वश्रेष्ठ खाद्य पदार्थों में से एक है। एकल आहार फाइबर पाचन तंत्र में भोजन की गति को पूरी तरह से सुचारू रखने में मदद करता है। सूजन ऐंठन अतिरिक्त गैस कब्ज दस्त और सामान्य पेट में दर्द के विकारो में सहायक है।

दिल की सेहत में सुधार

ज्वार में उच्च आहार फाइबर पाए जाने के कारण यह हृदय स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है। शरीर में ज्वार के उपयोग द्वारा लाए जाने वाले फाइबर की उच्च मात्रा एलडीएल कोलेस्ट्रॉल या खराब कोलेस्ट्रॉल को दूर करने में मदद करती है। इसे दिल की सेहत में काफी सुधार होता है। और यह शरीर को कई हृदयाघात जैसे दिल के दौरे और धमनी कलाकाठिन्य से बचा सकता है।

मधुमेह नियंत्रण

ज्वार का चोकर टैनिन से भरपूर होता है। जो शरीर में शर्करा और स्टार्च के अवशोषण को कम करता है। शरीर में ग्लूकोज और इंसुलिन के स्तर को नियंत्रित करने में बहुत मदद करता है जिससे मधुमेह जैसी बीमारियों से उच्च सुरक्षा प्राप्त होती है। पहले से ही मधुमेह से पीड़ित लोगों के लिए ज्वार का नियमित सेवन करने से ग्लूकोज और इंसुलिन के विनियमित स्तर सुनिश्चित होता है। जिससे की उनके शरीर में ग्लूकोज के स्तर में नियमित वृद्धि नहीं होती है।

एलर्जी से राहत के लिए बढ़िया विकल्प

पूरी दुनिया गंभीर एलर्जी के हानिकारक प्रभावों से जूझ रही है। जो मुख्य रूप से गेहूं आधारित उत्पादों की अधिक खपत के कारण होती है। एलर्जी से सीलिएक रोग होता है। जो एक गंभीर ऑटो-प्रतिरक्षा रोग है। दुनिया भर में बड़ी संख्या में खाद्य पदार्थों का उपयोग किए जाने वाले गेहूं के साथ यह ग्लूटेन एलर्जी की थोड़ी भी समस्या से पीड़ित लोगों के लिए एक बड़ी समस्या हो सकती है। जिन लोगो को ग्लूटेन से एलर्जी हो उनके आहार में ज्वार के दाने भोजन का उत्तम स्रोत है।

ऊर्जा स्तर का अच्छा स्रोत

ज्वार नियासिन या विटामिन बी3 का एक समृद्ध स्रोत है। नियासिन भोजन को शरीर द्वारा ऊर्जा के रूप में परिवर्तित करने का एक अभिन्न माध्यम है। जो पोषक तत्वों को ऊर्जा में परिवर्तित कर शरीर में पूरे दिन ऊर्जा के स्तर को स्थिर रखता है।

परिसंचरण बेहतर बनाने में सहायक

ज्वार की फसल खनिजों से समृद्ध है। जिसमें तांबा और लोहा प्रचुर मात्रा मे मिलते है। दो अन्य मुख्य तत्व कैल्शियम और मैगनीशियम मिलकर हड्डियों को मजबूत बनाने का काम करते हैं। शरीर में रक्त परिसंचरण को बेहतर बनाने के लिए तांबा और लोहा एक साथ काम करते हैं। आयरन रक्त कोशिकाओं के विकास के लिए बेहद महत्वपूर्ण है। तांबा शरीर में लोहे के अवशोषण के साथ लाल रक्त कोशिकाओं के विकास में सहायक है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

मछली संरक्षण : शेल्फ-जीवन विस्तार तकनीकें

सूरज कुमावत और कनिका पंवार
मत्स्य विज्ञान महाविद्यालय और खाद्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी केंद्र, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार-125004 (हरियाणा)

संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ.ए.ओ) ने अपनी खाद्य संतुलन सांख्यि की रिपोर्ट में बताया कि उन्नत खाद्य संरक्षण प्रौद्योगिकियों के इस्तेमाल से मांस, फल और सब्जियों जैसे खाद्य समूहों के वार्षिक नुकसान को पांच प्रतिशत से भी कम करने में मदद मिलती है। हालाँकि, इन उन्नत समाधानों में ऐसे संरक्षक शामिल हैं जो स्वाद को खराब कर सकते हैं इसके विपरीत अन्य रासायनिक योजक का इस्तेमाल कर शेल्फ-जीवन को बढ़ाने मे मदद मिलती हैं । ताजा उपज के संवेदी और पोषण संबंधी गुणों के बारे में उपभोक्ताओं की बढ़ती जागरूकता के कारण, उद्योग बिना किसी रासायनिक योजक के नई और बेहतर शेल्फ-जीवन विस्तार प्रौद्योगिकियों की तलाश कर रहा है। यह लेख उभरते, नवीन, प्राकृतिक शेल्फ-जीवन-विस्तारित समाधानों का वर्णन करता है जो भोजन की बर्बादी को रोकने में भी मदद करते हैं।

मछली व मत्स्य उत्पादों को संरक्षित करने के विभिन्न तरीके

वर्तमान में, अंतिम उत्पाद गुणों के आधार पर मछली और मत्स्य उत्पादों को संरक्षित करने के लिए विभिन्न तरीकों का उपयोग किया जाता है। इनमें सबसे अधिक इस्तेमाल की जाने वाली मछली संरक्षण विधियाँ हैं; ठंडा करना, जमना (फ्रीज़िंग), क्यूरिंग करना (सूखना, नमकीन बनाना और स्मोकिंग प्रक्रिया), डिब्बाबंदी प्रक्रिया, मैरीनेट करना, उबालना और किण्वन। मछली को संरक्षित करने के लिए विकिरण द्वारा संरक्षण, फ्रीज़-सुखाने (फ्रीज़ ड्रॉयिंग), संशोधित वायुमंडलीय पैकेजिंग, रिटॉर्ट पाउच पैकेजिंग जैसी अन्य विधियों का भी उपयोग किया जाता है।

दृढ़तशीतन (चिलिंग)

शीतलन (ठंडा करना) द्वारा संरक्षण मुख्य रूप से जैव रासायनिक और सूक्ष्मजीवविज्ञानी दोनों प्रक्रियाओं में देरी के लिए मछली के तापमान को यथासंभव कम (0°C के करीब) करने के कारण होता है। तापमान कम होने से सूक्ष्मजीवों की विलंब अवधि बढ़ जाती हैं, जिसके परिणाम स्वरूप उनकी वृद्धि नहीं होती। मछली का तापमान जितना कम होगा, एंजाइमों और सूक्ष्मजीवों की गतिविधि उतनी ही कम होगी।

हिमीकरण

हिमीकरण के दौरान कम तापमान के प्रभाव से एवं बर्फ के निर्माण से बैक्टीरिया कोशिकाओं के यांत्रिक टूटने के साथ-साथ, सब्सट्रेट में पानी के बड़े हिस्से का जमना भी सूक्ष्मजीवों को कम करने में योगदान देता है, इस प्रकार शेल्फ जीवन बढ़ जाता हैं। मछली का तापमान जितना कम होगा, एंजाइमों और सूक्ष्मजीवों की गतिविधि उतनी ही कम होगी। उत्पाद को जमने से पहले ग्लेज़िंग करके ऑक्सीडेटिव बासीपन की समस्या को भी नियंत्रित में किया जा सकता हैं।

एम.ए.पी (संशोधित वायुमंडलीय पैकेजिंग)

एम.ए.पी में संरक्षण पर्यावरण की गैसीय संरचना को बदलकर सूक्ष्मजीवों की वृद्धि दर को बढ़ाने से रोकते हैं, इस प्रकार सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के प्रतिकूल परिस्थितियों का निर्माण करके (मुख्य रूप से सूक्ष्मजीवों पर कार्बन डाइऑक्साइड के प्रभाव के कारण), और लिपिड ऑक्सीडेशन से बचाकर किया जाता है।

कैनिंग और रिटॉर्ट पाउच पैकेजिंग

दोनों मामलों में परिरक्षक प्रभाव मुख्य रूप से कमर्शियल स्टर्लिटी लाने के लिए उत्पादों को भली भांति बंद करके सील किए गए कंटेनरों/पाउचों में उच्च तापमान पर रखकर किया जाता है, जहां अत्यधिक गर्मी स्थिर बीजाणु को छोड़कर, अधिकांश सूक्ष्मजीव जीवित नहीं रहते हैं। इस विधि में उत्पादों को कमर्शियल स्टर्लिटी प्राप्त करने के इरादे से एक निश्चित समय के लिए उच्च तापमान (121°C) पर गर्म किया जाता है ताकि रोगजनकों और विषाक्त पदार्थों के जोखिम से बचा जा सके, डिब्बाबंद खाद्य पदार्थों में मुख्य रूप से क्लोस्ट्रीडियम बोटुलिनम पाया जाता हैं, जो एक उच्च गर्मी प्रतिरोधी बीजाणु बनाने वाला और टोक्सिन पैदा करने वाला बैक्टीरिया है।

मैरिनेट करना

मैरिनेड को नमक युक्त एसिड (एसिटिक एसिड और प्रोपियोनिक एसिड), पीएच 4.5 पर रखकर संरक्षित किया जाता है। पीएच 4.5 या उससे कम पर अधिकांश खाद्य विषाक्तता पैदा करने वाले बैक्टीरिया की वृद्धि रुक जाती है, जिसके परिणाम स्वरूप एक विशिष्ट स्वाद और विस्तारित लेकिन सीमित शेल्फ जीवन वाला उत्पाद प्राप्त होता है। एसिटिक एसिड पीएच को नियंत्रित करता है और चुनिंदा रूप से ऑटोलिटिक प्रतिक्रियाओं को होने देता है। नमक (सोडियम क्लोराइड) पानी को हटाने का कारण बनता है और प्रोटीन को कुएगुलाटे कर देता है। जब उत्पाद को खाने तक ठंडा रखा जाए तो आवश्यक एसिड और नमक की मात्रा को कम किया जा सकता है।

उबालना

सामान्य तापमान और दबाव (प्रेशर) पर मछली को पानी में उबालने की क्रिया से प्रोटीन और एंजाइम नष्ट हो जाते हैं (पकते हैं) और मछली पर मौजूद कई बैक्टीरिया भी मर जाते हैं।

किण्वन प्रक्रिया

मछली संरक्षण में उपयोग की जाने वाली किण्वन प्रक्रिया का उद्देश्य मछली के मांस को यथासंभव उसकी मूल स्थिति के करीब रखना है। हालांकि, किण्वन के साथ, हम उन तरीकों पर विचार कर रहे हैं जिनके द्वारा गीले प्रोटीन को सरल पदार्थों में तोड़ दिया जाता है जो सामान्य तापमान पर स्वयं स्थिर होते हैं। किण्वन प्रक्रिया को एक विशेष स्वाद उत्पन्न करने के साथ-साथ उत्पाद को संरक्षित करने के लिए भी इस्तेमाल किया जाता है।

सारांश

मछली अच्छी गुणवत्ता वाले प्रोटीन और स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाले पॉलीअनसेचुरेटेड फैटी एसिड का समृद्ध स्रोत होती है। कम संयोजी ऊतक, लगभग तटस्थ पीएच, अत्यधिक असंतृप्त फैटी एसिड के कारण, मछली में बैक्टीरिया, एंजाइमैटिक और ऑक्सीडेटिव खराब होने का खतरा अधिक होता है। सामान्य तौर पर थर्मल (कम या अधिक), गैर-थर्मल और मछली संरक्षण में नियोजित विभिन्न परिरक्षक विधियों का संयोजन।

जय शीतला खाद बीज भण्डार
उच्च क्वालिटी के बीज, कीटनाशक दवाईयां एवं खाद के थोक व खेरीज विक्रेता
विवेक सिंह (लोहगढ़ वाले)
मोबाइल : 9425116760, 7000820097
आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के पास, जवाहरगंज, डबरा, जिला-ग्वालियर
03/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

साइट्रस कैंकर : नींबू की सबसे विनाशकारी बीमारी

गरिमा, एन.के. यादव, शुभम सैनी
चौधरी चरण सिंह हरियाणा एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी, हिसार, हरियाणा

साइट्रस कैंकर क्या है?

साइट्रस कैंकर नींबू के सबसे महत्वपूर्ण रोगों में से एक रोग है, जो जीवाणु ज़ैंथोमोनास एक्सोनोपोडिस के कारण होता है। यह जीवाणु मनुष्यों के लिए हानिकारक नहीं है, लेकिन नींबू के पेड़ों की जीवन शक्ति को व्यापक रूप से प्रभावित करता है। इस वजह से पत्तियां और फल समय से पहले गिर जाते हैं। कैंकर से संक्रमित फल खाने के लिए सुरक्षित हैं, लेकिन ताजे फल के रूप में इसकी बिक्री में भारी कमी आ जाती है बाजार में अच्छा मूल्य नहीं मिलता। एसिड लाइम किस्म साइट्रस कैंकर के लिए अतिसंवेदनशील है। उपज की हानि किस्म के आधार पर 5 से 35 प्रतिशत के बीच होती है।

कैसे करें इस बीमारी की पहचान?

वैसे तो नींबू की सभी प्रजातियां साइट्रस कैंकर के लिए अति संवेदनशील होती हैं, लेकिन यह रोग सर्वाधिक कागजी नींबू में पाया जाता है। जीवाणु पुराने घावों और पौधों की सतहों पर कई महीनों तक व्यवहार्य रहते हैं। घावों से जीवाणु कोशिकाएं निकलती हैं, जो हवा और बारिश से फैल सकती हैं।

भारी बारिश और तूफान जैसे हवा की घटनाओं से संक्रमण और फैल सकता है। रोगग्रस्त पेड़ की कटिंग, अनुपचारित संक्रमित फल और संक्रमित पौधों को स्थानांतरित करके बीमारी को फैलाने में सहायक होते हैं। यह रोग उच्च वर्षा और उच्च तापमान वाले क्षेत्रों में ज्यादा पनपता है। साइट्रस कैंकर रोग पैदा करने वाले बैक्टीरिया रंध्रों के माध्यम से या मौसम की क्षति या कीड़ों के कारण जैसे कि साइट्रस लीफ माइनर (फिलोकोनिस्टिस सिट्रेला) से हुए घावों के माध्यम से पत्तियों में प्रवेश करते हैं। यह रोग पौधों और बड़े हो चुके पेड़ों पर हमला करता है। नर्सरी में युवा पौधों में, रोग गंभीर क्षति का कारण बनता है। युवा पत्ते सबसे अधिक संवेदनशील होते हैं। लक्षण आमतौर पर बैक्टीरिया के संपर्क में आने के 14 दिनों के भीतर दिखाई देते हैं। बुरी तरह से रोग से आक्रांत पत्तियां नीचे गिर जाती हैं और गंभीर प्रकोप में पूरा पौधा मर जाता है। रोग पत्तियों, टहनियों, कांटों, पुरानी शाखाओं और फलों को प्रभावित करता है।

- साइट्रस कैंकर बीमारी कम दूरी पर तेजी से फैलती है।
- हवा से चलने वाली बारिश और पानी के छींटे पेड़ों के भीतर फैलने के प्राथमिक साधन हैं।
- सिंचाई से रोग फैलने का खतरा बढ़ सकता है।
- दूषित उपकरण और उपकरण, लोग और पक्षी साइट्रस नासूर फैला सकते हैं।
- लंबी दूरी तक फैलाव संक्रमित पौधों या नर्सरी पेड़ों और प्रसार सामग्री (बडवुड, रूटस्टॉक रोपण और उभरे हुए पेड़) सहित पौधों के हिस्सों की आवाजाही के माध्यम से होता है। तूफान और तेज़ हवाओं और बारिश की गंभीर मौसमी घटनाएँ साइट्रस कैंकर को लंबी दूरी तक फैला सकती हैं।
- साइट्रस कैंकर बैक्टीरिया जीवित साइट्रस पौधों पर घावों में 10 महीने तक जीवित रह सकते हैं। रोगग्रस्त पौधों के ऊतकों में लंबे समय तक जीवित रहना संभव है, जिसमें खट्टे पेड़ों के तनों और अंगों की बदरंग छाल और पौधों के मलबे भी शामिल हैं।

रोग के लक्षण

साइट्रस कैंकर ज्यादातर पत्ती-धब्बे और फल के छिलके को खराब करने वाली बीमारी है, लेकिन जब परिस्थितियाँ संक्रमण के लिए अत्यधिक अनुकूल होती हैं, तो संक्रमण के कारण पत्तियां गिर जाती हैं, अंकुर मर जाते हैं और फल गिर जाते हैं। साइट्रस कैंकर के लक्षणों में पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बे शामिल होते हैं, जो अक्सर तैलीय या पानी से लथपथ दिखाई देते हैं। धब्बे (तकनीकी रूप से घाव कहा जाता है) आमतौर पर पीले प्रभामंडल से घिरे होते हैं, और उन्हें पत्ती के ऊपरी और निचले दोनों किनारों पर देखा जा सकता है। इसी तरह के लक्षण फल और तनों पर भी दिखाई दे सकते हैं। आमतौर पर घाव के चारों ओर एक पीला आभामंडल होता है। पुराने घाव कॉरकी दिखाई देते हैं। पंखुड़ियाँ गिरने के 90 दिन बाद तक फल अतिसंवेदनशील होते हैं। युवा पौधे और अंकुर साइट्रस कैंकर के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं।

पत्तों पर

सबसे पहले पत्ती की निचली सतह पर चमकीले पीले धब्बे दिखाई देते हैं, इसके बाद पत्तियों के दोनों तरफ भूरे रंग के उभरे हुए घाव दिखाई देते हैं। फिर ये खुरदरे, फटे और कठोर हो जाते हैं।

फल पर

तैलीय या पीले प्रभामंडल से घिरी सतह पर गड्ढे जैसे घाव बनते हैं, जो 10 मिमी तक फैल सकते हैं। अनियमित पैटर्न में कई घाव एक साथ हो सकते हैं। नये फलों में रालयुक्त पदार्थ का रिसाव देखा जा सकता है।

तनों और शाखाओं पर

घाव हल्के से गहरे भूरे, उभरे हुए और कॉरकी होते हैं, जो अंततः सूखे और पपड़ीदार हो जाते हैं। इनका आकार 5 से 10 मिमी तक भिन्न हो सकता है। तनों पर लक्षणों का दिखना अक्सर लंबे समय तक संक्रमण का संकेत देता है।

सिट्रस कैंकर रोग का प्रबंधन कैसे करें?

- रोग से ग्रसित गिरे हुए पत्तों और टहनियों को इकट्ठा करके जला देना चाहिए।
- नए बागों में रोपण के लिए रोग मुक्त नर्सरी स्टाक का उपयोग किया जाना चाहिए।
- नए बागों में रोपण से पहले पौधों को ब्लाइटाक्स 50 की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में एवं स्ट्रेप्टोसाइकिलिन की 1 ग्राम मात्रा को प्रति 3 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव किया जाना चाहिए।
- पत्तियों के हर नए फूल आने के तुरंत बाद ब्लाइटाक्स 50 एवं स्ट्रेप्टोसाइकिलिन का छिड़काव करना चाहिए।
- उचित निशेचन और सिंचाई द्वारा पौधे की शक्ति को हमेशा बनाए रखना चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

भारत की लकड़ी की विरासत : महत्वपूर्ण पेड़ों और उनके आर्थिक प्रभाव की खोज

ममता खेपड, पवन कुमार पुनिया
मोनिका जांगड़ा
वानिकी विभाग, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय
अनिल कुमार कृषि विज्ञान केन्द्र, यमुनानगर
प्रीति वर्मा पौध रोग विभाग, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

परिचय

भारत में लकड़ी के पेड़ों की प्रजातियों की एक समृद्ध विविधता है, जो निर्माण, फर्नीचर बनाने और हस्तशिल्प जैसे विभिन्न उद्योगों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। ये पेड़ विभिन्न विशेषताओं के साथ मूल्यवान लकड़ी प्रदान करते हैं, जिससे उन्हें बाजार में अत्यधिक मांग होती है। यह लेख भारत की व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण लकड़ी के पेड़ की प्रजातियों में तल्लीन करता है, विभिन्न उद्योगों में उनकी अनूठी विशेषताओं, अनुप्रयोगों और महत्व की खोज करता है।

सागौन (टेक्टोना ग्रैंडिस) - टिम्बर्स का राजा

सागौन, जिसे "किंग ऑफ टिम्बर्स" के रूप में जाना जाता है, अपने असाधारण गुणों के कारण लकड़ी उद्योग में एक प्रमुख स्थान रखता है। यह अत्यधिक टिकाऊ, दीमक और कवक क्षय के लिए प्रतिरोधी है, और सुंदर अनाज और बनावट प्रदर्शित करता है। सागौन की लकड़ी उच्च गुणवत्ता वाले फर्नीचर, फर्श, नाव निर्माण और सजावटी विनर के निर्माण में व्यापक उपयोग पाती है। इसका प्राकृतिक तेल और उच्च सिलिका सामग्री इसे बाहरी अनुप्रयोगों और समुद्री वातावरण के लिए उपयुक्त बनाती है।

साल (शोरिया रोबस्टा) - भारतीय वन विशाल

साल, भारतीय जंगलों का विशालकाय, एक मजबूत लकड़ी का पेड़ है जो देश भर में व्यापक रूप से वितरित किया जाता है। इसकी लकड़ी टिकाऊ, मजबूत और कीटों और क्षय के लिए प्रतिरोधी है। बीम, पोस्ट और रेलवे स्लीपरों के निर्माण में साल की लकड़ी का बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है। यह फर्नीचर बनाने, फर्श और प्लाईवुड उत्पादन में भी आवेदन पाता है। इसके अतिरिक्त, साल राल का उपयोग वार्निश और लाह के निर्माण के लिए किया जाता है।

शीशम (डालबर्गिया सिसु) - भारत का रोज़वुड

शीशम, जिसे आमतौर पर भारतीय रेशम के रूप में जाना जाता है, अपने समृद्ध, गहरे रंग और आकर्षक अनाज पैटर्न के लिए प्रसिद्ध है। यह एक मजबूत लकड़ी की प्रजाति है जो ताना और टूटने के लिए प्रतिरोधी है। शीशम फर्नीचर बनाने में अत्यधिक मूल्यवान है, विशेष रूप से जटिल नक्काशी के साथ उत्तम टुकड़े तैयार करने के लिए। इसका उपयोग कैबिनेटरी, फर्श और संगीत वाद्ययंत्र निर्माण में भी किया जाता है, क्योंकि यह अनुनाद स्वर पैदा करता है।

चंदन (संतालम एल्बम) - सुगंधित खजाना

चंदन एक सुगंधित लकड़ी का पेड़ है जो भारत में

अत्यधिक सांस्कृतिक और व्यावसायिक महत्व रखता है। यह अपनी विशिष्ट सुगंध और सुंदर सुनहरी-भूरी लकड़ी के लिए जाना जाता है। धार्मिक मूर्तियों, अगरबत्ती और इत्र को तराशने में चंदन के उपयोग की अत्यधिक मांग है। हार्टवुड से निकाले गए इसके तेल का उपयोग अरोमाथेरेपी, सौंदर्य प्रसाधन और आध्यात्मिक समारोहों में किया जाता है।

भारतीय शीशम (डालबर्गिया लैटिफोलिया) - विदेशी सौंदर्य

भारतीय रेशम, जिसे ईस्ट इंडियन शीशम या सोनोकलिंग के रूप में भी जाना जाता है, अद्वितीय अनाज पैटर्न के साथ अपने आश्चर्यजनक गहरे भूरे से बैंगनी-भूरे रंग की लकड़ी के लिए बेशकीमती है। यह एक घनी और टिकाऊ लकड़ी है जिसका उपयोग उच्च गुणवत्ता वाले फर्नीचर, फर्श, कैबिनेटरी और संगीत वाद्ययंत्र में किया जाता है। भारतीय रेशम की प्राकृतिक चमक और सुंदर फिनिश इसे लक्जरी फर्नीचर बाजार में अत्यधिक वांछनीय बनाती है।

देवदार देवदार (सेड्रास देवदार) - हिमालयी रत्न

देवदार देवदार, हिमालयी क्षेत्र का मूल निवासी, एक बड़ा सदाबहार पेड़ है जो मूल्यवान लकड़ी प्रदान करता है। इसकी लकड़ी हल्की, मजबूत और क्षय के लिए अत्यधिक प्रतिरोधी है। देवदार देवदार की लकड़ी का व्यापक रूप से बीम, छत, दरवाजे और खिड़की के फ्रेम के निर्माण में उपयोग किया जाता है। बाहरी फर्नीचर, नाव निर्माण और सजावटी लकड़ी के काम के लिए भी इसकी मांग की जाती है।

नीम (Azadirachta Indica) - बहुमुखी आश्चर्य

नीम, भारत का एक बहुमुखी पेड़ है, जो अपनी लकड़ी से परे अनुप्रयोगों की एक विस्तृत श्रृंखला प्रदान करता है। नीम की लकड़ी टिकाऊ और दीमक प्रतिरोधी होती है, जो इसे फर्नीचर बनाने, कृषि उपकरणों और वीनर के लिए उपयुक्त बनाती है। नीम की लकड़ी का उपयोग अक्सर कृषि उपकरणों जैसे हल और गाड़ियों के निर्माण में किया जाता है, इसकी ताकत और लचीलेपन के कारण। इसके अतिरिक्त, नीम के पत्ते, बीज और तेल में कई औषधीय और कीटनाशक गुण होते हैं, जो विभिन्न उद्योगों में इसके महत्व को और बढ़ाते हैं।

महोगनी (स्वीटेनिया मैगोनी) - सुरुचिपूर्ण दृढ़ लकड़ी

महोगनी एक अमीर लाल-भूरे रंग और एक महीन, सीधे अनाज के साथ एक सुरुचिपूर्ण दृढ़ लकड़ी है। यह अपनी ताकत, स्थायित्व और सड़ांध के प्रतिरोध के लिए अत्यधिक मूल्यवान है। महोगनी लकड़ी का व्यापक रूप से उच्च अंत फर्नीचर उत्पादन, कैबिनेटरी, संगीत वाद्ययंत्र और सजावटी पैनलिंग में उपयोग किया जाता है। इसकी शानदार उपस्थिति और कार्यक्षमता में आसानी इसे कारीगरों और शिल्पकारों के बीच पसंदीदा विकल्प बनाती है।

बांस - टिकाऊ विकल्प

हालांकि पारंपरिक लकड़ी का पेड़ नहीं है, बांस भारतीय उद्योगों में अपने अत्यधिक महत्व के लिए मान्यता का हकदार है। बांस एक तेजी से बढ़ता हुआ, नवीकरणीय संसाधन है जो अनुप्रयोगों की एक विस्तृत श्रृंखला प्रदान करता है। इसका उपयोग मचान, फर्श और दीवार पैनलों के निर्माण में किया जाता है। फर्नीचर बनाने में, बांस का उपयोग कुर्सियों, मेजों और विभिन्न घरेलू सजावट वस्तुओं के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त, बांस को हस्तशिल्प, कागज उत्पादन और कई उद्योगों में पारंपरिक लकड़ी के स्थायी विकल्प के रूप में नियोजित किया जाता है।

संरक्षण और सतत प्रबंधन

वुडी ट्री प्रजातियों का सतत प्रबंधन उनकी दीर्घकालिक उपलब्धता और पारिस्थितिक संतुलन के लिए महत्वपूर्ण है। संरक्षण के प्रयासों को प्राकृतिक वनों की रक्षा, वनों की कटाई को बढ़ावा देने और जिम्मेदार कटाई प्रथाओं को सुनिश्चित करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। सख्त नियम, प्रमाणन कार्यक्रम और सामुदायिक भागीदारी स्थायी लकड़ी उत्पादन और जैव विविधता के संरक्षण में योगदान कर सकती है।

निष्कर्ष

भारत की वुडी ट्री प्रजातियां अत्यधिक आर्थिक, सांस्कृतिक और पारिस्थितिक मूल्य रखती हैं। उनकी अनूठी विशेषताएं, स्थायित्व और सौंदर्य अपील उन्हें निर्माण, फर्नीचर बनाने और हस्तशिल्प जैसे उद्योगों के लिए संसाधनों की मांग करती है। शाही सागौन से लेकर सुगंधित चंदन तक, प्रत्येक लकड़ी की प्रजाति अलग-अलग गुण प्रदान करती है जो भारत के औद्योगिक परिदृश्य की विविधता और समृद्धि में योगदान करती है। इन मूल्यवान संसाधनों की निरंतर उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए स्थायी प्रबंधन प्रथाओं और संरक्षण प्रयासों के महत्व को पहचानना आवश्यक है। जिम्मेदार कटाई, पुनर्वितरण और सामुदायिक भागीदारी को बढ़ावा देकर, हम आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बना सकते हैं। इसके अतिरिक्त, बांस जैसे विकल्पों की खोज स्थायी प्रथाओं में योगदान कर सकती है और पारंपरिक लकड़ी के पेड़ की प्रजातियों पर दबाव कम कर सकती है। जैसा कि हम एक बदलती दुनिया की चुनौतियों का सामना करते हैं, इन लकड़ी के पेड़ प्रजातियों और उनके आवासों को संरक्षित करने के महत्व को गले लगाना महत्वपूर्ण है। विभिन्न उद्योगों में उनके महत्व का मूल्यांकन करके और स्थायी प्रथाओं को लागू करके, हम भारत के वनों और जैव विविधता के संरक्षण को बढ़ावा देते हुए भविष्य की पीढ़ियों के लिए इन संसाधनों की निरंतर उपलब्धता सुनिश्चित कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
बिहार

धृतकुमारी या ऐलोबेरा के औषधीय गुण एवं उत्पादन तकनीक

डॉ. अनिल कुमार सिंह वरीय वैज्ञानिक एवं प्रधान, कृषि विज्ञान केन्द्र, सरैया, मुजफ्फरपुर (बिहार)

डॉ. रंजु कुमारी सहायक प्राध्यापक सह वैज्ञानिक, नालन्दा उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय, नालन्दा

ई. सुभाष चन्द्रा सह-प्राध्यापक, अभियंत्रण कृषि महाविद्यालय, पूसा

डॉ. रजनीश सिंह वि.व.वि., पौधा संरक्षण, कृषि विज्ञान केन्द्र, सरैया, मुजफ्फरपुर

हेमचन्द्र चौधरी सहायक प्राध्यापक-सह वैज्ञानिक, बीज निदेशालय, ढोली

सामान्य वर्णन: यह लिलिएसी कुल का बहुवर्षीय मांसल पौधा है जिसकी ऊंचाई 2-3 फीट तक होती है। इसका तना बहुत छोटा तथा जड़े भी झकड़ा होती है जो कि जमीन के अंदर कुछ ही गहराई तक रहती है। मूल के ऊपर से काण्ड से पत्ते निकलते है। पत्ते मांसल, फलदार, हरे तथा एक से डेढ़ फीट तक लंबे होते हैं। पत्तों की चौड़ाई 1 से 3 ईंच तक मोटाई आधी इंच तक होती है। पत्तों के अन्दर घृत के समान चमकदार गुदा होती है। जिसमें कुछ हल्की गंध आती है तथा स्वाद में कड़वा होता है। पत्तों को काटने पर एक पीले रंग का द्रव्य निकलता है। जो ठंडा होने पर जम जाता है जिसे 'कुमारी सार' कहते हैं। आयुर्वेद में इसे घृतकुमारी के नाम से पहचानते हैं। ग्वारपाठा मुख्यतः फलोरिडा, वेस्टइंडीज, मध्य अमेरिका तथा एशिया महाद्वीप में प्राकृतिक रूप से पाया जाता है। भारत में पूर्व में विदेशों से लाया गया था लेकिन अब पूरे देश में खासकर शुष्क इलाकों में जंगली पौधों के रूप में मिलता है। भारत में इसकी खेती राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र तथा हरियाणा के शुष्क इलाकों में की जाती है।

उपयोग

आयुर्वेद के मतानुसार ग्वारपाठा कडुठा, शीतल, रेचक, धातु परिवर्तक, मज्जावर्धक, कामोदीपक, कृमिनाशक और विशनाशक होता है। नेत्र रोग, अवूर्द, तिल्ली की वृद्धि, यकृत रोग, वमन, ज्वर, खासी, विसर्ग, चर्म रोग, पित्त, श्वास, कुष्ठ पीलियां, पथरी और वृण में लाभदायक होता है। आयुर्वेद की प्रमुख दवायें जैसे घृतकुमारी अचार, कुमारी आसव, कुवारी पाक, चातुवर्गभस्म, मंजी स्याडी तेल आदि इसके मुख्य उत्पाद है। प्रसाधन सामग्री के निर्माण में भी उपयोग प्रमुख रूप में किया जाता है। त्वचा में नयापन लाने हेतु इसके उत्पादों का उपयोग पौराणिक काल से ही हो रहा है। उत्पादों का विश्व बाजार में काफी मांग के चलते ग्वारपाठा के खेती की आवश्यक्ता महसूस की जा रही है।

जलवायु

ग्वारपाठे को मुख्यतः गर्म आर्द्र से शुष्क व उष्ण जलवायु की आवश्यक्ता होती है।

भूमी

हालांकि घृतकुमारी की खेती असिंचित तथा सिंचित ओनों प्रकार की भूमि में की जा सकती है परन्तु इसकी खेती हमेशा ऊंची भूमि पर करनी चाहिए। खेती की गहरी अच्छी जुताई होना चाहिए।

भूमि तैयारी व खाद

वर्षा ऋतु से पहले खेत में एक दो जुताई 20-30 सेंमी. की गहराई तक पर्याप्त है जुताई के समय 10-15 टन गोबर की खाद एकसार भूमि में अंतिम जुताई के साथ मिला देनी चाहिए।

बुवाई का समय

इसकी बिजाई सिंचित क्षेत्रों में सर्दी को छोड़कर पूरे वर्ष की जा सकती है लेकिन उपयुक्त समय जुलाई-अगस्त है।

बीज की मात्रा

इसकी बिजाई ''6-8'' के पौध द्वारा किया जाना चाहिए। इसकी बिजाई 3-4 महीने पुराने चार-पांच पत्तों वाले कंदों के द्वारा की जाती है। एक एकड़ भूमि के लिए करीब 5000 से 10000 कदों/सकर्स की जरूरत होती है। पौध की संख्या भूमि की उर्वरता तथा पौधा से पौधा की दूरी एवं कतार से कतार की दूरी पर निर्भर करता है।

बीज प्राप्ति स्थान

एलोईन तथा जेल उत्पादन की दृष्टि से नेशनल ब्यूरो ऑफ प्लान्ट जेनेटिक सोर्सेस द्वारा घृत कुमारी की कई किस्में विकसित की गयी है। सीमैप, लखनऊ ने भी उन्नत प्रजाति (अंकचा/ए.एल.-1) विकसित की है। वाणिज्यिक खेती के लिए जिन किसानों ने पूर्व में ग्वारपाठा की खेती की हो तथा जूस/जेल आदि का उत्पादन में पत्तियों का व्यवहार कर रहे हों, सम्पर्क करना चाहिए।

रोपण विधि

इसके रोपण के लिए खेत में खूड़ बनाए जाते हैं। एक मीटर में इसकी दो लाईनें लगेंगी तथा फिर एक मीटर जगह खाली छोड़कर पुनः एक मीटर में दो लाईन लगेंगी। यह एक मीटर की दूरी ग्वारपाठे काटने, निकाई गुड़ाई करने में सुविधाजनक रहता है। पुराने पौधे के पास से छोटे पौधे निकलने के बाद पौधे के चारों तरफ जमीन को अच्छी तरह दबा देना चाहिए। खेत में पुराने पौधों से वर्षा ऋतु में कुछ पौधे निकलने लगते है इनकों जड़ सहित निकालकर खेत में पौधारोपण के काम में लिया जा सकता है। नये फल बाग में अन्तरवत्ती फसल के लिए ग्वारपाठा की खेती उपयुक्त है।

सिंचाई

बिजाई के तुरंत बाद एक सिंचाई करनी चाहिये बाद में आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिये। समय-समय पर सिंचाई पत्तों में जेल की मात्रा बढ़ती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
केरल

विक इरीगेशन (बाती सिंचाई)–एक लागत कम कृषि सिंचाई प्रौद्योगिकी

अमित कुमार शोध स्कॉलर, फार्म मशीनरी और पावर इंजीनियरिंग विभाग, केरला कृषि वि.वि., केरल

विवेकानंद सिंह शोध स्कॉलर, फार्म मशीनरी और पावर इंजीनियरिंग विभाग, सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी और विज्ञान विश्वविद्यालय प्रयागराज (उ.प्र.)

विक इरीगेशन (बाती सिंचाई) भारत में एक महत्वपूर्ण कृषि सिंचाई प्रौद्योगिकी है जो किसानों को आर्थिक और जल संभावनाओं में लाभ प्रदान करती है। इसके द्वारा पानी की बचत होती है और उत्पादकता में सुधार होता है। इस प्रणाली के उपयोग से किसान अधिक उत्पादन कर सकता है और उसका लाभ कम खर्च में होता है। जल संचयन के दृष्टिकोण से भी, विक इरीगेशन बहुत उपयोगी है और किसान अपने संबंधित क्षेत्र में जल संचयन कर सकता है। यह बागवानी और खेती हेतु विशेष रूप से उपयुक्त है जहां पानी की व्यवस्था में कठिनाईयां हो सकती हैं। इससे किसान अपने खेतों की सिंचाई को सुस्ती और लाभदायक बना सकता है और जल संसाधनों को बचा सकता है। इसलिए, भारतीय किसानों को विक इरीगेशन का उपयोग करने हेतु प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि उन्हें अधिक समृद्धि और समृद्धि की प्राप्ति हो सके।

प्रस्तावना: कृषि सिंचाई एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है, जो फसलों के विकास और उत्पादकता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जल, विकास और कृषि के लिए अनमोल संसाधन है। जल संसाधन की बढ़ती मांग, विकास के साथ साथ कृषि में व्यवसायिक विकसित और गरीब किसानों को सस्ता और लाभकारी बनाने की चुनौतियों के सामने रोक खड़ी कर रही है। इसलिए, जल संचयन, जल बचत और जल उपयोग में नवीनतम तकनीकों का अध्ययन और उनका अमल आवश्यक है। लेकिन आधुनिक युग में पानी की कमी के कारण, सिंचाई प्रणालियों के विकसित करने की जरूरत है जो कम पानी का इस्तेमाल करके अधिकतम उत्पादकता प्रदान कर सकें। इस संदर्भ में, ÷विक इरीगेशन÷ (बाती सिंचाई) एक ऐसी लागत कम सिंचाई प्रौद्योगिकी है, जो किसानों को खेती में जल का सर्वांगीण उपयोग करने की सुविधा प्रदान करती है। इस लेख में हम विक इरीगेशन के बारे में विस्तृत जानकारी देंगे।

विक इरीगेशन क्या है?: विक इरीगेशन एक ऐसी सिंचाई प्रणाली है जिसमें एक धागे के रूप में जल स्रोत को धारा के माध्यम से फ़िल्टर और जल सिंचाई यंत्रों द्वारा प्राप्त करके पौधों को सीधे जल प्रदान किया जाता है। यह खेती के लिए पानी के उपयोग को कम करती है और उत्पादकता में सुधार करती है। यह विशेष रूप से बागवानी में खेती के लिए विकसित की गई है। इस प्रणाली का प्रमुख घटक विक है, जो एक फोल्डेड ग्लास वूल है जो एक 30 सेमी लंबाई और 2 सेमी चौड़ाई के प्लास्टिक जाल के टुकड़े में डाला जाता है। ग्रो बैग के नीचे एक छेद से विक को डाला जाता है, जो पौधों को आवश्यकता अनुसार पानी प्रदान करता है। विक केवल उसी मात्रा को खींचता है जो पौधे के लिए आवश्यक होती है, जो कैपिलरी गति के वैज्ञानिक सिद्धांत के तहत होता है।

विक इरीगेशन के लिए आवश्यक सामग्री- 1.ग्रो बैग्स 2.पॉटिंग मिश्रण 3.पीवीसी (पॉली विनाइल क्लोराइड) पाइप 4.विक पाइप में लगी विक के साथ विकसित ग्रो बैग।

कैसे लागू करें?: विक इरीगेशन को लागू करने के लिए निम्नलिखित कदम अनुसरण करें- 1.ग्रो बैग में पौधे के साथ पोटिंग मिश्रण डालें। 2.ग्रो बैग को दो इंच की ऊंचाई पर रखें ताकि पानी का भार पाइप के संरचना पर दबाव न डाले। 3.पीवीसी पाइप में छेद बनाएं, जिसमें विक डालने के लिए स्थान हो। छेदों के बीच की दूरी लगभग 60 सेमी होनी चाहिए। 4.एक समायोजन वाल्व द्वारा पानी की मात्रा को मापें। 5.विक को पाइप के छेद में डालें और उसका एक हिस्सा मिट्टी में और दूसरा हिस्सा पानी भरे हुए पाइप में डालें। 6.इसके बाद, पानी विक के माध्यम से ग्रो बैग में चला जाएगा और पौधे को आवश्यकता अनुसार पानी प्रदान करेगा।

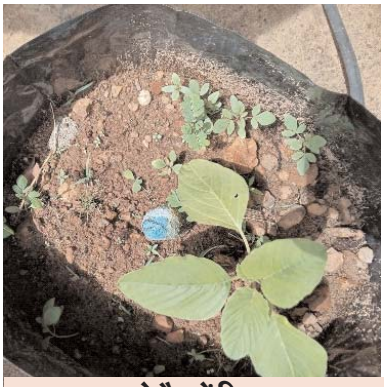

ग्रो बैग में विक

विक इरीगेशन के लाभ

विक इरीगेशन के उपयोग से कई लाभ होते हैं, जो निम्नलिखित हैं- 1.गर्मी के मौसम में भी सब्जियों की खेती करने की सुविधा 2.पानी की व्यर्थि कम होना और उत्पादकता में सुधार 3.सभी पौधों को बराबर मात्रा में पानी प्रदान करके उत्पादकता को बढ़ावा देना 4.कोई विद्युत शक्ति की आवश्यकता नहीं होना 5.जल सोल्यूबल उर्वरक को सिंचाई जल के माध्यम से लगाने की सुविधा 6.कम खर्च वाली प्रणाली होने से गरीब और धनी दोनों किसान इसका उपयोग कर सकते हैं 7.लैंगिक समानता, वित्तीय समानता और सामाजिक समानता को सुनिश्चित कर सकती हैं।

जल बचत के मामूले के रूप में, विक इरीगेशन के उपयोग से पानी की कमी को पूरा करने में सहायता मिलती है और जल संचयन के लिए उत्तेजना प्रदान करती है। इसके परिणामस्वरूप, पानी की बर्बादी कम होती है और जल संसाधन का संयंत्रित रूप से उपयोग किया जा सकता है। विक इरीगेशन से समर्थित कृषि में उत्पादकता में वृद्धि होती है। पानी की सही मात्रा का उपयोग करके पौधों को आवश्यकता अनुसार जल प्रदान करने से, पौधों की विकास दर में सुधार होता है और उत्पादकता में वृद्धि होती है। विक इरीगेशन प्रणाली अपने आप में स्वतंत्रता से काम करती है और उपयुक्त समय पर पौधों को जल प्रदान करती है। इससे किसानों को सिंचाई के लिए अधिक समय नहीं लगता है और उनकी मेहनत कम होती है, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होता है। विक इरीगेशन प्रणाली से, पौधों को न्यूनतम पानी से भी उत्तरदायी जल प्रदान किया जा सकता है। यह इसका मतलब है कि जलवायु के अनुकूल न होने के कारण भी इस प्रणाली का उपयोग किया जा सकता है और पौधों को सुरक्षित रखा जा सकता है।

विक इरीगेशन का उपयोग करने से फसलों के प्रदर्शन में सुधार होता है और पानी की व्यवस्था में संयंत्रित रूप से उपयोग किया जा सकता है। यह एक लागत कम प्रणाली है जो किसानों के लिए सबसे अधिक उपयोगी है और उन्हें ज्यादा उत्पादकता प्रदान करने में मदद करती है। इसके अलावा, यह जल संरक्षण के लिए भी महत्वपूर्ण योजना है जो जल संसाधनों की बचत करने में मदद करती है। इस लेख के माध्यम से हम सभी को विक इरीगेशन के लाभों के बारे में जागरूक करते हैं और सिंचाई के क्षेत्र में इसके उपयोग को बढ़ावा देने की आवश्यकता को उजागर करते हैं।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तराखण्ड

पर्वतीय क्षेत्रों में राई की उन्नत खेती

डॉ. लक्ष्मी रावत एवं अजय ममगाई
पादप रोग विज्ञान अनुभाग, वानिकी महाविद्यालय, रानीचौरी, वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली, उत्तराखण्ड औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, भरसार, पौड़ी गढ़वाल

राई/सरसों (ब्रैसिका जंसिया एल.): हरी सरसों उत्तरी भारत के मैदानी और पहाड़ी इलाकों में उगाई जाने वाली एक लोकप्रिय हरी सब्जी है। यह विटामिन, खनिज और प्रोटीन का एक समृद्ध स्रोत है। राई का रबी तिलहनी फसलों में प्रमुख स्थान है प्रदेश में अनेक प्रयासों के बाद भी राई के क्षेत्रफल में विशेष वृद्धि नही हो पा रही है इसका प्रमुख कारण है कि सिंचित क्षमता में वृद्धि के कारण अन्य महत्वपूर्ण फसलो के क्षेत्रफल का बढ़ना । इसकी खेती सीमित सिंचाई की दशा में अधिक लाभदायक होती है। उन्त विधियॉ अपनाने से उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि होती है। हरे तने और पत्तियाँ मवेशियों हेतु हरे चारे का अच्छा स्रोत हैं। युवा पौधों की पत्तियों का उपयोग किया जाता है हरी सब्जियों के रूप में वे आहार में पर्याप्त सल्फर और खनिज प्रदान करते हैं।

उन्नतिशील प्रजातियां: स्थानीय (हाथिकान) और यूएचएफ वीआर 12-1, आईसीएआर अनुसंधान परिसर ने चार पीली सरसों लाइनें विकसित की हैं। टीआरएस-वाई 01-5-1-1, टीआरएस-वाई-01-2-2-1, एससीआरटी 1-2-1 और एससीआरटी 1-2-3।

क्षारीय लवणीय भूमि हेतु: सिंचित क्षारीय एवं लवणीय क्षेत्रो के लिये- नरेन्द्र राई (एन. डी. आर.8501), सी. एस. 52 एवं सी. एस.-54।

खेती की तैयारी: खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2-3 जुताइयां देशी हल से करें तथा इसके बाद पाटा लगाकर खेत को भुरभुरा बना लेना चाहिए। यदि खेत में नमी कम हो तो पलेवा करके तैयार करना चाहियें। ट्रैक्टर चालित रोटावेटर द्वारा एक ही बार में अच्छी तैयारी हो जाती है।

बीज दर: सिंचित एवं असिंचित क्षेत्रों में 5-6 किग्रा. हे. की दर से प्रयोग करना चाहिये।

बीज शोधन: बीज जनित रोगों से सुरक्षा हेतु 2.5 ग्राम थीरम प्रति किलो की दर से बीज को उपचारित करके बोये मैटालाक्सिल 1.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज शोधन करने से गेरूई एवं तुलासिता रोग की प्रारम्भिक अवस्था में रोकथाम हो जाती है।

बुवाई का समय एवं विधि: राई बोने का उपयुक्त समय सितम्बर के अतिंम सप्ताह से अक्टूबर का द्वितीय पखवारा है। बुवाई देशी हल के पीछे उथले (4-5 सेन्टीमीटर गहरे) कूंड़ो में 45 सेन्टीमीटर की दूरी पर करना चाहिये। बुवाई के बाद बीज ढ़कने हेतु हल्का पाटा लगा देना चाहिए। असिंचित दशा में बुवाई का उपयुक्त समय सितम्बर का द्वितीय पखवारा है। विलम्ब से बुवाई करने पर माहू का प्रकोप एवं अन्य कीटों एवं बीमारियों की सम्भावना अधिक रहती है।

उर्वरक की मात्रा: उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर किया जायें सिचित क्षेत्रों मे नत्रजन 120 किग्रा. फास्फेट 60 किग्रा. एवं पोटाश 60 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने से अच्छी उपज प्राप्त होती है। फास्फोरस का प्रयोग सिंगिल सुपर फास्फेट के रूप में अधिक लाभदायक होता है। क्योकि इससे सल्फर की उपलब्धता भी हो जाती है। यदि सिंगल सुपर फास्फेट का प्रयोग न किया जाए तों गंधक की उपलब्धता की सुनिश्चित करने के लिए 40 कि.ग्रा./हे. की दर से गंधक का प्रयोग करना चाहियें। तथा असिंचित क्षेत्रों में उपयुक्त उर्वरकों की आधी मात्रा बेसल ड्रेसिग के रूप में प्रयोग की जायें। यदि डीएपी का प्रयोग किया जाता है, तो इसके साथ बुवाई के समय 200 किग्रा. जिप्सम प्रति हे. की दर से प्रयोग करना फसल के लिये लाभदायक होता है। तथा अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 60 कुन्तल प्रति हे. की दर से सड़ी हुई गोबर की खाद का प्रयोग करना चाहियें। सिंचित क्षेत्रों में नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फेट एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय कूंड़ो में बीज के 2-3 सेमी0 नीचे नाई या चोगों से दिया जाय। नत्रजन की शेष मात्रा पहली सिंचाई (बुवाई के 25-30 दिन बाद) के बाद टापड्रेसिंग में डाली जाय।

सिंचाई: राई, नमी की कमी के प्रति फूल आने के समय से पहले व दाना भरने की अवस्थाओं में विशेष संवेदनशील होती है। अतः अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु सिचाई करें। यदि उर्वरक का प्रयोग भारी मात्रा में (120 किलोग्राम नत्रजन 60 किलोग्राम फास्फेट तथा 60 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर) किया गया हो तथा मिट्टी हल्की हो तो अधिकतम उपज प्राप्त करने हेतु 2 सिचाई क्रमशः पहली बुवाई के 30-35 दिन बाद तथा दूसरी वर्षा न होने पर 55-65 दिन के बाद करें।

निराई-गुड़ाई एवं विरलीकरण: बुवाई के 15 दिन के अन्दर धने पौधों को निकालकर उनकी आपसी दूरी 15 सेंमी. कर देना परम आवश्यक है। खरपतवार नष्ट करने के लिये एक निराई-गुड़ाई सिंचाई के पहले और दूसरी पहली सिंचाई के बाद करनी चाहिए। रसायन द्वारा खरपतवार नियंत्रण करने पर बुवाई से पूर्व फ्लूक्लोरोलिन 45 ईसी की 2.2 लीटर प्रति 800-900 लीटर पानी में घोलकर प्रति हे. की दर से छिड़क कर भली-भांति हैरो चलाकर मिट्टी में मिला देना चाहिए द्य या पेंडीमेथलिन 30 ईसी 3.3 लीटर प्रति हे. की दर से बुवाई के दो तीन दिन के अन्दर 800-900 लीटर पानी में घोलकर सामान रूप से छिड़काव करों

फसल का संरक्षण: सरसों का सबसे गंभीर कीट एफिड है। जबकि सफेद रतुआ और अल्टरनेरिया ब्लाइट इस क्षेत्र में रेपसीड और सरसों की दो महत्वपूर्ण बीमारियां हैं। कीट प्रबंधन और रोगों के लक्षण और प्रबंधन पद्धतियाँ इस प्रकार हैं।

सरसों एफिड्स (लिपाफिस एरिसिमी)

लक्षण - शिशु और वयस्क दोनों पत्तियों, कलियों और फलियों से रस चूसते हैं। संक्रमित पत्तियों में कर्लिंग हो सकता है और उन्नत अवस्था में पौधे सूखकर मर सकते हैं। पौधे बौने रह जाते हैं और कीड़ों द्वारा उत्सर्जित शहद के ओस पर कालिखयुक्त फफूंद विकसित हो जाती है। संक्रमित दायर दिखने में बीमार और झुलसा हुआ दिखता है।

प्रबंध -

नियंत्रण उपाय - सहनशील किस्मों का उपयोग करें, नुकसान से बचने के लिए जल्दी रोपण करें और पीले चिपचिपे जाल का उपयोग करें।

जैविक-लाभकारी कीड़ों की रिहाई, सुरक्षा और संवर्धन, जैसे कि एडीबर्ड बीटल, जैसे, कोकिनेला सेप्टेमपंकटाटा, मेनोचिलस सेक्समैक्युलाटा, हिप्पोडामिया वेरिएगाटा और चेइलोमोन्स विसिना, सरसों एफिड के सबसे प्रभावी शिकारी हैं। वयस्क भृंग प्रतिदिन औसतन 10 से 15 वयस्कों को भोजन दे सकता है। सिर्फिडध्होवर मक्खी की कई प्रजातियाँ अर्थात, स्पैरोफोरिया प्रजाति, एरिस्टालिस प्रजाति, मेटासिर्फिस प्रजाति, जैंथोग्रामा प्रजाति और सिरफस प्रजाति। ब्रैकोनिड पैरासिटॉइड, डायरेटिएला रैपे। लेसविंग, क्राइसोपर्ला जैस्ट्रोविसिलेमी। जैसे ही एफिड्स दिखाई देने लगें नरम साबुन या कीटनाशक साबुन का 2-3 स्प्रे करें। 2 प्रतिशत नीम का तेल या 5 प्रतिशत एनएसकेई भी एफिड्स प्रबंधन में बहुत प्रभावी है। वर्टिसिलियम लेकानी 5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से पत्तियों पर छिड़काव करें। गंभीर संक्रमण में 5 प्रतिशत नीम तेल और तरल साबुन के साथ लहसुन-मिर्च का अर्क बहुत प्रभावी होता है।

चित्रित बग (बगराडा हिलारिस)

लक्षण - निम्फ और वयस्क दोनों पत्तियों और फलियों से रस चूसते हैं जो समय के साथ मुरझा जाते हैं और मुरझाने के लक्षण दिखाते हैं। वयस्क कीट चिपचिपा पदार्थ स्रावित करते हैं जो फलियों को खराब कर देते हैं।

प्रबंध

नियंत्रण के उपाय - गहरी जुताई। जल्दी बुआई करने से कीट के प्रकोप से बचने में मदद मिलती है। पहले 4 सप्ताह के दौरान सिंचाई करने से भी इसके प्रबंधन में मदद मिलती है। कीड़े आम तौर पर पत्तियों और तने पर जमा होते हैं। पौधों और पत्तियों को झटका देकर कीड़ों को उखाड़ा जा सकता है और नष्ट करने के लिए जमीन से इकट्ठा किया जा सकता है। अगले वर्ष की फसल में उनके प्रसार को रोकने के लिए अंडे और अन्य चरणों को नष्ट करने के लिए संक्रमित खेत के अवशेषों को जला दें। जैविक - अंडा परजीवी ग्रियोन एसपी का संरक्षण और संवर्धन करें। (स्केलियोनिडे) और वयस्क परजीवी अलोफोरा एसपी।

गोमूत्र और लहसुन-लौंग-दालचीनी के अर्क के साथ बीज उपचार प्रारंभिक विकास चरण के दौरान बग के प्रबंधन में मदद करता है। पत्तियों और तने पर भी प्रेशर जेट के माध्यम से कीटनाशक साबुन के साथ नीम्करंज तेल का रोगनिरोधी स्प्रे करें।

सफेद रतुआ

लक्षण: तने, टहनी और पत्ती की सतह पर सफेद, मलाईदार दाने उभर आते हैं। प्रणालीगत संक्रमण में शरीर के सभी हिस्सों पर ऐसी जंग लगी फुसियाँ उभर आती हैं और हाइपरट्रॉफी (कोशिकाओं का असामान्य इजाफा) उत्पन्न करती हैं। द्वितीयक स्थानीय संक्रमण में पत्ती, तने और पुष्पक्रम पर सफेद जंग लगे दाने उभर आते हैं और पाउडर लेपित दिखाई देते हैं।

प्रबंध

नियंत्रण के उपाय - रोग मुक्त, स्वस्थ बीज का उपयोग करें, खरपतवारों को नष्ट करें जो संपार्श्विक मेजबान के रूप में कार्य करते हैं, संक्रमित पौधों के हिस्सों को इकट्ठा करें और नष्ट करें। लगातार समस्या वाले क्षेत्रों में गैर-मेजबान फसलों के साथ 3-4साल का फसल चक्र अपनाएं। ताजा तैयार लहसुन बल्ब अर्क के साथ बीज उपचार। वैकल्पिक रूप से बीजों को लहसुन-लौंग-दालचीनी के अर्क से भी उपचारित किया जा सकता है। बोर्डो मिश्रण (4 प्रतिशत) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) का पर्णीय स्प्रे भी कीट का प्रबंधन कर सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तराखण्ड

बीज संरक्षण के लिए जैविक तरीके

मयंक तिवारी पीएचडी स्कॉलर, आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग गोविन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर (उत्तराखंड)

शुभम कुमार पीएचडी स्कॉलर, आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

रवि दीक्षित (शोध छात्र) बीज विज्ञान एंव प्रौद्योगिकी विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

केशव बाबू (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

बीज कृषि हेतु प्रमुख आदानों में से एक है। गुणवत्तापूर्ण बीजों का प्रयोग अच्छाई सुनिश्चित करता है। अंकुरण मृत्यु दर को कम करके अंकुरण और जोरदार अंकुर विकास उच्च संयंत्र स्टैंड स्थापना सुनिश्चित करना। कटाई करके बीज अंदर रखना अगले सीजन में बुआई हेतु भंडारण किसानों की एक आम और पारंपरिक प्रथा है। सामान्य रूप में, भंडारण के दौरान बीज की गुणवत्ता खराब हो जाती है। बीज संरक्षण तकनीकें विस्तारित अवधि में बीजों की व्यवहार्यता बनाए रखने के लिए उपयोग की जाने वाली विभिन्न विधियों को संदर्भित करती हैं। इन तकनीकों का उद्देश्य आनुवंशिक विविधता के नुकसान और मूल्यवान पौधों की प्रजातियों के विलुप्त होने को रोकना है। खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और जैव विविधता के संरक्षण के लिए बीज संरक्षण तकनीक महत्वपूर्ण हैं। बीज संरक्षण तकनीकें पौधों की प्रजातियों के संरक्षण और कृषि उत्पादकता को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं। बीज भंडारण, बीज संरक्षण का एक महत्वपूर्ण पहलू है जो बीजों को लंबे समय तक व्यवहार्य बनाए रखने में सक्षम बनाता है, जिससे भविष्य में उनके उपयोग की अनुमति मिलती है। बीज भंडारण के दो मुख्य प्रकार हैं- अल्पकालिक भंडारण और दीर्घकालिक भंडारण।

अल्पकालिक भंडारण: अल्पावधि बीज भंडारण से तात्पर्य सीमित अवधि, आमतौर पर कुछ महीनों से एक वर्ष तक के लिए बीजों के संरक्षण से है। यह अधिकांश कृषि सेटिंग्स में उपयोग किया जाने वाला बीज भंडारण का सबसे सामान्य रूप है। किसानों और बागवानों के लिए अल्पकालिक बीज भंडारण आवश्यक है, जिन्हें अगले रोपण सीजन के लिए बीज भंडारण की आवश्यकता होती है।

दीर्घावधि संग्रहण: दीर्घकालिक बीज भंडारण से तात्पर्य लंबे समय तक, अक्सर कई दशकों या सदियों तक, बीजों के संरक्षण से है। यह पौधों की आनुवंशिक विविधता के संरक्षण और दुर्लभ और लुप्तप्राय पौधों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए आवश्यक है। बीज भंडारण को प्रभावित करने वाले कारक तापमान, आर्द्रता, प्रकाश, ऑक्सीजन और बीज की गुणवत्ता सहित बीज भंडारण को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों पर विचार करना महत्वपूर्ण है। बीज भंडारण के दौरान, कई शारीरिक और जैवरासायनिक परिवर्तन होते हैं। कई विशेषज्ञों ने बीजों की गुणवत्ता पर ध्यान दिया है वायु की स्थिति, कीट और बीमारी जैसे पर्यावरणीय कारकों के परिणाम स्वरूप समय के साथ गिरावट आती है हमले, और भंडारण से संबंधित विकिरण। बीज की गुणवत्ता में गिरावट का सीधा असर पड़ता है बीज का अंकुरण और खेत में पौधे का प्रदर्शन।

बीज संरक्षण के जैविक तरीके: बीजों को प्राकृतिक, रसायन-मुक्त वातावरण में रखा जाता है। जैविक पदार्थ बीज संरक्षण के लिए आवश्यक हैं क्योंकि वे बीजों को जीवित, स्वस्थ और रसायन मुक्त रखते हैं जैविक सामग्रियों का उपयोग पर्यावरण की दृष्टि से लाभकारी और टिकाऊ प्रथाओं का समर्थन करता है, जो पर्यावरण और बीजों के स्वास्थ्य के लिए अच्छे हैं।

बीज संरक्षण में कार्बनिक यौगिकों के मुख्य कार्य इस प्रकार हैं-जैविक सामग्री को कृत्रिम रसायनों, कीटनाशकों, शाकनाशी आदि के उपयोग के बिना संरक्षित किया जाता है। जैविक पदार्थों का उपयोग करके प्रदूषक तत्वों को रोका जा सकता है।

प्राकृतिक कीट-विकर्षक विशेषताओं वाले कार्बनिक पदार्थों में नीम की पत्ती शामिल है पाउडर, लहसुन, नींबू के छिलके आदि जो बीज में भंडारण के दौरान बीजों की सुरक्षा करते हैं। जैविक सामग्री से बने बायोडिग्रेडेबल बीज-बचत लिफाफे, गमले या कंटेनर इन्हें बनाया जाता है और सीधे जमीन में गाड़ दिया जाता है, जिससे अपशिष्ट नष्ट हो जाता है और न्यूनतम हो जाता है। बीजों को व्यवहार्य बनाए रखने और दम घुटने से बचाने हेतु उचित हवा की आवश्यकता होती है कपड़े, कागज या पुआल जैसे कार्बनिक पदार्थों से बने बीज भंडारण कंटेनरों के अंदर हवा का संचार हो सकता है।

बीज संरक्षण हेतु सामान्य जैविक कच्ची सामग्री

जैविक सूती कपड़ा या कागज: बीज बैग या लिफाफे बनाने के लिए, जैविक कपासकपड़े या कागज का उपयोग किया जा सकता है। इसमें कोई सिंथेटिक रसायन या कीटनाशक नहीं होना चाहिए जैविक कपास या कागज। जैविक कपड़े से बने बंदना का उपयोग सांस लेने योग्य वस्तु के रूप में किया जा सकता है। बीजों को लपेटने और भंडारित करने के लिए कंटेनर।

कार्बनिक सिलिका जेल: इसका उपयोग नमी को अवशोषित करने और रोकने के लिए एक शुष्कक के रूप में किया जा सकता है जो बीज भण्डारण करते समय फफूंद का बढ़ना रोक्ती है।

जैविक चावल के दाने: जैविक चावल के दानों को अवशोषित करने हेतु प्राकृतिक शुष्कक के रूप में उपयोग किया जा सकता है पारंपरिक सिलिका जेल के स्थान पर बीज भंडारण कंटेनरों में अतिरिक्त नमी को अवशोषित करते हैं।

जैविक मिट्टी: बीज के गोले बनाते समय जैविक मिट्टी या टेराकोटा का उपयोग किया जा सकता है। बीजों को ढकने, सुरक्षा और पोषण देने के लिए मिट्टी, खाद और पानी को मिलाया जाता है उन्हें रोपण तक. जैविक मिट्टी से बने बीज तश्तरियों का उपयोग भंडारण के लिए किया जाता है।

कार्बनिक चारकोल: गंध को खत्म करने और संदूषण से बचाने के लिए सक्रिय बीज भंडारण कंटेनरों में लकड़ी का कोयला लगाया जा सकता है। कई जगहों पर बायोचार तैयार किया गया नियंत्रित पायरोलिसिस का उपयोग बीजों को संरक्षित करने के लिए भी किया जा सकता है।

जैविक रेत: रेत का उपयोग बीज सुखाने और बीजों के भंडारण में सहायता के लिए किया जा सकता है।

जैविक लकड़ी की छीलन: इनका उपयोग बीजों को प्राकृतिक के रूप में भंडारण और पैकेज करने के लिए किया जाता है प्लास्टिक या अन्य सिंथेटिक सामग्री का विकल्प।

पौधे से प्राप्त पाउडर: बीजों को करेले, सहजन के बीज के पाउडर पुदीना, स्वीट फ्लैग रूट पाउडर आदि के साथ संग्रहित किया जा सकता है।

जैविक लौकी के छिलके: ये बीजों को संरक्षित करने के लिए पूर्णतः प्राकृतिक बीज जार के रूप में काम करते हैं।

जैविक नीलगिरी की पत्तियां: सूखी नीलगिरी की पत्तियों में कीटों से बीज की रक्षा करने की क्षमता होती है। जैविक केले के पत्तों का उपयोग बीजों के भंडारण के लिए बीज के गोले और लिफाफे बनाने में किया जाता है।

जैविक टाट की बोरियां: इनका उपयोग बड़ी मात्रा में बीजों को संग्रहित करने के लिए किया जाता है।

जैविक हर्बल पाउच: प्राकृतिक रूप से कीटों को दूर रखने के लिए, सूखी जड़ी-बूटियाँ जैसे लैवेंडर या मेंहदी को बीज भंडारण के पास बिखेरा जा सकता है।

ऑर्गेनिक चिटोस: एक प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला पदार्थ है जो चिटिन से बनता है। रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए बीजों पर लगाया जाता है।

मिट्टी के बर्तन को लीपना: मिट्टी के बर्तन को गाय के गोबर के घोल से लीपना लाभकारी होता है। लंबे समय तक भंडारण के लिए कंटेनर को वायुरोधी बनाएं।

बीज संरक्षण के जैविक तरीकों हेतु पूर्व आवश्यकताएं

- उपयोग की जाने वाली कोई भी सामग्री पर्यावरण-अनुकूल और रसायन-मुक्त होनी चाहिए
- कीटनाशकों, शाकनाशियों और अन्य संभावित रूप से मुक्त सामग्रियों का उपयोग करना आवश्यक है। क्योंकि वे बीजों के स्वास्थ्य और व्यवहार्यता को ख़राब कर सकते हैं
- सामग्री उपयोगकर्ता के अनुकूल और बीजों के अनुकूल होनी चाहिए
- इन सामग्रियों से उपयोगकर्ताओं, बीजों और अन्य को कोई नुकसान नहीं होना चाहिए
- बीजों की अखंडता को बनाए रखना और टिकाऊ बागवानी तकनीकों को बढ़ावा देना जैविक बीज भंडारण की गारंटी होनी चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

टमाटर...जिसके बिना हमारा भोजन अधूरा

■ क्रांति कुमार

तथागत बुद्ध ने कभी टमाटर नहीं खाया, सम्राट अशोक ने कभी टमाटर नहीं खाया, सिकंदर ने टमाटर नही खाया, ईसा मसीह ने टमाटर नही खाया, सम्राट कनिष्क और सम्राट हर्षवर्धन ने भी कभी टमाटर नही खाया.

●●●

मोहम्मद ग़ज़नी, अलाउद्दीन खिलजी, बाबर, अकबर, महाराणा प्रताप, औरंगजेब और छत्रपति शिवाजी महाराज ने भी कभी टमाटर नहीं खाया.
कारण उनके वक़्त टमाटर का उत्पादन पुरानी दुनिया मे नही होता था. टमाटर का उत्पादन केवल नई दुनिया मे होता था और हम 15वीं शताब्दी तक नई दुनिया से अनजान थे.

प्राचीन चिकित्सा पद्धतियों में भी टमाटर और टमाटर के गुणों का कोई उल्लेख नही है. आज कहानी उस लाल टमाटर की, जिसके बिना हमारा भोजन, हमारी सब्ज़ी, हमारा हर भोजन अधूरा है.

आज के मेक्सिको में एक समय एज़्टेक साम्राज्य था, जिनकी अपनी प्राचीन एज़्टेक सभ्यता, संस्कृति, भाषा, खानपान और चिकित्सा पद्धति थी.

आज से 3000 साल पहले एज़्टेकवासियों ने सोलोमन लाइको पोर्सिरकान नाम के जंगली पौधे के बीजों की खेती शुरू की यहीं से आज के टमाटर की उत्पति की बुनियाद पड़ी.

500 BC तक एज़्टेकवासी "टोमातल" को अपने भोजन का हिस्सा बना चुके थे. एज़्टेक अपनी नहुअतल भाषा में टमाटर को टोमातल कहते थे. स्पैनिश साम्राज्यवाद ने एज़्टेक साम्राज्य पर अपना आधिपत्य स्थापित किया.

●●●

पहली बार स्पैनिश लोग टमाटर से रूबरू हुए. स्पैनिश आक्रमण में एज़्टेक लोगों का टोमातल अब स्पैनिश भाषा का टोमोटे बन गया था, जो अटलांटिक महासागर पार कर पूरी दुनिया फैलने के लिए तैयार था.
स्पैनिश साम्राज्यवाद के बड़ी बड़ी जहाजों में टमाटर के बीजों को लादा गया. और 16वीं शताब्दी में पहली बार यूरोप के हर देश में टमाटर की खेती होने की धीमी शुरुआत होने लगी. इंग्लैंड पहुंचते ही इंग्लिश लोगों ने इसे अपने शब्दों में टोमैटो नाम दिया.

सोलोमन लाइको पोर्सिरकान पौधे का बीच टोमातल से टोमोटे, टोमोटे से टोमैटो और टोमैटो से टमाटर बनने के इतिहास पर था. लेकिन भारत में टोमैटो लाने वाले इंग्लिश नही, पोर्तुगाली थे. 16वीं शताब्दी में पोर्तुगालियों ने टोमैटो को भारत पहुंचा दिया.

●●●

भारत की मिट्टी में मिलकर एज़्टेकवासियों का टोमातल यहां टमाटर बन गया. धीरे धीरे टमाटर चीन, थाईलैंड, मलेशिया और पूरे दक्षिण एशिया में फैल गया. मिडिल ईस्ट और अफ्रीका में टमाटर 17वीं शताब्दी में पहुंचा.

भारत में शुरुआती दिनों में टमाटर की खेती केवल ब्रिटिश अपने लिए कराते थे. समय के साथ टमाटर को स्थानीय लोगों ने भी अपनाना शुरू किया. पहले टमाटर मौसमी सब्ज़ी था. साल में एक बार लोग खाते और इस्तेमाल करते.

लेकिन सॉस और केचअप के आगमन के बाद टमाटर हर मौसम हर महीने की फसल बन गया. सब्ज़ी, पुलाव, बिरयानी, सलाद, रायता और हर व्यंजन को बनाने में टमाटर का इस्तेमाल होता है.

●●●

सूचना – टमाटर में विटामिन A C और K भरपूर मात्रा में पाया जाता है. इसके अलावा टमाटर में पोटैशियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, तांबा भी भरपूर मात्रा में होता है. इसी कारण टमाटर गुणकारी है.
लेकिन इसका अर्थ यह नही यह सब केवल टमाटर में ही पाया जाता है. टमाटर के अलावा बहोत से फल सब्ज़ी हैं जिनके भरपूर विटामिन होता है.
महंगाई में महंगे टमाटर से दूरी ही समझदारी है. मैं ऊपर पहले ही बता चुका हूं बुद्ध से लेकर शिवाजी महाराज तक के दौर में किसी ने टमाटर नही खाया. आज से 150 साल पहले भी टमाटर की कोई अहमियत नही थी. फिर भी दुनिया का चक्र चल रहा था, पृथ्वी घूम रही थी और आज बिना टमाटर खाए भी पृथ्वी घूम रही है.

अंतिम पंक्ति : टमाटर जैसे पौष्टिक तत्व के लिए एज़्टेकवासी जो मेक्सिको के मूलनिवासी हैं, उनका बहुत बहुत धन्यबाद और आभार.

POP fusion
#Cornilicious
perfect snack
Classic Salted Butter Caramel Popcorn
Artisan Dark Chocolate Popcorn
Gourmet Makhana
Balances health and taste
Crunchy and munchy
www.popfusion.in

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2022-2024

R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

मध्य भारत कृषक भारती

मार्च-2024

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान संपादक राजू गुर्जर द्वारा सर्वोदय प्रिंटिंग प्रेस, महाडिक की गोठ, जनक हॉस्पिटल के पीछे कम्पू रोड, लश्कर-ग्वालियर से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास दीनदयाल नगर ग्वालियर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: राजू गुर्जर. मोबा. 9425101132, 94245-22090